कविवर श्री सन्तलाल जी विरचित

श्री सिद्धचक्र विधान

प्रकाशक :

श्री राजकृष्ण जैन चेरिटेबल ट्रस्ट

अहिंसा मन्दिर

१, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२

अन्य केन्द्र : (हरिद्वार, कुरुक्षेत्र व पिलानी)

मूल्य : तीस रुपये

प्रकाशक :
श्री राजकृष्ण जैन चेरिटेबल ट्रस्ट
अहिंसा मन्दिर, १ दरियागंज, नई दिल्ली

अन्य केन्द्र :
(हरिद्वार, कुरुक्षेत्र, पिलानी)

मूल्य : तीस रुपये

कार्तिक कृष्णा ४
वीर निर्वाण सं० २५११

मुद्रक :
गीता प्रिंटिंग एजेंसी,
डी-१०५, न्यू सीलमपुर, दिल्ली-५३

हमारे अन्य प्रकाशन

. **भक्ति गुच्छक**—(स्तोत्र, पाठ और पूजा आदि का अपूर्व संग्रह)
६३१ पृष्ठ का गुटका। मूल्य ५ रुपये

२. **अध्यात्म तरंगिणी**—रचयिता, आचार्य सोमदेव, संस्कृत टीकाकार आ० गणधरकीर्ति, हिन्दी टीकाकार—पं० पन्नालाल साहित्याचार्य
मूल्य ५ रुपये

३. **युगवीर भारती**—
पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार की कविताओं का संग्रह — मूल्य ३ रुपये

४. **भगवान महावीर**—(लेखिका रमादेवी जैन) — मूल्य ३ रुपये

५. **हरिवंश कथा**—मूल लेखक : आचार्य जिनसेन, रूपान्तरकार: श्री माई दयाल जैन पृष्ठ संख्या ३४० सजिल्द — मूल्य १५ रुपये

६. **प्रद्युम्न चरित्र**—(बाल संस्करण) श्रीमती पद्मा जैन — ३ रुपये

७. **हरिवंश कथा**— ,, ,, ,, — ३ रुपये

८. **तन से लिपटी बेल** (उपन्यास)—
लेखक—श्री आनन्द प्रकाश जैन (सजिल्द) — मूल्य १० रुपये

९ **पुराने घाट नई सीढ़ियां**—डा० नेमिचन्द जैन, ज्योतिषाचार्य पी-एच० डी०, डी० लिट् — सजिल्द मूल्य १० रुपये

१०. **नित्य नियम पूजन, चतुर्विंशति पाठ, तीर्थक्षेत्र पूजन व स्तोत्र संग्रह**—श्री वृन्दावन जी कृत — ३० रुपये

११. **सिद्ध चक्र विधान**—श्री सन्तलाल जी कृत — ३० रुपये

१२. **समयसार**—आचार्य कुन्दकुन्दाचार्य कृत "श्री राजकृष्णजी जैन" द्वारा गाथाओं के अंग्रेजी रूपान्तर सहित। — (प्रेस में)

१३. **नियमसार**-- आचार्य कुन्दकुन्दाचार्य कृत "श्री राजकृष्णजी जैन" द्वारा गाथाओं के अंग्रेजी रूपान्तर सहित। — (प्रेस में)

SHREE RAJ KRISHEN JAIN MEMORIAL LECTURE SERIES

12. Jain Ethical Traditions and Its Relevance and the Jain Conception of Knowledge and Reality and its Relevance to Scientific Thought by. Dr G. C Pandey. Ex. Vice Chaneellor, Rajasthan University, Jaipur. 25-00

13. Some Thoughts on Science & Religion by Professor Dr. D. S. Kothari, Ex-Chairman University Grants Commission. 25-00

14. Yoga, English Medititition is Mysticism in Jainism by Justice T. K. Tnkol (Retd, Vici-Chancellor, Bangalore Unixersity) 25 00

15. Anekant & Nayavada—By Prof. Dr. T. G. Kalghatgi former Head of the Department of Jainology & Prakrit, Mysore University. 25-00

१६. भारतीय धर्म और अहिंसा—सिद्धांताचार्य पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री वाराणसी २५ रुपये

अहिंसा मन्दिर

फोन : २६७२००

१ दरियागंज, अंसारी रोड, नई दिल्ली-

अन्य केन्द्र : हरिद्वार, कुरुक्षेत्र व पिलानी

(श्री राजकृष्ण जैन चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा संचालित)

समर्पण

अपने धर्म परायण पूज्य पिता श्री राजकृष्ण जी जैन
को उनकी ८६वीं वर्ष गांठ पर

११-१०-१९०० (कार्तिक वदि चौथ) — ४-२-१९७३ (माघ कृष्णा अमावस्या)

माता श्रीमती कृष्णा देवी जैन

१९०३ (भाद्रव शुक्ल पूर्णिमा) — २७-४-१९७९ (वैशाख शुक्ल प्रतिपदा)

व पत्नी श्रीमती पद्मावती जैन

३०-७-१९२४ (श्रावण कृष्णा चतुर्दशी) — २१-९-१९८३ (भाद्रव शुक्ल अनन्त चतुर्दशी)

कार्तिक वदी चौथ
वीर निर्वाण सं० २५११
१-११-१९८५ ई०

विषय-सूची

卐 श्री सिद्ध चक्राधिपतये नमः 卐

प्रकाशकीय

सिद्धपरमेष्ठी आत्मा के शुद्धरूप में विराजमान हैं और उनका पद पंचपरमेष्ठियों में सर्वोच्च है। तीर्थंकर जैसे महान भी उनके नमन पूर्वक दीक्षा ग्रहण करते हैं—"नमः सिद्ध कह सब व्रत लेय।" लोक रीति भी कार्य सिद्ध करने की होने से 'सिद्ध' नाम यथागुण है। यही कारण है कि जैन समाज में सिद्ध समूह के गुणगान को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती रही है। प्रस्तुत 'सिद्धचक्र विधान' सिद्ध परमेष्ठी की पूजा का विधान है और अष्टाह्निका पर्व में इस पाठ के करने की परिपाटी प्रचलित है। सिद्ध-यंत्र की मान्यता, आराधना व पूजा श्वेताम्बर जैन समाज में भी प्रचलित है। इसकी आराधना से अणिमा आदि अनेक महान सिद्धियाँ प्राप्त होती है ऐसी मान्यता है।

अब तक इस पाठ के विभिन्न-संस्करण, विभिन्न स्थानों से प्रकाशित हुए हैं। उन्हीं की शृंखला मे प्रस्तुत संस्ककरण प्रकाशित करने के हमारे भाव चिरकाल से थे। हम चाहते रहे कि एक ऐसा संस्करण प्रकाशित हो, जिसमें आद्यन्त शुद्धता और सर्वाङ्गीणता हो। इसी उद्देश्य को लेकर हमने अनेकों संस्करण एकत्रित कर, अनेकों विद्वानों के परामर्श से उक्त पाठ प्रकाशित कराया है। इसमें प्रारम्भ से हवन-शान्ति-विसर्जन पर्यन्त सभी विधियों का क्रमपूर्वक समावेश किया गया है। हमें आशा है पाठ-वाचक पूजक और श्रोताओं को इससे लाभ होगा। सिद्धों की आराधना का सच्चा फल तो वीतराग भाव की वृद्धि होना है, क्योंकि वे स्वयं वीतराग हैं। सिद्धों का सच्चा भक्त उनसे लौकिक लाभ की चाह नहीं रखता, फिर भी पुण्य बंध होने से उसे लौकिक अनुकूलता सहज ही प्राप्त होती है। सिद्धों का स्वरूप जानकर उन जैसी अपनी आत्मा को पहचान कर, उसमें ही लीन

हो जाने पर मोह-राग-द्वेष और जन्म-मरण जैसे महान रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

हमारे पिता जी को इस पाठ पर बहुत श्रद्धा थी, उन्होंने जीवन में अनेकों बार इस पाठ किया। प्रस्तुत पाठ को कविवर सन्तलाल जी नुकड़ (सहारनपुर) द्वारा रचा गया है। इसके माध्यम से कवि महहोदय ने सिद्ध भगवन्तों के गुणानुवाद के साथ-साथ उनका स्वरूप एवम् सिद्धपद प्राप्ति की प्रक्रिया का भी वर्णन किया है। जो कवि के गहन अध्ययन एवं आध्यात्मिक रुचि का परिचायक है। इस विधान की एक शुद्ध की हुई प्रति नुकड निवासी श्री प्रेमचन्द जी जैन ठेकेदार ज्वालापुर ने मुझे हरिद्वार मन्दिर निर्माण के समय दी थी। उनसे भी बहुत सहायता मिली। वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

ट्रस्ट का प्रमुख उद्देश्य धर्म संरक्षण एवं संवर्धन की दिशा में रहा है। दुर्लभ ग्रन्थों के उद्धार, साहित्य प्रकाशन के कार्य, जिन मन्दिरों के निर्माण और धर्म प्रचार की दिशा में ट्रस्ट से जो कुछ बन पा रहा है; कर रहा है। हमारी भावना है कि—प्रस्तुत-विधान जन-जन में धर्म-भावना का संचार करे और भव्य-जीव सिद्ध-पद—मुक्ति के द्वार तक पहुंचें। पाठ संशोधन प्रकाशन में विशेषकर वीर सेवा मन्दिर के विद्वानों ने दिशा-बोध दिया है और भी जिन विद्वानों से हमें सहयोग मिला है—ट्रस्ट उन सभी का अत्यन्त आभारी हैं। शुभमस्तु :

कार्तिक कृष्ण ४
वी० नि० सं० २५११

—प्रेम चन्द्र जैन

आद्यमिताक्षर

दिगम्बर जैन आगम परम्परा में पूजा विधि विधान को श्रावक का प्रमुख आचार धर्म बताया गया है। श्रावक के नित्य षट् कर्मों में सबसे पहले देव पूजा का ही उल्लेख है जैसा निम्न लिखित श्लोक से स्पष्ट है:—

देवपूजा गुरूपास्ति स्वाध्यायः संयमस्तपः।
दान चेतिगृहस्थानां षट् कर्माणि दिने दिने ॥

अर्थात् भगवान की पूजा, गुरुचरणों की उपासना, स्वाध्याय, संयम-पालन, शक्त्यनुसार तप, पात्रदान, इन षट् कर्मों में देव पूजा ही प्रमुख है। देवपूजा से अभिप्राय वीतराग सर्वज्ञ अरहंत, अष्टकर्म निर्मुक्त सिद्ध भगवान एवं आचार्य, उपाध्याय साधु इन पांच परमेष्ठियों की पूजा इनके साथ ही जिनवाणी (शास्त्र) पूजा भी सम्मिलित हो जाती है। यह देव पूजा ही हमारी परम्परा की प्रतीक है। और इस परम्परा को ही सम्यग्दर्शन कहा गया है। अतः कहना होगा कि देवशास्त्रगुरू की परम भक्ति ही सम्यक दर्शन है। जो इस परमभक्ति से वंचित है वह सम्यग्दृष्टि नहीं होता। इस सम्बन्ध में पूजा शास्त्रों में ही लिखा है।

जिनेभक्तिर्जिनेभक्तिर्जिने भक्तिः सदास्तु मे।
सम्यक्त्वमेव संसार वारणं मोक्षकारणम् ॥

अर्थ—भगवान जिनेन्द्र में मेरी सदा भक्ति हो, सदा भक्ति हो सदा भक्ति हो, क्योंकि यह सम्यक्त्व (भक्ति) ही संसार का निवारण करने वाला मोक्षका कारण है। आचार्य समन्तभद्र के अनुसार भी सच्चे देवशास्त्र गुरू के श्रद्धान को ही सम्यग्दर्शन कहा गया है और श्रद्धा भक्ति का ही पर्यायवाची शब्द है।

इसी तरह एकीभाव स्तोत्र में भी वादिराज आचार्य ने लिखा है :—

शुद्धेर्ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा,
भक्तिर्नो चेन्निरवधि सुखा वंचिका कुञ्चिकेयं
शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्तिकामस्य पुंसः ॥
मुक्तिद्वारं परिवृढ़ महामोहमुद्रा कपाटम्

अर्थ—शुद्धज्ञान शुद्ध चारित्र होने पर भी हे प्रभो ! यदि अनन्त सुखप्रदाता उत्कृष्ट भक्ति रूपी ताली मुमुक्षु के पास नहीं है तो मोक्ष का दरवाजा जिस पर मिथ्यात्व रूपी ताला लगा हुआ है कैसे खुलेगा।

इस श्लोक से स्पष्ट है कि यह उत्कृष्ट भक्ति रूप ताला सम्यग्दर्शन ही है क्योंकि शुद्ध ज्ञान और शुद्ध चारित्र का सम्बन्ध सम्यग्दर्शन से ही है, उस शुद्ध सम्यग्दर्शन को ही स्तुतिकार ने यहां अनीचा (उत्कृष्ट) भक्ति नाम से लिखा है। इस तरह हम देखते हैं कि यह पूजा विधि विधान सम्यग्दर्शन के ही रूपान्तर हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि देव पूजा नामक नित्यकर्म है और विधि विधान उसके नैमित्तिक कर्म हैं नित्य पूजा में विधि विधान का उपयोग नहीं किया जाता जितना उपयोग नैमित्तिक पूजा में होता है। यह सिद्धचक्रपूजा नैमित्तिक पूजा है। इस विधान का उपयोग प्रायः आषाढ़, कार्तिक एव फाल्गुन मास की शुक्ल पक्ष की अष्टमी से लेकर पूर्णमासी तक आठ दिन में सम्पूर्ण होता है। पहले दिन सिद्ध भगवान के आठगुणों को लेकर आठ अर्घ चढ़ाए जाते हैं। इसके बाद प्रत्येक दिन दूने दूने अर्घ चढ़ाकर अन्त में १०२४ अर्घ चढ़ाए जाते हैं। इन अर्घों के अतिरिक्त नित्य पूजा के क्रम भी प्रत्येक दिन रहता है। विधान के अन्त में चतुर्विंशति तीर्थंकर पूजा, जिनवाणी पूजा एवं गुरूपूजा भी की जाती है। उसके बाद में हवन प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। विधि विधानों में यह प्रक्रिया भी अत्यन्त आवश्यक होती है। इसके बिना कोई भी यज्ञ आदि कर्म अधूरा है। आदि पुराण में जिन १६ संस्कारों का उल्लेख है उन सब संस्कारों में पूजा के साथ हवन विधि का भी उल्लेख है और यदि हवन नहीं किया जाता है तो वह संस्कार वस्तुतः पूरा संस्कार नहीं कहा जा

सकता। और उसके फल की प्राप्ति में बाधा भी आ सकती है। इस हवन प्रक्रिया में मन्त्र पूर्वक आहुतियां दी जाती हैं। ये मन्त्र भी पीठिका मन्त्र, जातिमन्त्र, निस्तारक मन्त्र आदि अनेक प्रकार के होते हैं। इन अनेक मन्त्रों में प्रत्येक के अन्त में तीन काम्य मन्त्र बोलकर भी आहुति दी जाती है। काम्य मन्त्र का अभिप्राय है कामनाएं करना। ये कामनाएं सांसारिक सुखों की इच्छाओं को लेकर नहीं होतीं प्रत्युत उनका सम्बन्ध आत्मकल्याण से ही है। ये मन्त्र निम्न प्रकार है:—

१—सेवा फलं षट् परमस्थानं भवतु।

२—अपमृत्यु विनाशनं भवतु।

३—समाधि मरणं भवतु।

इनमें पहले मन्त्र का अर्थ इस प्रकार हैं

भगवन्! आपकी पूजा करने से मुझे ६ उत्कृष्ट स्थानों की प्राप्ति हो। इन स्थानों का ब्यौरा शास्त्र में इस प्रकार लिखा है:—सज्जाति २—सद्गृहस्थता ३—पारिव्राज्य ४—सुरेन्द्रता ५—चक्रवर्तित्व ६—आर्हन्त्य ७—निर्माण—ये सात परम स्थान हैं। इन सात परम स्थानों में सज्जातित्व नामका पहिला परम स्थान तो प्राप्त ही है क्योंकि जो सज्जातित्व को प्राप्त नहीं है उसको १६ संस्कारों में से किसी भी संस्कार के करने का अधिकार नहीं है। क्योंकि ये १६ संस्कार त्रिवर्णों के ही होते हैं। अतः त्रिवर्ण ही उक्त ६ परमस्थानों की कामना करता है।

दूसरे मन्त्र का अर्थ है:—मेरी बुरी मौत न हो। अर्थात् अपमृत्यु (बुरी मौत) होने से इस जीव को दुर्गति मिलनी है, दुर्गति मिलने से आत्मा का अहित होता है।

तीसरे मन्त्र का अर्थ है मेरा समाधि मरण हो, क्योंकि यह जीव अनन्तों बार मरा है लेकिन समाधिमरण इस जीवको आज तक नहीं मिला। शास्त्रों में लिखा है कि उत्तम समाधिमरण होने पर इस जीव को उसी भव से मोक्ष मिल जाता है, जघन्य भी समाधि हो जाय तब भी चौथे भव में मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

जीवों के अनादिकाल से आधि, व्याधि, उपाधि लगी हुई है। आधि का अर्थ है मानसिक पीडा, व्याधि का अर्थ है शारीरिक पीडा, उपाधि का अर्थ है पीडा का निमित्त पर पदार्थ, जहां यह तीनों प्रकार की पीडायें सम-अर्थात् शांत हो जाती हैं उसे समाधि कहते हैं। यह समाधि हो जाय अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति हो जाय यह समाधि मरण है। इसलिए "समाधि मरणं भवतु" यह अन्तिम काम्य मन्त्र है। इन कामनाओं के साथ यह हवन प्रक्रिया समाप्त होती है।

सिद्ध चक्र विधान की तरह शास्त्रो में त्रैलोक्य माडल विधान, इन्द्र-ध्वज विधान आदि अनेक विधानो की चर्चा है, पर सिद्धचक्र विधान अपने रूप में बहुत कुछ प्रचलित है। तथा वर्ष में तीन बार इस विधान का उप-क्रम किया जाता है जिन्हें अष्टान्हिक कहते हैं, लेकिन अन्य विधानों का प्राय: ऐसा कोई समय निश्चित नहीं है। यही कारण है कि धार्मिक जगत् में जैनों के द्वारा सिद्धचक्र विधान ही अधिक किया जाता है। दूसरा कारण यह भी है कि इस विधान के द्वारा मैना सुन्दरी ने अपने पति कोटिभट्ट राजा श्रीपाल का कुष्ठ रोग दूर किया था। और यह कथा पुरुष, महिला, बच्चों आदि सभी क हृदयगत है। स्व० पं० मक्खनलाल जी प्रचारक दिल्ली के शब्दों में इस कथा को यों भो गाया जाता है :—"सिद्धचक्र का पाठ करो दिन आठ ठाठ से प्राणी, फल पायो मैना रानी"।

प्रस्तुत पुस्तक "श्री सिद्धचक्र विधान" कविवर पं० सन्तलाल जी कवि कृत है। जो हिन्दी भाषा रचित होने से सर्व साधारण जनता के लिए उपयुक्त है। इस विधान में जिन गुणों को लेकर अर्घ चढ़ाए गए हैं वे भी बड़े सुन्दर और पठनीय हैं, चतुर्थ पूजा में जहाँ ६४ अर्घ चढ़ाए गए हैं वे ६४ ऋद्धियां हैं जो सर्व साधारण के लिए पठनीय एव ज्ञातव्य है। नित्य-पूजाओ में आम जनता जिस "स्वस्ति क्रियासु:" पर "स्वस्ति पाठको पढ़ती है वह संस्कृत के पढ़े-लिखे लोगों के अतिरिक्त अन्य किसी की समझ में नहीं आती जबकि इस सिद्ध चक्र पूजा विधान में अर्घ चढ़ाते समय उनका बड़ी सरल भाषा में उल्लेख किया गया है जिसे पढ़कर तपः साधना के प्रति विशेष उत्सुकता होती है।

पुस्तक के अन्त में हवन की विधि का भी उल्लेख है उसमें हवन कुंडों के नाम उनकी लम्बाई-चौड़ाई गहराई के माप दण्ड का भी उल्लेख किया गया है। कुंडों की कटनियों पर खूंटी कलावा आदि लपेटने का विधि विधान भी दिया गया है, सभी प्रकार की आहुतियों को लेकर हवन-सामग्री बनाने का सुन्दर उल्लेख किया गया है, एवं अग्नि प्रज्वलता को उचित लकड़ियों का भी उल्लेख किया गया है।

इस प्रकार पुस्तक द्वारा विधान कर्ताओं के लिए विधान की प्रक्रिया को बहुत कुछ सरल बना दिया गया है। पुस्तक का प्रकाशन श्री राजकृष्ण जैन चैरिटैबिल ट्रस्ट अहिंसा मन्दिर १ दरियागंज, नई दिल्ली के अन्तर्गत लाला राजकृष्ण के सुपुत्र श्री प्रेमचन्द्रजी द्वारा हुआ है। श्री प्रेमचंद्रजी अपने आप में बड़े कर्मशील, निष्ठावान, सेवापरायण एवं परिश्रमशील व्यक्ति हैं, आपने अब तक अनेक धार्मिक पुस्तकों जैसे समयसार, युग वीर-भारती, पुरानेघाट नई सीढ़ियां, भगवान महावीर, अध्यात्म तरंगणी, भक्ति गुच्छक, तन से लिपटी वेल, चतुर्विंशति तीर्थंकर व निर्वाण क्षेत्र पूजन आदि का प्रकाशन किया है। दिल्ली विश्वविद्यालय में श्री राजकृष्ण जैन स्मृति व्याख्यान माला की स्थापना कर ख्याति प्राप्त विद्वानों के हर वर्ष प्रेरक व्याख्यान कराते हैं। अब तक जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के कुलाधिपति डा० दौलत सिंहजी, कोठारी राजस्थान विश्वविद्यालय के कुल-पति प्रो० जी० सी० पाण्डे बंगलौर विश्वविद्यालय के कुलपति न्यायमूर्ति श्री टी० के० तुकोल, मायसौर विश्वविद्यालय में जैन दर्शन व प्राकृतिक विभाग के प्रो० डाक्टर टी० जी० कलघटगी, स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणसी के प्रसिद्धविद्वान् सिद्धांताचार्य पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रो० डा० बाबूराम जी सक्सेना, जैन विश्व भारती लाडनूं के डा० नथमल टांटिया, सागर विश्वविद्यालय के डा० कृष्णदत्त वाजपेयी आदि के व्याख्यान हो चुके हैं, और उनका सुन्दर प्रकाशन किया गया है।

स्वर्गीय लाला राजकृष्ण जी ने श्री राजकृष्ण जैन चेरिटेबल ट्रस्ट

की स्थापना कर दिल्ली दरियागंज में अहिंसा मन्दिर का निर्माण कराया जिसमें श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, धर्मशाला, वाचनालय, औषधालय व नर्सिंग होम आदि चल रहे हैं। उन्होंने १९५४ में मूडविद्री से धवलादि ग्रन्थों को दिल्ली लाकर जीर्णोद्धार कराया। १९५९ में मध्य प्रदेश में जो मूर्ति ध्वंस करवाई हुई उसमें से ८० मूर्तियों के सर दिल्ली स्थित मोहनजोदारो फर्म के मालिक श्री वत्ता के यहां से पकड़वा कर आतताइयों को सजा दिलाई व अनेकों कार्य किये। उनके पुत्र श्री प्रेमचन्द्रजी ने अनेकों जगह शीतल जल प्याउओं का निर्माण कराया। हरिद्वार, पिलानी, कुरुक्षेत्र आदि व दिल्ली के आसपास जहां जैन मन्दिर नहीं थे वहां अनेक जैन मन्दिरों का निर्माण कराया है। जम्बूद्वीप हस्तिनापुर में सुमेरु में एक चैत्यालय का निर्माण कराया आदि।

मूडविद्रीके सिद्धांत बस्ती (मन्दिर) में श्रीमती कृष्णादेवी—राजकृष्ण जैन धवलोद्धार कक्ष का निर्माण कराया, श्रवणवेल में श्रीमती पद्मावतीप्रेम चन्द्र जैन सार्वजनिक पुस्तकालय का निर्माण, मायसौर विश्व विद्यालय में जैन दर्शन व प्राकृत पढ़ने वाले छात्रों के लिए श्री राजकृष्ण जैन शिष्य वृत्ति कोषकी स्थापना की। भारतीय व विदेशी विश्व विद्यालयों में व जेलों में जैन साहित्य भेंट किया। बाहर से आने वाले प्रायः सभी सामाजिक कार्यकर्ताओं को अपने यहां ठहराते हैं और उनके विश्राम की सभी प्रकार की व्यवस्था करते हैं। सच्चाई तो यह है कि श्री प्रेमचन्द्र जी अपने आप में एक चलती-फिरती संस्था है। अन्य संस्थाएं जो काम नहीं कर पातीं वे आप स्वयं करते हैं। धर्म प्रचार की आपको अच्छी लगन है। इस पुस्तक का प्रकाशन कर आपने साहित्यिक क्षेत्र में एक कमी को पूरा किया है। इस उपलक्ष में हम उनका साधुवाद करते हैं।

(पं०) लाल बहादुर शास्त्री
अध्यक्ष, भा० दि० जैन शास्त्री परिषद
गांधी नगर, देहली

(श्री) पद्मचन्द्र शास्त्री
वीर सेवा मन्दिर,
२१, दरियागंज, दिल्ली

ज्ञानयोगी पण्डिताचार्य भट्टारक
चारुकीर्ति स्वामी
श्री दि० जैन मठ, मूडविद्री
(द० कन्नड़)

श्रीमती कृष्णा देवी जैन, श्रीमती पद्मावती जैन व
श्री प्रेमचन्द्र जैन पूजन करते हुए ।

श्री राजकृष्ण जी जैन सिद्धचक्र विधान में
ग्रहस्थाचार्य की भूमिका में ।

मंगलाष्टकम्

श्रीमन्नम्रसुरा—सुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योतरत्न-प्रभा—
भास्वतपादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधोन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः।
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥
नाभेयादिजिनाः प्रशस्तवदनाः, ख्याताश्चतुर्विंशतिः।
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश ॥
ये विष्णुप्रतिविष्णु-लाङ्गलधराः सप्तोत्तरा विंशति।
त्रैलोक्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥२॥
ये पञ्चौषधिऋद्धयः श्रुततपो-वृद्धिगताः पञ्च ये।
ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ विधाश्चारिणः ॥
पञ्चज्ञानधराश्त्रयोपि बलिनो, ये बुद्धि-ऋद्धीश्वराः।
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥३॥
ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामर-गृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः।
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा, वक्षार—रूप्याद्रिषु ॥
इक्ष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे।
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥४॥
कैलाशे वृषभस्य निर्वृत्ति-मही, वीरस्य पावापुरे।
चम्पायां वासुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम् ॥
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतः।
निर्वाण-वनयः प्रसिद्धविभवाः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥५॥
सर्पो हारलता भवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते।
सम्पद्येत रसायनं विषमपि, प्रीतिं विधत्ते रिपुः ॥

देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः, किंवा बहु ब्रूमहे ।
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति तरां, कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥६॥
यो गर्भावतरोत्सवे भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवे ।
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक् ॥
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा, सम्पादितः स्वर्गिभिः ।
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥७॥
आकाशं मूर्त्यभावा-दघकुलदहना-दग्निरुर्वी क्षमाप्त्या ।
नैःसंगाद्वायुरापः-प्रगुणशमतया, स्वात्मनिष्ठैः सुयज्वा ॥
सोमः सौम्यत्वयोगा-द्रविरति च विदु-स्तेजसः सन्निधानाद् ।
विश्वात्मा विश्वचक्षुर्वितरतु भवतो, मंगलं श्रीजिनेशः ॥८॥
इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं, सौभाग्य-सम्पत्करं ।
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणां मुखाः ॥
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैः धर्मार्थकामान्विताः ।
लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता, निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥९॥

॥ इति मंगलाष्टकम् ॥

अभिषेक पाठ

दोहा—जय जय भगवन्ते सदा, मंगल मूल महान ।
वीतराग सर्वज्ञप्रभु, नमो जोरि जुगपान ॥

(छन्द आडिल्ल और गीत)

श्री जिन जग में ऐसो, को बुधवन्त जू,
जो तुम गुण वरननि करि पावै अन्त जू ।
इन्द्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी,
कहि न सकै तुम गुणगण हे त्रिभुवनधनी ॥
अनुपम अमित तुम गुणनि वारिधि, ज्यों अलोकाकाश है ।
किमि धरै हम उर कोष में सो अथक गुणमणिराश है ॥

पै जिन प्रयोजन सिद्धि की तुम नाम में ही शक्ति है।
यह चित्त में सरधान याते नाम ही में भक्ति है॥

ज्ञानवरणी दर्शन आवरणी भने।
कर्म मोहिनी अन्तराय चारों भने॥
लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान में।
इन्द्रादिक के मुकुट नये सुरथान में॥

तब इन्द्र जान्यो अवधितें उठि सुरन युत वंदत भयो।
तुम पुन्य को प्रेर्यो हरो ह्वै मुदित धनपति सौं कह्यौ॥
अब बेगि जाय रचो समवसृति सफल सुरपद को करो।
साक्षात श्री अरहंत के दर्शन करौ कलमष हरौ॥२॥

ऐसे वचन सुने सुरपति के धनपत्ती।
चल आयो ततकाल मोद धारै अती॥
वीतराग छवि देखि शब्द जय जय कह्यौ।
दै प्रदच्छिना बार-बार वंदत भयौ॥

अति भक्ति भीनो नम्र चित्त ह्वै समवरण रच्यौ सही
ताकी अनूपम शुभगती को कहन समरथ कोऊ नहीं॥
प्राकार तौरण सभा मण्डप कनकमणिमय छाजही।
नगजड़ित गंध कुटी मनोहर मध्य भाग विराजही॥३॥

सिंहासन तामध्य बन्यौ अद्भुत दिपै।
तापर बारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै॥
तीनछत्र सिर शोभित चौंसठ चमर जी।
महाभक्ति युत ढोरत हैं तहाँ अमर जी।

प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अंतरीक्ष विराजिया।
यह वीतराग दशा प्रत्यक्ष विलोकि भविजन सुख लिया॥

मुनि आदि द्वादश सभा के भवि जीव मस्तक नायकें ।
बहुभांति बारंबार पूजें, नमैं गुणगण गायकें ॥४॥

परमौदारिक दिव्य देह पावन सही ।
क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं ॥
जन्म जरा मृति अरति शोक विस्मय नसे ।
राग द्वेष निद्रा मद मोह सबै खसे ॥

श्रमबिना श्रमजल रहित पावन अमल ज्योतिस्वरूपजी ।
शरणागतनि को अशुचिता हरि करत विमल अनूपजी ॥
ऐसे प्रभु की शांति मुद्रा को न्हवन जलतैं करें ।
'जस' भक्तिवश मन उक्तितैं हम भानु ढिग दीपक धरें ॥५॥

तुमतौं सहज पवित्र यही निश्चय भयो ।
तुम पवित्रताहेत नहीं मज्जन ठयो ॥
मैं मलीन रागादिक मलतैं ह्वै रह्यो ।
महामलिन तनमें वसुविधिवश दुख सह्यो ॥

बीत्यो अनन्तो काल यह मेरी अशुचिता ना गई ।
तिस अशुचिताहर एक तुमही हरहु वांछा चित ठई ॥
अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोषरोगादिक हरो ।
तनरूप कारागेहसें उद्धार शिववासो करो ॥६॥

मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये ।
आवागमन विमुक्त रागवर्जित भये ॥
पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत नही ।
नय प्रमानतैं जानि महा साता लही ॥

पापाचरण तजि न्हवन करता चित्त में ऐसे धरूं ।
साक्षात श्री अरहंत का मानो न्हवन परसन करूं ॥

(यहां पर जलाभिषेक करें)

ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभ बंध तैं।
विधि अशुभ नसि शुभबंधतैं ह्वै शर्म सब विधि तासतैं ॥७॥

पावन मेरे नयन भये तुम दरसतैं।
पावन पानि भये तुम चरनन परसतैं॥
पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यान तैं।
पावन रसना मानी, तुम गुण गानतैं॥

पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरणधनी।
मैं शक्ति पूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहीं बनी॥
धन्य ते बड़भागि भवि तिन नीव शिवघर की धरी।
वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुंभ भरि भक्ति करी ॥८॥

विघनसघनवनदाहन-दहन प्रचण्ड हो।
मोह महातमदलन, प्रबल मारतण्ड हो॥
ब्रह्मा विष्णु महेश आदि संज्ञा धरो।
जगविजयी जमराज नाश ताको करो॥

आनन्दकारण दुखनिवारण, परम मंगलमय सही।
मो सों पतित नहिं और तुमसो, पतिततार सुन्यो नहीं॥
चिंतामणी पारस कलपतरु, एकभाव सुखकार हो।
तुम भक्तिनौका जे चढ़े ते, भये भवदधि पार ही ॥९॥

दोहा—तुम भवदधितैं तरि गये, भये निकल अविकार।
तारतम्य इस भक्ति को, हमें उतारो पार॥

बृहत् शान्तिधारा पाठ

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते। ॐ ह्रीं क्रों मम पापं खण्डय खण्डय जहि-जहि दह-दह पच-पच

पाचय २ ॐ नमो अर्हन् क्षं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सं क्षं वं ह्वः पः हः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः अस्माकं श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शान्तिरस्तु कान्तिरस्तु कल्याणमस्तु स्वाहा। एवं अस्माकं कार्य-सिद्धयर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद्भगवदर्हत्सर्वज्ञपरमेष्ठिपरमपवित्राय नमोनमः। अस्माकं श्रीशान्तिभट्टारकपादपद्मप्रसादात् सद्धर्म श्रीबलायुरा-रोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु सद्धर्मस्वशिष्यपरशिष्यवर्गः प्रसीदन्तु नः।

ॐ वृषभादयः श्रीवर्द्धमान्पर्यन्ताश्चतुर्विंशत्यर्हन्तो भगवन्तः सर्वज्ञाः परममंगलनामधेयाः अस्माकं इहामुत्र च सिद्धिं तन्वन्तु कार्येषु चेहामुत्र च सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थंकराय श्रीमद्रत्नत्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगणसहिताय अनन्तचतुष्टयय-सहिताय समवशरणकेवलज्ञानलक्ष्मीशोभिताय अष्टादशदोषरहिताय षट्-चत्वारिंशद्गुणसंयुक्ताय परमेष्ठिपवित्राय सम्यग्ज्ञानाय स्वयंभुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय, अनंतसंसार—चक्रमर्दनाय अनन्तज्ञानदर्शनवीर्यसुखास्पदाय त्रैलोक्तवशङ्कराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे, उपसर्गविनाशनायघातिकर्मक्षयंकराय, अजराय, अभवाय, अस्माकं—(अमुक राशिनामधेयानां) व्याधिं घ्नन्तु। श्रीजिनाभिषेकपूजनप्रसादात् अस्माकं सेवकानां सर्वदोषरोगशोक भयपीड़ाविनाशनं भवतु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये श्री-शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वारिष्टशान्ति-कराय। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उसा नमः मम सर्वविघ्नशान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा। मम कामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। रतिकामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। बलिकामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। क्रोधं पापं बैरं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। अग्निवायुभयं छिन्धि २ भिन्धि। सर्वशत्रुविघ्नं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वोपसर्गं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्व-विघ्नं छिन्धि २ भिन्धि। सर्वराज्यभयं छिन्धि २ भिन्धि। सर्वचौरदुष्टभयं छिन्धि २ भिन्धि। सर्वसर्पवृश्चिकसिंहादिभयं छिन्धि २ भिन्धि। सर्वग्रहभयं

छिन्धि २ भिन्दि २ । सर्वदोषं व्याधिं डामरं च छिन्धि २ भिन्धि । सर्वपर-मंत्रं छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वात्मघातंपरघातं च छिन्धि २ भिन्दि २ । सर्वसूलरोगं कुक्षिरोगं अक्षिरोगं शिरोरोगं ज्वररोगं च छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वनरमारिं छिन्धि २ भिन्दि । सर्वगजाश्वगोमहिष अजमारिं छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वसस्यधान्य वृक्षलतागुल्मपत्रपुष्पफलमारिं छिन्धि २ भिन्धि । सर्वराष्ट्रमारिं छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वक्रूरवेतालशाकिनी डाकिनी भयानि छिन्धि २ भिन्धि । सर्ववेदनीयं छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वमोहनीयं छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वापस्मारिं छिन्धि २ भिन्धि २ । अस्माकं अशुभकर्मजनित-दुःखानि छिन्धि २ भिन्धि २ । दुष्टजनकृतान् मंत्रतंत्रदृष्टिमुष्टिछलछिद्र-दोषान् छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वदुष्टदेवदानववीरनर नाहर्रसिंहयोगनी-कृतदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वअष्टकुलीनागजनितविषभयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि २ । सर्वस्थावरजंगमवृश्चिकसर्पादिकृतदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २ । सर्वसिंहाष्टापदादिकृतदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २ । परशत्रुकृत-मारणोच्चाटन विद्वेषणमोहनवशीकरणादिदोषान् छिन्धि २ भिन्धि । ॐ ह्रौं अस्मभ्यं चक्रविक्रम सत्वतेजोबलशौर्यशान्तोः पूरय पूरय । सर्वजीवा-नन्दनं जनानन्दनं भव्यानंदनं गोकुलानंदनं च कुरु कुरु । सर्वराजानंदनं कुरु कुरु । सर्वग्रामनगर खेडाकर्वडमंडवद्रोणमुखसंवाहनानंदनं कुरु कुरु । सर्वा-नंदनं कुरु कुरु स्वाहा ।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु व्याधिव्यसनवर्जितं । अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्ति-रस्तु विधीयते ।। श्रीशान्तिरस्तु । शिवमस्तु । जयोस्तु नित्यमारोग्यमस्तु । अस्माकं पुष्टिरस्तु । समृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । सुखमस्तु । अभिवृद्धिरस्तु । दीर्घायुरस्तु । कुलगोत्रधनानि सदा सन्तु । सद्धर्म—श्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभि-वृद्धिरस्तु ।

ॐ ह्रौं श्रीं क्लीं अर्हं असि आ उसा अनाहतविद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

आयुर्वल्ली विलासं सकलसुखफलैर्द्राघयित्वा श्वनल्पं
धीरं वीरं शरीरं निरुपमुपनयत्वातनोत्वच्छकीर्ति ।।

सिद्धि वृद्धि समृद्धि प्रथयतु तरणिः स्फूर्यदुच्चैः प्रतापं ।
कान्ति शान्ति समाधि वितरतु भवतामुत्तमा शान्तिधारा ।।

।। इति बृहत् शान्तिधारा ।।

श्री सिद्धचक्र विधान का महत्व एवं उसकी विधि

जैनों की आवश्यक क्रियाओं में देव पूजा का प्रमुख स्थान है। आचार्य कुन्दकुन्द ने दान और पूजा को श्रावक की मुख्य क्रियाओं में गिनाया है। जैन शास्त्रों में अनेक पूजा विधान वर्णित हैं, उन सबका उद्देश्य मानव की शांति के लिए है। शुद्ध भावों से की गई पूजा-आराधना से भावों में निर्मलता आती है जो मनुष्य को वीतरागता की ओर ले जाती है तथा इस लोक एवं परलोक में सुख शान्ति प्राप्त कराती है। सिद्धचक्र पूजा भी उनमें से एक है। वैसे यह पूजा पर्व विशेष की न होकर नित्य पूजा ही है। पूजा के पांच भेदों में से नित्य पूजा में ही इसको समझा जाना चाहिए किन्तु सिद्धचक्र विधान को अष्टाह्निका पर्व में ही करने का समाज में प्रचलन है। ये दिन पवित्र होते हैं। सती मैना सुन्दरी ने इस विधान को अष्टाह्निका पर्व में किया था और उससे श्रीपाल आदि का कुष्ठ रोग दूर हुआ था। इसीसे लोग इसे अष्टाह्निका पर्व में करने लग गये है। वैसे अष्टाह्निका का सम्बन्ध नन्दीश्वर विधान से है। अस्तु ! पूजा किसी भी समय में की जाय, शुभ फल देने वाली ही है।

यह पूजा सिद्ध भगवान के गुणों की पूजा है। सिद्धचक्र का अर्थ है 'मुक्त आत्माओं का चक्र-मण्डल-समूह'। सिद्ध भगवान के 'आठ गुणों को लेकर प्रथम पूजा है।' फिर कर्म-प्रकृतियों की व्युच्छित्ति की अपेक्षा से द्विगुणित द्विगुणित अर्घ बढ़ते जाते हैं। अर्थात् 'दूसरे दिन १६, फिर ३२, ६४, १२८, २५६, ५१२, एवं १०२४ क्रमशः बढ़ते जाते हैं। अष्टाह्निका में अष्टमी से लेकर पूर्णमासी तक यह पूजा की जाती है और नवें दिन जाप्य, शांति विसर्जन होम आदि किया जाता है।

पूर्ण विधान करने वाले सज्जनों को पूजन प्रारम्भ करने के साथ ही जाप्य पहले प्रारम्भ कर देना चाहिए। उत्कृष्ट जाप्य सवालाख माना गया है। जाप्य एक व्यक्ति अथवा कई व्यक्ति कर सकते हैं। प्रतिदिन निश्चित संख्या में जाप्य करके 'नवें दिन पूर्ण' करके हवन करना चाहिए। जाप्य करने वाला शुद्ध वस्त्र पहन कर मनसा वाचा कर्मणा शुद्ध होकर जाप्य करे। इन दिनों संयम व 'ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे, मर्यादित भोजन करे' तथा जमीन या तख्त पर सोवे। जाप्य प्रातः एवं सायं' दोनों बार किये जा सकते हैं। जाप्य प्रारम्भ करने में जो बैठें उन्हें ही जाप्य पूरे करने चाहिए। यदि सवा

लाख न कर सकें तो एक लाख अथवा ५१ हजार अथवा कम से कम ८००० तो करें ही। जाप्य मंत्र—'ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा अनाहत विद्यायै नमः' अथवा 'ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः' होने चाहिए।

मंडल गोलाकार बनाना चाहिए जैसे छपे हुए नक्शे में दिखाया गया है। त्रिकोण मंडल भी होते हैं। मंडल के बीच में सिंहासन में यंत्रराज स्थापित करना चाहिए और चारों कोनों में चार अक्षत सुपारी हल्दी आदि मांगलिक द्रव्यों से युक्त मंगल कलश रखने चाहिए। वे लाल कपड़े और श्रीफल से ढके हुए होना चाहिए। मंडप को अष्ट प्रातिहार्य, छत्र, चंवर आदि से सजाया जा सकता है।

पूजा अभिषेक पूर्वक यदि करना हो तो अभिषेक पाठ पढ़कर अभिषेक करें, फिर दैनिक पूजा करके यह पूजा प्रारम्भ करें। 'सामग्री मंडल पर न चढ़ा कर थाल रकाबो में ही चढ़ाना चाहिए।' आठ दिन तक मंडल पर सामग्री पड़ी रहने से जीवोत्पत्ति हो जाती है।

आठ दिन पूजा करने के पश्चात् नवें दिन पूर्णाहुति करे। उस दिन कुंड बनावे १ चौकोर (तीर्थंकर) कुंड एक हाथ (मुट्ठिबांधे) लम्बा चौड़ा और गहरा होना चाहिए। इसमें तीन कटनियां हों:—पहली पांच अंगुल की ऊँची चौड़ी, दूसरी ४ अंगुल ऊंची चौड़ी तथा तीसरी ३ अंगुल की हो। चौकोर कुंड बीच में हो, उसके उत्तर की ओर गोल कुंड (गणधर कुण्ड) हो और दक्षिण की ओर त्रिकोण कुण्ड (सामान्य केवली कुण्ड) हो। यदि ऐसा सम्भव न हो तो एक कुण्ड में भी तीनों आकार बनाए जा सकते हैं। कुण्डों के चारों ओर लकड़ी की खूंटियां गाड़कर अथवा कलश रखकर मोली बांधना चाहिए। "उस समय ॐ ह्रीं अर्हं पंचवर्णेन सूत्रेण त्रिवारान् वेष्टयामि" यह मंत्र पढ़ना चाहिए।

जितने जाप्य किये जावें उसके 'दशमांश जाप्य मंत्र की आहुतियां दी जानी चाहिए।' यदि सवालाख जाप्य किये हों तो साढ़े बारह हजार आहुतियां दी जानी चाहिए। हवन की सामग्री शुद्ध आक, ढाक, पलास आदि की समिध, दशांग धूप, छाड़, छबोला, खस आदि सुगन्धित द्रव्य, मेवा बूरा, घृत आदि शक्त्यनुसार लेना चाहिए। यह संक्षेप में इस विधान की विधि है।

अभिषेक पूर्वक विधान

सिद्धचक्र विधान की विधि ऊपर बताई जा चुकी है। जिन्हें अभिषेक आदि पूर्वक विधान करना हो वे निम्न प्रकार से करें:—सर्व प्रथम जल शुद्धि करना चाहिए।

।। जल शुद्धि मंत्र ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्म-महापद्म-तिगिंछ-केसरि-पुण्डरीक-महापुण्डरीक-गंगा-सिंधु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकांता-सीता-सीतोदा-नारी-नरकांता-सुवर्णरूप्यकूला-रक्ता-रक्तोदा-पयोधि-शुद्ध-जल-सुवर्ण-घट-प्रक्षिप्त-नवरत्न-गंधाक्षत-पुष्पार्चितमामोदक पवित्रं कुरु कुरु झं झं झ्रौं झ्रौं वं वं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सं स्वाहा।

अङ्ग शुद्धि

सौगंध्य-संगत-मधुव्रत-झंकृतेन
संवर्ण्यमानमिव गंधमनिन्द्यमादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वर-वृन्द-वन्द्यं
पादारविंदमभिवंद्य जिनोत्तमानाम् ।।

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अस्य सर्वाङ्गशुद्धि कुरु कुरु स्वाहा ।। गन्धं आरोपयामि ।। (सारे शरीर पर हाथ फेरे)।

वस्त्र शुद्धि

धौतान्तरीयं विधु-कान्ति-सूत्रैः
सद्ग्रन्थितं धौत-नवीन-शुद्धम्।
नग्नत्व-लब्धिर्न भवेच्च यावत्
संधार्यते भूषणमूरुभूम्याः ।।

संव्यानमंचद्वशया विभान्त-
मखंड-धौताभिनवं-मृदुत्वम् ।
संधार्यते पीत-सितांशु-वर्णमं-
शोपरिष्टाद् धृत-भूषणांकम् ॥

तिलक

पात्रेऽर्पितं चंदनमौषधीशं
शुभ्रं सुगंधाहृत-चंचरीकं ।
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्य
न केवलं देह-विकार-हेतोः ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः असिआउसा मम सर्वाङ्गशुद्धि कुरु कुरुस्वाहा ।

रक्षा बन्धन(कटक)

सम्यक्-पिनद्ध-नव-निमल-रत्नपङ्क्ति-
रोचिर्-हद्वलय-जात-बहु-प्रकारं
कल्याणनिर्मितमहं कटकं जिनेश-
पूजा-विधान-ललिते स्वकरे करोमि ।

ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं रक्ष रक्ष स्वाहा इति कंकणं अवधारयामि ।

(मुद्रिका धारण)

प्रत्युप्त-नील-कुलिशोपल-पद्म-राग
निर्यत्कर-प्रकरबद्ध-सुरेन्द्रचापम् ।
जैनाभिषेक-समयेऽंगुलि-पर्व-मूले
रत्नांगुलीयकमहं विनिवेशयामि ॥

ॐ ह्रीं रत्नमुद्रिकां अवधारयामि स्वाहा । (अनामिका में अंगूठीं पहरे) ।

(यज्ञोपवीतधारण)

पूर्व पवित्रतर-सूत्र-विनिर्मितं यत्
प्रीतः प्रजापतिरकल्पयदंगसंगि ।

सद्भूषणं जिनमहे निजकन्धरायां
यज्ञोपवीतमहमेष तवाऽऽतनोमि॥

ॐ नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायाहं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि, मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा।

(मुकुटधारण)

पुन्नाग चंपक-पयोरुह-किंकरात
जाति-प्रसून-नव-केसर-कुन्दमाद्यम्।
देव! त्वदीय-पद-पंकज-सत्प्रसादात्
मूर्ध्नि प्रणामवति शेखरकं दधेऽहम्॥

ॐ ह्रीं मुकुटं अवधारयामि स्वाहा।

कुण्डल धारण

एकत्र भास्वानपरत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपस्य भक्त्या।
रूपं परावृत्य च कुण्डलस्य मिषादवाप्ते इव कुण्डले द्वे॥

ॐ ह्रीं कुण्डल अवधारयामि स्वाहा।

हार धारण

मुक्तावली-गोस्तन-चन्द्रमाला विभूषणान्युत्तम नाक भाजां।
यथार्ह-संसर्गमतानि यज्ञ-लक्ष्मी-समालिंगन-कृद्दधेऽहम्॥

ॐ ह्रीं हारं अवधारयामि स्वाहा।

इस प्रकार अलकार आभूषण धारण करके स्नान योग्य भूमि का प्रक्षालन निम्न प्रकार करना चाहिए।

भूमि शुद्धि विधान

डाभ के पूले से निम्न प्रकार मंत्र पढ़कर भूमि का शोधन करें।

ॐ ह्रीं वातकुमाराय सर्व—विघ्नविनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा।

इसके पश्चात् निम्न श्लोक एवं मंत्र पढ़कर डाभ के पूल को जल में भिगोकर भूमि पर छिड़कते समय यह मंत्र पढ़ें।

ये संति केचिदिह दिव्य-कुल-प्रसूता
नागाः प्रभूत-बल-दर्प-युता विबोधाः ।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥

ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः ॐ ह्रीं अर्हं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय प्रक्षालय र अं हं तं स्वं झं यं क्षः पट् स्वाहा ।

इसके बाद मंडप रक्षार्थ चार प्रकार के देव तथा दिक्पालों को बुलावे और मंडप के चारों ओर पुष्पक्षेपण करे ।

चतुर्णिकायामरसंघ एष आगत्य यज्ञे विधिना नियोगम् ।
स्वीकृत्य भक्त्या हि यथार्हदेशे सुस्था भवंत्वान्हिक-
कल्पानायाम् ॥

हमारे इस निज पूजा विधान में हे भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष्क एवं कल्पवासी देवो ! पधार कर अपने नियोग को स्वीकार करो और जिन सेवा में तत्पर हो तिष्ठो ।

(पुष्पक्षेपण करे)

पत्पश्चात् वास्तुकुमार जाति के देवों को कहें और पुष्पक्षेपण करे ।

आयात वास्तु-विधिषूद्भुट-सन्निवेशा
योग्यांश-भाग-परिपुष्ट-वपुः प्रदेशाः ।
अस्मिन्मखे रुचिर-सुस्थित-भूषणांके
सुस्था यथार्ह-विधिना जिन-भक्ति-भाजः ॥

हे वास्तु कुमार जाति के देवो ! हमारे इस पूजा विधान में स्वकीय योग्य अंश भाग से परिपुष्ट शरीर युक्त एवं सुन्दर आभूषणों को धारण करके भगवान की भक्ति से संलग्न हो पधारो एवं समुचित स्थान पर विराजो ।

बाद में पवनकुमार जाति के देवों को कहें और पुष्पक्षेपण करें ।

आयात मारुतसुराः पवनोद्भुटाशाः,
संघट्ट-संलसित-निर्मलतांतरीक्षाः ।

वात्यादि-दोष-परिभूत-वसुन्धरायां,

प्रत्यूह-कर्म-निखिलं परिमार्जयन्तु ॥

आकाश एवं दिशाओं को पवन द्वारा शुद्ध करने वाले हे वायुकुमार देवो ! हमारे इस पूजा विधान यज्ञ में आकर वायु सम्बन्धी विघ्नों को दूर करो।

फिर मेघकुमार जाति के देवों से कहें और पुष्पक्षेपण करें।

आयात निर्मलनभःकृतसन्निवेशा

मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।

अस्मिन्मखे विकृतविक्रियया नितांते

सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥

स्वच्छ आकाश से युक्त हे मेघकुमार जाति के देवो ! हमारे इस पूजा विधान में आकर तिष्ठो एवं मेघ सम्बन्धी समस्त उपद्रवो को दूर करो।

तत्पश्चात् अग्निकुमार देवों से कहें और पुष्पक्षेपण करे।

आयात पावक-सुराः सुर-राजपूज्य-

संस्थापना-विधिषु संस्कृत-विक्रियार्हाः ।

स्थाने यथोचितकृते परिबद्ध-कक्षाः

संतु श्रियं लभत पुण्य-समाज-भाजां ॥

हे अग्निकुमार जाति के देवो ! इन्द्रों द्वारा पूजनीय भगवान के इस पूजा विधान में आकर तिष्ठो एवं अग्नि सम्बन्धी उपद्रवों को दूर करो।

फिर नागकुमार के देवों को कहे और पुष्पक्षेपण करे।

नागाःसमाविशत भूतल-सनिवेशाः

स्वां भक्तिमुल्लसित-गात्रतया-प्रकाश्य !

आशी-विषादि-कृत-विघ्नविनाश-हेतोः

स्वस्था भवतु निज-योग्य-महासनेषु ॥

भूतल में निवास करने वाले हे नागकुमार जाति के देवो ! हमारे इस पूजा विधान में आशीविष आदि सर्व विघ्नों को दूर करो एवं उचित स्थान पर तिष्ठो।

भूमि शोधन के पश्चात् जहां भी श्री जी लाकर विराजमान करना हो वहां पीठ प्रक्षाल निम्न श्लोक बोलकर करें।

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभः प्रवाहैः
प्रक्षालितं सुर-वरैर्यदनेक-वारम्।
अत्युद्यमद्य तदहं जिनपाद-पीठं
प्रक्षालयामि भव-संभव-ताप-हारि ॥

पीठ स्थापन के पश्चात् उसके आगे दस दिग्पालों की स्थापना निम्न श्लोक बोलकर करे और दस दिशाओं में पुष्पक्षेपण करे।

इन्द्राग्नि-दंडधर-नैऋत-पाशपाणि-
वायूत्तरेण-शशिमौलि-फणीन्द्र-चन्द्राः।
आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिन्हाः
स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥

ॐ इन्द्र ! आगच्छ इन्द्राय स्वाहा, ॐ अग्ने ! आगच्छ अग्नये स्वाहा, ॐ यम ! आगच्छ यमाय स्वाहा, ॐ नैऋत्य ! आगच्छ नैऋत्याय स्वाहा, ॐ वरुण ! आगच्छ वरुणाय स्वाहा, ॐ पवन ! आगच्छ पवनाय स्वाहा, ॐ धनद ! आगच्छ धनदाय स्वाहा, ॐ ईशान ! आगच्छ ईशानाय स्वाहा, ॐ धरणेन्द्र ! आगच्छ धरणेन्द्राय स्वाहा, ॐ सोम ! आगच्छ सोमाय स्वाहा।

तत्पचाश्त् जिनेन्द्र भगवान की मूर्ति लाकर पूजा स्थान पर रकाबी या जलोठ में विराजमान करे और प्रासुक जल से निम्न श्लोक बोलकर ह्वन करे। तत्पचात् वेदो में विराजमान करे।

दूरावनम्र-सुरनाथ-किरीट-कोटी-
संलग्न-रत्न-किरण-च्छवि-धूसरांघ्रिम्।
प्रस्वेद-ताप-मलमुक्तमपि प्रकृष्टै-
र्भक्त्याजलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे ॥

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं कृपालुसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशति-तीर्थंकर-परमदेवाभिषेकसमये आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे ......देशे......नाम्नि नगरे श्रीशुभसम्वत्सरे......मासानामुत्तमे......मासे

......पक्षे......पर्वणि......शुभदिने मुनिआर्यिकाश्रावकश्राविकाणां सकल-कर्म-क्षयार्थं जलेनाभिषिंचे नमः (भगवान के शिरपरजलधारा)

इसके बाद सिद्धयन्त्र प्रक्षाल निम्न मंत्र पढ़ते हुए करना चाहिए।

ॐ भूर्भुवः स्वरिह एतद्विघ्नौघवारकं यन्त्रमहं परिषिंचयामि। इस प्रकार न्हवन करके यन्त्र को मंडल में सिंहासन पर विराजमान करदे। तत्पश्चात् जपस्थान में बैठकर जो जाप्य जपना हो उसकी एक माला फेरे। जाप्य मंत्र निम्न दो में से कोई एक हो।

'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा' अथवा 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः'।

फिर निम्न प्रकार श्लोक बोलकर नित्यनियम पूजा, वेदी में विराजमान भगवान की पूजा, पंचमेरु नंदीश्वर आदि पूजायें करके सिद्धचक्रयंत्र पूजा प्रारंभ करे। ८ दिन तक पूजा करके नवें दिन होम करे।

श्रीमन्मंदरमस्तके शुचिजलैर्धौते सदर्भाक्षते,
पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं त्वत्पादपुष्पस्रजं।
इंद्रोहं निजभूषणार्थममलं यज्ञोपवीतं दधे,
मुद्रा-कंकण-शेखराण्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥

यन्त्र पूजा

परमेष्ठिन् जगत्त्राण-करणे मङ्गलोत्तम। शरण्येतस्तिष्ठतु मे सन्निहितोऽस्तु पावन।

ॐ ह्रीं अर्हन् असिआउसा मंगलोत्तमसरणभूताः अत्रावतरतावतरत संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं अर्हन् असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं अर्हन् असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः अत्र मम सन्निहिता भवत २ वषट् सन्निधापनम्।

पंकेरुहायात-पराग-पुञ्जैः सौगन्ध्यमद्भिः सलिलैः पवित्रैः।
अर्हत्पदाभाषित-मंगलादीन् प्रत्यूह-नाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मंगलोत्तम-सरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।
काश्मीर-कर्पूर-कृत-द्रवेण, संसार-तापापहृतौ युतेन।

अर्हत्पदाभाषित-मंगलादीन प्रत्यूह-नाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मंगलोत्तम-शरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः चंदननिर्वपामीति स्वाहा।
शाल्यक्षतैरक्षत-मूर्तिमद्भि-रब्जादि-वासेन सुगन्धवद्भिः।
अर्हत्पदाभाषित-मगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मंगलोत्तम-शरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।
कदम्ब-जात्यादिभवैः सुरद्रुमैर्जातैर्मनोजात-विपाश-दक्षैः।
अर्हत्पदाभाषित-मंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मंगलोत्तम-शरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
पीयूष-पिण्डैश्च शशांक-कांति - स्पर्द्धिभिरिष्टैर्नयन-प्रियैश्च।
अर्हत्पदाभाषित-मंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तम-शरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ध्वस्तांधकार-प्रसरैः प्रदीपैर्कृतोद्भवै-रत्न-विनिर्मितैर्वा।
अर्हत्पदाभाषित-मङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तम-शरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
स्वकीय-धूमेन नभोवकाश-व्याप्तैश्चहृद्यैश्च सुगन्ध-धूपैः।
अर्हत्पदाभाषित-मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तम-शरणभूतेभ्य पंचपरमेष्ठिभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
नारंग-पूगादि-फलैरनर्घ्यैर्हृन्मानसादि-प्रियतर्पकैश्च।
अर्हत्पदाभाषित-मङ्गलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥
ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तम-शरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।
(शार्दूल वि०)—अंभश्चंदनतन्दुलाक्षत—तरूद्भूतैर्निवेद्यैर्वरैः।
दीपैर्धूप-फलोत्तमैः समुदितैरेभिः सुवर्ण-स्थितैः ॥
अर्हत्-सिद्ध-सुसूरि-पाठक-मुनीन्, लोकोत्तमान् मंगलान्।
प्रत्यूहौघ-निवृत्तये शुभकृतः, सेवे शरण्यानहम् ॥
ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक पूजनम्

कल्याण-पञ्चक-कृतोदयमाप्तमीश,-मर्हंतमच्युत-चतुष्टय-भासुरांगम्।
स्याद्वाद-वागमृत-सिन्धु-शशांक-कोटि,-मर्चे जलादिभिरनंत-गुणालयं तम् ॥
ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्य-समवसरणादि-लक्ष्मीं बिभ्रते अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्माष्टकेध्मचयमुत्पथमाशु हुत्वा, सद्ध्यानवह्निविसरे स्वयमात्मवन्तम् ।
निःश्रेयसामृतसरस्यथ संनिनाय, तं सिद्धमुच्चपददं परिपूजयामि ।।
ॐ ह्रीं अष्टकर्म-काष्ठगण-भस्मीकृते सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वाचारपंचकमपि स्वयमाचरंति, ह्याचारयंति भविकान् निज-शुद्धि-भाजः ।
तानर्चयामि विविधैः सलिलादिभिश्च, प्रत्यूह-नाशन-विधौ निपुणान् पवित्रैः ।।
ॐ ह्रीं पंचाचार-परायणाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
अंगांग-बाह्य-परिपाठन-लालसाना,—मष्टांग-ज्ञान-परिशीलन-भावितानाम् ।
पादारविन्द-युगलं खलु पाठकानां, शुद्धैर्जलादि-वसुभिः परिपूजयामि ।।
ॐ ह्रीं द्वादशांग-पठनपाठनोद्यताय उपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
आराधना-सुखविलास-महेश्वराणां, सद्धर्म-लक्षणमयात्मविकस्वराणां ।
स्तोतुं गुणान् गिरिवनादि-निवासिनां वै एषोऽर्घतः चरणपीठ-भुवंयजामि ।।
ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार-चारित्राराधक-साधुपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
अर्हन्मङ्गलमर्चामि जगन्मंगलदायकम् । प्रारब्ध-कर्म-विघ्नौघ-प्रलय-प्रदमन्मुखैः ।।
ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
चिदानन्द-लसद्वीचिमालिनं गुणशालिनम् । सिद्ध-मगलमर्चेहं सलिलादिभि-रुज्ज्वलैः ।।
ॐ ह्रीं सिद्धमंगलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
बुद्धि-क्रिया-रस-तपोविक्रियौषधि-मुख्यकाः ।
ऋद्धयो यं न मोहन्ति साधु-मंगलमर्चये ।।
ॐ ह्रीं साधुमंगलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
लोकालोक-स्वरूपज्ञ-प्रज्ञप्तं धरममंगलम् ।
अर्चे वादित्र-निर्घोष-पूरिताशं वनादिभिः ।।
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्त-धर्ममंगलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
लोकोत्तमोऽर्हन् जगतां भव-बाधा-विनाशकः ।
अर्च्यतेऽर्घ्येण स मया कुकर्म-गण-हानये ।।

ॐ ह्रीं अर्हं-लोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विश्वाग्र-शिखर-स्थायी सिद्धो लोकोत्तमो मया ।
मह्यते महसामंदविदानन्दथु-मेदुरः ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

राग-द्वेष-परित्यागी साम्यभावावबोधकः ।
साधुलोकोत्तमोऽर्घ्येण पूज्यते सलिलादिभिः ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तम-क्षमया भास्वान् सद्धर्मो विष्टपोत्तमः ।
अनंत-सुख-संस्थानं यज्यतेऽम्भोऽक्षतादिभिः ॥

ॐ ह्रीं केवली-प्रज्ञप्त-धर्म-लोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सदार्हन् शरणं मन्ये नान्यथा शरणं मम ।
इति भाव-विशुद्धयर्थमर्हयामि जलादिभिः ।

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

व्रजामि सिद्ध-शरणं परावर्तन-पंचकं ।
भित्वा स्वसुख-संदोह-संपन्नमिति पूजये ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

आश्रये साधु-शरणं सिद्धांत-प्रतिपादनैः ।
न्यक्कृताज्ञान-तिमिरमिति शुद्ध्या यजामि तम् ॥

ॐ ह्रीं साधुशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धर्म एव सदा बन्धुः स एव शरणं मम ।
इह वान्यत्र संसारे इति तं पूजयेऽधुना ॥

ॐ ह्रीं केवलि-प्रज्ञप्त-धर्मशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(बसंततिका)—ससार-दुख-हनने निपुणं जनानां,
नाद्यन्त-चक्रमिति सप्त-दश-प्रमाणम् ॥
संपूजये विविध-भक्तिभरावनम्रः
शांतिप्रदं भुवन-मुख्य-पदार्थ-सार्थैः ॥

ॐ ह्रीं अर्हदादि-सप्त-दश-मन्त्रेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला

विघ्न-प्रणाशन-विधौ सुरमर्त्यनाथा, अग्रेसरं जिन वदंति भवंतमिष्टम् ।
आनाद्यन्त-युग-वर्तिनमत्र कार्ये, गार्हस्थ्य-धर्म-विहितेऽहमपि स्मरामि ॥

विनायकः सकल-धर्मि-जनेषु धर्मं द्वेधा नयत्यविरतं दृढ़-सप्त-भंग्या।
यद्धयानतो नयन-भाव-सभुज्झनेन, बुद्धः स्वयं सकल-नायक-इत्यवाप्ते ॥

(भुजंगप्रयात)-गणानां मुनीनामधीशस्त्वतस्ते,
गणेशाख्यया ये भवन्तं स्तुवंति।
सदा विघ्न-संदोह-शांतिर्जनानां, करे संलुठत्यायत-श्रेयसानाम् ॥

त्वं मंगलानां परमं जिनेन्द्र। समादृतं मंगलमस्ति लोके।
त्वत् पूजकानामपयान्ति विघ्नाः क्षिप्रं एरुन्मत्सविधेव सर्पाः।
तव प्रसादात् जगतां सुखानि, स्वयं समायान्ति न चात्र चित्रम्।
सूर्योदये नाशमुपैति नूनं तमो विशालं प्रबलं च लोके ॥
यतस्त्वमेवासि विनायको मे दृष्टेष्ट-योगानवरुद्ध-भावः।
त्वन्नाम-मात्रेण पराभवंति विघ्नारयस्तर्हि किमत्र चित्रम् ॥

घत्ता—जय जय जिनराज त्वद्गुणान्को भक्ति,
यदि सुरगुरिन्द्रः कोटि-वर्ष-प्रमाणम् ॥
वदितुमभिलषेद्वा पारमाप्नोति नो चेत्,
कथमिह हि मनुष्यः स्वल्प-बुद्ध्या-समेतः ॥

ॐ ह्रीं अर्हदादि-सप्तदश-मन्त्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रियं बुद्धिमनाकुल्यं धर्म-प्रीति-विवर्द्धनं।
गृहि-धर्मं स्थितिर्भूयात् श्रेयांसि मे दिशत्वरा ॥

इत्याशीर्वादः।

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

कविवर पं० सन्तलालजी कृत

श्री सिद्धचक्र विधान

मङ्गलाचरण

दोहा

जिनाधीश शिवईश नमि, सहसगुणित विस्तार ।
सिद्धचक्र पूजा रचों, शुद्ध त्रियोग संभार ॥१॥
नीत्याश्रित धनपति सुधी, शीलादिक गुण खान ।
जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान ॥२॥
देश काल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार ।
मधुर बैन नयना सुघर, सो याजक निरधार ॥३॥
रत्नत्रयमंडित महा, विषय-कषाय न लेश ।
संशयहरण सुहितकरन, करत सुगुरु उपदेश ॥४॥

छप्पय

निर्मल मंडप भूमि दरव—मंगल करि सोहत ।
सुरभि सरस शुभ पुष्प-जाल मंडित मन मोहत ॥
यथायोग्य सुन्दर मनोज्ञ, चित्राम अनूपा ।
दीरघ मोल सुडोल, बसन झखझोल सरूपा ॥
हो वित्तसार प्रासुक दरब, सरब अंग मनको हरै ।
सो महाभाग आनंद सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करै ॥५॥

दोहा

सुर-मुनि मन आनन्दकर, ज्ञान सुधारस धार।
सिद्धचक्र सो थापहूं, विधि दव-जल उनहार ॥६॥

अडिल्ल

'अर्हं' शब्द प्रसिद्ध अर्द्ध-मात्रिक कहा,
अकारादि स्वर मंडित अति शोभा लहा।
अति पवित्र अष्टांग अर्घ करि लायके,
पूरब दिशि पूजों अष्टांग नमायके ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः पूर्वदिशि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्व विधि अर्घ ले।
भक्ति भाव उर ठान, पूजों हों आग्नेय दिशि ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङ अनाहत पराक्रमाय सिद्धाधिपतये आग्नेय-दिशि अर्घ्यं०।

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके।
मिलि है वसुविधि रिद्धि, दक्षिण दिशि पूजा करौं ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहत पराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिण-दिशि अर्घ्यं०।

वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जलफलादि शुभ अर्घ ले।
पाऊं सब विधि स्वस्ति, नैऋत्य दिशि अर्चा करौं ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैऋत्य-दिशि अर्घ्यं०।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि।
मिलि है सब शुभ योग, पूजन करि पश्चिम दिशा ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिम-दिशि अर्घ्यं०।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूं आरती अर्घ ले।
सब विधि आरत त्याग, वायव दिशि पूजा करौं ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्य-दिशि अर्घ्यं०।

वर्ण यवर्गी सार, दर्व-अर्घ वसु द्रव्य करि।
भाव अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करौं ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घ्यं०।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइकें।
नशे कर्म वसु भंत, पूजों हो ईशान दिशि ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहत पराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि अर्घ्यं०।

प्रथम पूजा

(आठ गुण सहित)

छप्पय

ऊरध अधो सु रेफ बिंदु हकार विराजै।
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै॥
वर्गनिपूरित वसुदल अंबुज तत्व संधिधर।
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावतअरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१५॥

ॐ ह्रः णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्। पुष्पांजलि क्षिपेत्।

दोहा—सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित निःशोग।
सकल सिद्ध पूजों सदा, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलि क्षिपेत्।

अथाष्टकं

(चाल नन्दीश्वरद्वीप पूजा की)

शीतल शुभ सुरभि सु नीर, कंचन कुम्भ भरों।
पाऊं भवसागर तीर, आनंद भेंट धरों॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धचक्राधिपतये श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री सम्मत्तणाण दंसणवीरज सुहमत्तहेव अवगाहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अट्ठगुणसंयुत्ताणं सिद्धाणं जन्म-जरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

चन्दन तुम बंदन हेत, उत्तम मान्य गिना।
नातर सब काष्ठ समेत, इँधन ही बना॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं ॥२॥ चन्दनं०

दीरघ शशि किरण समान, अक्षत ल्यावत हूं।
शशिमंडल सम बहुमान, पूज रचावत हूं॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥३॥ अक्षतं०

तुम चरणचन्द्र के पास, पुष्प धरे सोहैं।
मानूं नक्षत्रनकी रास, सोहत मन मोहैं॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥४॥ पुष्पं०

उत्तम नेवज बहुभाँति, सरस सुधा साने।
अहिमिन्द्रन मन ललचाय, भक्षण उमगाने॥

अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥५॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुण-संयुक्ताय नैवेद्यं० ॥५॥

फैली दीपन की जोति, अति परकाश करै।
जिम स्याद्वाद उद्योत, संशय तिमिर हरै॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥६॥ दीपं०

धरि अग्नि धूपके ढेर, गंध उड़ावत हूं।
कर्मों का धूप बखेर, ठोंक जरावत हूं॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥७॥ धूपं०

जिन धर्म वृक्ष की डाल, शिवफल सोहत हैं।
इम धरि फल कंचन थाल, भविजन मोहत हैं॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥८॥ फलं०

करि दर्व अर्घ वसु जात, यातैं ध्यावत हूं।
अष्टांग सुगुण विख्यात, तुम ढिग पावत हूं॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥९॥ अर्घ्यं०

गीता

निर्मल सलिल शुभबास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं, चरु प्रचुरस्वाद सुविधि घनी॥
करि दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्धसमूह पूजत, कर्म-दल सब दलमले ॥१॥

ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मलरूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं ॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अभेय, चहुंगुण गेह, द्यो हम शुभमती ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सम्मत्तणाणादि अष्टगुणाणं अनर्घ्य-पदप्राप्तये महाअर्घ्यं०।

अथ अष्टगुण अर्घ

। चौपाई ।

मिथ्या-त्रय चउ आदि कषाया, मोह नाशि छायक गुण पाया।
निज अनुभव प्रत्यक्ष सरूपा, नमूं सिद्ध समकित गुणभूपा ॥१

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं० ॥१॥

सकल त्रिधा षट् द्रव्य अनन्ता, युगपत जानत हैं भगवन्ता।
निर आवरण विषद स्वाधीना, ज्ञानानंद परम रस लीना ॥२॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥२॥

चक्षु अचक्षु अवधि विधि नाशी, केवल दर्श जोति परकाशी।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमूं सिद्धोंका ॥३॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ॥३॥

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीवशक्ति घाते निरधारा।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी ॥४॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥४॥

रूपातीत मन इन्द्रिय ताहीं, मनपर्यय हू जानत नाहीं।
अलख अनूप अमित अविकारी, नमूं सिद्ध सूक्षम गुणधारी ॥५॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं० ॥५॥

एक क्षेत्र-अवगाह स्वरूपा, भिन्न-भिन्न राजैं चिद्रूपा।
निज परघात विभाव विडारा, नमूं सुहित अवगाह अपारा ॥६॥

ॐ ह्रीं अवगाहनत्वाय नमः अर्घ्यं० ॥६॥

परकृत ऊँच नीच पद नाहीं, रमत निरंतर निजपद माहीं ।
उत्तम अगुरुलघु गुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावें नित योगी ॥७॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वात्मकाय नमः अर्घ्यं० ॥७॥

नित्य निरामय भवभयभंजन, अचल निरंतर शुद्ध निरंजन ।
अव्याबाध सोई गुण जानो, सिद्धचक्र पूजन मन आनो ॥८॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधत्वाय नमः अर्घ्यं० ॥८॥

अथ जयमाल

दोहा—जग आरत भारत महा, गारत करि जय पाय ।
विजय आरती तिन कहूं, पुरुषारथ गुणगाय ॥

पद्धरी छन्द

जय करण कृपाण सु प्रथम बार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार ।
दृढ़ कोट विपर्यय मति उलंघ, पायो समकित थल थिर अभङ्ग ॥१
निज-पर विवेक अंतर पुनीत, आतम रुचि वरती राजनीत ।
जग विभव विभाव असार एह, स्वातम सुखरस विपरीत देह ॥२
तिन नाशन लीनो दृढ़ संभार, शुद्धोपयोग चित चरण-सार ।
निर्ग्रन्थ कठिन मारग अनूप, हिंसादिक टारन सुलभ रूप ॥३
द्वयबीस परीसह सहन वीर, बहिरंतर संयम धरण धीर ।
द्वादश भावन, दश भेद धर्म, विधि नाशन बारह तप सु पर्म ॥४
शुभ दयाहेत धरि समिति सार, मन शुद्धकरण त्रय गुप्ति धार ।
एकाकी निर्भय निःसहाय, विचरो प्रमत्त नाशन उपाय ॥५
लखि मोहशत्रु परचंड जोर, तिस हनन शुकल दल ध्यान जोर ।
आनन्द वीररस हिये छाय, क्षायक श्रेणी आरम्भ थाय ॥६

बारम गुणथानक ताहि नाश, तेरम पायो निजपद प्रकाश।
नव केवललब्धि विराजमान, दैदीप्यमान सोहे सुभान ॥७
तिस मोह दुष्ट आज्ञा एकांत, थी कुमति स्वरूप अनेक भाँति।
जिनवाणी करि ताको विहंड, करि स्याद्वाद आज्ञा प्रचंड ॥८
बरतायो जग में सुमति रूप, भविजन पायो आनन्द अनूप।
थे मोह नृपति उप करण शेष, चारों अघातिया विधि विशेष ॥९
है नृपति सनातन रीति एह, अरि विमुख न राखे नाम तेह।
यों तिन नाशन उद्यम सुठानि, आरंभ्यो परम शुकल सु ध्यान ॥१०

तिस बलकरि तिनकी थिति विनाश,
पायो निर्मय सुखनिधि निवाश।
यह अक्षय ज्योति लई अबाध,
पुनि अंश न व्यापो शत्रु व्याध ॥११
शास्वत स्वाश्रित सुखश्रेय स्वामि,
है शांति संत तुम को प्रणाम।
अन्तिम पुरुषारथ फल विशाल,
तुम विलसौ सुखसौं अमित काल ॥१२

ॐ ह्रीं सम्मत्तणाणादि अट्ठगुणसंजुत्तसिद्धेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

घत्ता

परसमय विदूरित पूरित निजसुख समयसार चेतनरूपा।
नानाप्रकार पर का विकार सब टार लसैं सब गुण भूपा ॥
ते निरावर्ण निर्देह निरूपम सिद्धचक्र परसिद्ध जजूं।
सुर मुनि नित ध्यावैं आनन्द पावैं, मैं पूजत भवभार तजूं ॥

इत्याशीर्वादः।

(यहां १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करें।)

द्वितीय पूजा

(सोलह गुणसहित)

छप्पय

ऊरध अधो सु रेफ बिंदु हकार विराजे।
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे॥
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर।
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्तसिद्ध-परमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटैं उपद्रव योग॥२॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टकं

गीता

हिमशैल धौल महान कठिन पाषाण तुम जस रासतें।
शरमाय अरु सकुचाय द्रव ह्वै बही गंगा तासतें॥
सम्बन्ध योग चितार चित भेटार्थ झारी में भरूं।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडशगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जलं-निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर चन्दन आदि अन्तर-बाह्य बहुविधि तप हरै ।
यह कार्य-कारण लखि नमित मम भाव हू उद्यम करै ।।
मैं हूं दुखी भवताप से घसि मलय चरनन ढिग धरूं ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ।।२।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडशगुण संयुक्ताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने चन्दनं निर्व० स्वाहा ।

सौरभ चमक जिस सह न सकि अम्बुज बसें सरताल में ।
शशि गगन बसि नित होत कृश अहिनिशि भ्रमै इस ख्यालमें ।।
सो अक्षतौघ अखण्ड अनुपम पुंज धरि सन्मुख धरूं ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ।।अक्षतं।।३।।

जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा ।
तुम शील कटक सुघट निकट सुरचाप पटक सुभट भगा ।।
इम पुष्पराशि सुवास तुम ढिग कर सुयश बहु उच्चरूं ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ।।पुष्पं।।४।।

जीवन सतावत नहिं अघावत क्षुधा डाइन सी बनी ।
सो तुम हनी, तुम ढिग न आवत, जान यह विधि हम ठनी ।।
नैवेद्यके संकेत करि निज क्षुधानाशन विधि करूं ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ।।नैवेद्यं।।५।।

मैं मोह-अन्ध अशक्त अरु यह विषम भववन है महा ।
ऐसे रुले को ज्ञानदुति बिन पार निवरण हो कहां ।।
सो ज्ञानचक्षु उघार स्वामी दीप ले पायनि परूं ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ।।दीपं।।६।।

प्रासुक सुगंधित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुहावनो ।
धरि अग्नि दश दिश वास पूरित ललित धूम्र सुहावनो ।।
तुम भक्ति भाव उमंग करत प्रसंग धूप सु विस्तरूं ।

षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥७॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडशगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने धूपं निर्व० स्वाहा ॥७॥

चित हरन अचिर सुरंग रसपूरित विविध फल सोहने।
रसना लुभावन कल्पतरुके सुर असुर मन मोहने॥
भरि थाल कंचन भेंट धरि संसार फल तृष्णा हरूं।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥फलं॥८॥

शुभ नीर वर कश्मीर चंदन धवल अक्षत युत अनी।
वर पुष्पमाल विशाल चरु सुरमाल दीपक दुति मनी॥
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूं।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥अर्घ्यं॥९॥

गीता

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥१०॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्ष्म सरूप अनूप हैं॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अभेय, चहुं गुण गेह, द्यो हम शुभमती ॥११॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये षोडशगुण संयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने महार्घं०।

सोलहगुण सहित अर्घ

त्रोटक

दर्शन आवर्णी प्रकृति हनी, अथिता अवलोक सुभाव बनी।
इक साथ समान लखो सब ही, नमूं सिद्ध अनंत दृगन अबही ॥१॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं।

विधि ज्ञानावर्ण विनाश कियो, निजज्ञान स्वभाव विकाश लियो।
समयांतर सर्व विशेष जनों, नमूं सिद्ध अनंत सु सिद्ध तनों ॥२॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं।

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो।
असमान महाबल धारत हैं, हम पूजत पाप बिडारत हैं ॥३॥

ॐ ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं।

विपरीत सभीत पराश्रितता, अतिरिक्त धरै न करै थिरता।
परकी अभिलाष न सेवत हैं, निज भाविक आनन्द बेवत हैं ॥४॥

ॐ ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं।

निज आतम विकाशक बोध लह्यो, भ्रमको परवेश न लेश रह्यो।
निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये ॥५॥

ॐ ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं०।

निज भाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो।
निजथान निरूपम नित्य बसे, नमूं सिद्ध अनाचल रूप लसे ॥६॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं।

चौपाई

गुण पर्यय परणतिके भेद, अति सूक्षम असमान अखेद।
ज्ञान गहे, न कहै जड़ बैन, नमों सिद्ध सूक्षम गुण ऐन ॥७॥

ॐ ह्रीं अनन्तसूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं०।

जन्म-मरण युत धरे न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय।
नित्य निरंजन निर-अविकार, अव्याबाध नमों सुखकार ॥८॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घ्यं०।

एक पुरुष अवगाह प्रजंत, राजत सिद्ध-समूह अनंत।
एकमेक बाधा नहिं लहैं, भिन्न-भिन्न निजगुण में रहैं ॥९॥

ॐ ह्रीं अवगाहनगुणाय नमः अर्घ्यं०।

कायथोग पर्यापति प्रान, अनवधि छिन छिन होवे हान।
जरा कष्ट जग प्रानी लहैं, नमों सिद्ध यह दोष न गहै ॥१०॥
ॐ ह्रीं अजराय नमः अर्घ्यं०।

काल-अकाल प्राण को नाश, पावे जीव मरन को त्रास।
तासौं रहित अमर अविकार, सिद्ध-समूह नमूं सुखकार ॥११॥
ॐ ह्रीं अमराय नमः अर्घ्यं०।

गुण-गुण प्रति है भेद अनन्त, यो अथाह गुणयुत भगवंत।
है परमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण बन्दूं एह ॥१२॥
ॐ ह्रीं अप्रमेयाय नमः अर्घ्यं०।

भुजंगप्रयात

अनूकर्मतें फर्स वर्णादि जानो, किसी एक वीशेषको किं प्रमानो।
पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी, नमूं सिद्ध विगतेन्द्रिय ज्ञान भागी॥
ॐ ह्रीं अतीन्द्रियज्ञानधारकाय नमः अर्घ्यं०।

त्रिधा भेद भावित महाकष्टकारे,
रमण भावसों आकुलित जीव सारे।
निजानंद रमणीय शिवनार स्वामी,
नमों पुरुष आकृति सबे सिद्ध नामी ॥१४॥
ॐ ह्रीं अवेदाय नमः अर्घ्यं०।

विशेषं सकल चेतना धार मांही,
भये लै भलो विधि रहो भेद नाहीं।
तथा हीन अधिकाय को भाव टारी,
नमों सिद्ध पूरण कला ज्ञानधारी ॥१५॥
ॐ ह्रीं अभेदाय नमः अर्घ्यं०।

निजानन्द रस स्वादमें लीन अंता,
मगन हो रहे राग वर्जित निरंता।
कहांलों कहूं आपको पार नाहीं,
धरो आपको आपही आपमाहीं ॥१६॥
ॐ ह्रीं निजाधीनजिनाय नमः अर्घ्यं०।

जयमाल

दोहा—पंच परम परमात्मा, रहित कर्म के फंद ।
जग प्रपंच विरहित सदा, नमो सिद्ध सुखकंद ॥

त्रोटक

दुखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो ।
भवितारन पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥१॥
समयामृत पूरित देव सही, पर आकृत मूरति लेश नहीं ।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥२॥
अखिना अभिना अछिना सुपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा ।
यमराज जरा दुखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥३॥
निर-आश्रित स्वाश्रित वासितहो, पर-आश्रित खेद विनाशित हो ।
विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥४॥
अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुबुधा सुसिधं ।
विधि कानन दहन हुताशन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥५॥
शरनं चरनं वरनं करनं, धरनं चरनं मरनं हरनं ।
तरनं भव-वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥६॥
भववारिधि त्रास विनाशन हो, दुखरास विनास हुताशन हो ।
निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥७॥
तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूजि लहै ।
शरणागत 'संत' उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥८॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनज्ञानादि षोडश गुणयुक्त-सिद्धेभ्यो महार्घ्यं० ।

दोहा—सिद्धवर्ग गुण अगम हैं, शेष न पावैं पार ।
हम किह विधि वरणन करैं, भक्तिभाव उर धार ॥९॥

इत्याशीर्वादः

(यहां १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असि आउसा नमः' मंत्र का जाप करें ।)

तृतीय पूजा

(बत्तीस गुरणसहित)

छप्पय

ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अंत सु छाजे।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वं केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशद्गुणसहितविराजमान श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग ॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टकं

भव त्रासित अकुलित रहै भवि, कठिन मिटन दुखताई ॥
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई ॥
तुम पूजोरे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजोरे भाई ॥टेक॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोगविनाशनाय जलं ॥१॥

जगवंदन परसत पद चन्दन, महाभाग उपजाई ।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढ़ाई ।।प्रभु पूजोरे०

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने संसार-तापविनाशनाय चन्दनं० ।।२।।

शिवनायक पूजन लायक है, यह महिमा अधिकाई ।
अक्षयपद दायक अक्षत यह, सांचो नाम धराई ।।प्रभु पूजोरे०।।
अक्षतं० ।।३।।

कामदाह अति ही दुखदायक, मम उरसे न टराई ।
ताहि निवारण पुष्प भेंट धरि, मागूं वर शिवराई ।।प्रभु पूजोरे०
पुष्पं० ।।४।।

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहिं मेंटत पूर परौ इन ताई ।
भेंट करत तुम इनहूं, रहूं चिरकाल अघाई ।।प्रभु पूजोरे०।।
नैवेद्यं० ।५।।

दिव्य रत्न इस देश-काल में, कहै कौन है नांई ।
तुम पद भेंटै दीप प्रकट यह चिंतामणि पद पाई ।। प्रभु पूजोरे०
दीपं ।।६।।

धूप हुताशन वासन में धरि, दसदिशि वास बसाई ।
तुम पद पूजत या विधि, वसु विधि ईंधन जर हो जाई ।।प्रभु०।।
धूपं० ।।७

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूं हूं तुम पाई ।
जासौं जजें मुक्तिपद पइये, सर्वोत्तम फलदाई ।।प्रभु पूजोरे०।।
फलं० ।।८

वसुविधि अर्घ देउं तुम मम द्यो वसुविधि गुण सुखदाई ।
जासु पाय वसु त्रास न पाऊं, "सन्त" कहे हर्षाई ।।प्रभु पूजोरे०
अर्घ्यं०

गीता

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।।

वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं ।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुं गुण गेह, द्यो हम शुभमती ।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं० ।

अथ बत्तीस गुण अर्घ्य

पद्धड़ी

चेतन विभाव पुद्गल विकार, है शुद्ध बुद्ध तिस निमित टार ।
दृगबोध सुरूप सुभाव एह, नमूं शुद्ध चेतना सिद्ध देह ।।१।।

ॐ ह्रीं शुद्ध चेतनाय नमः अर्घ्यं० ।

मति आदि भेद विच्छेद कीन, ज्ञायक विशुद्ध निज भाव लीन ।
निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमूं शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार ।।२।।

ॐ ह्रीं शुद्धज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।

सर्वांग चेतना व्याप्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप ।
पर लेश न निज परदेश माँहि, नमूं सिद्ध शुद्ध चिद्रूप ताहि ।।३।।

ॐ ह्रीं शुद्धचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं० ।

अन्तरविधि उदय विपाक टार, तुम जातिभेद बाहिज विडार ।
निज परिणतिमें नहिं लेश शेष, नमूं शुद्धरूप गुणगण विशेष ।।४।।

ॐ ह्रीं शुद्धस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

रागादिक परिणतिको विध्वंश, आकुलित भाव राखो न अंश ।
पायो निज शुद्धस्वरूप भाव, नमूं सिद्धवर्ग धर हिये चाव ।।५।।

ॐ ह्रीं परम शुद्धस्वरूपभावाय नमः अर्घ्यं० ।

दोहा—तिहूं काल में ना डिगें, रहैं निजानन्द थान।
नमूं शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान ॥६॥
ॐ ह्रीं शुद्धदृढ़ाय नमः अर्घ्यं०।

निज आवर्तकमें बसे, नित ज्यों जलधि कलोल।
नमूं शुद्ध आवर्तको, करि निज हिये अडोल ॥७॥
ॐ ह्रीं शुद्धआवर्तकाय नमः अर्घ्यं०।

परकृत कर उपज्यो नहीं, ज्ञानादिक निज भाव।
नमों सिद्ध निज अमलपद, पायो सहज सुभाव ॥८॥
ॐ ह्रीं शुद्धस्वयंभवे नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी

निज सिद्ध अनन्त चतुष्ट पाय, निज शुद्ध-चेतनापुँज काय।
निज शुद्ध सबै पायो संयोग, तुम सिद्धराज सु शुद्ध जोग ॥९॥
ॐ ह्रीं शुद्धयोगाय नमः अर्घ्यं०।

एकेन्द्रिय आदिक जातिभेद, हीनाधिक नामा प्रकृति छेद।
संपूरण लब्धि विशुद्ध जात, हम पूजें हैं पद जोर हाथ ॥१०॥
ॐ ह्रीं शुद्धजाताय नमः अर्घ्यं०।

दोहा—महातेज आनन्दघन, महातेज परताप।
नमों सिद्ध निजगुण सहित, दीपै अनुपम आप ॥११॥
ॐ ह्रीं शुद्धतपसे नमः अर्घ्यं।

पद्धड़ी

वर्णादिकको अधिकार नाहिं, संस्थान आदि आकार नाहिं।
अति तेजपिंड चेतन अखंड, नमूं शुद्ध मूर्तिक कर्मखंड ॥१२॥
ॐ ह्रीं शुद्धमूर्तये नमः अर्घ्यं।

बाहिज पदार्थ को इष्टमान, नहिं रमत ममत तासों जु ठान।
निज अनुभवरस में सदालीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन ॥१३

ॐ ह्रीं शुद्धसुखाय नमः अर्घ्यं।

दोहा—धर्म अर्थ अरु काम बिन, अन्तिम पौरुष साध।
भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूं सिद्ध निरबाध ॥१४॥

ॐ ह्रीं शुद्धपौरुषाय नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी

पुद्गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासों विमुक्त।
पुरुषांकित चेतनमय प्रदेश, ते शुद्ध शरीर नमूं हमेश ॥१५

ॐ ह्रीं शुद्धशरीराय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

पूरण केवलज्ञान-गम, तुम स्वरूप निर्बाध।
और ज्ञान जाने नहीं, नमों सिद्ध तज आध ॥१६॥

ॐ ह्रीं शुद्धप्रमेयाय नमः अर्घ्यं०।

दरशन ज्ञान सुभेद है, चेतन लक्षण योग।
पूरण भई विशुद्धता, नमों शुद्ध उपयोग ॥१७॥

ॐ ह्रीं शुद्धोपयोगाय नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग।
निजरस स्वादन है भोगसार, सो भोगो तुम हम नमस्कार ॥१८

ॐ ह्रीं शुद्धभोगाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा—निर्ममत्व युगपत लखो, तुम सब लोकालोक।
शुद्ध ज्ञान तुमको लखों, नमों शुद्ध अवलोक ॥१९॥

ॐ ह्रीं शुद्धावलोकाय नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी

निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान।
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अर्हंत जान ॥२०

ॐ ह्रीं प्रज्वलितशुक्लध्यानाग्निजिनाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

आदि-अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्य को जात।
स्वयंसिद्ध परमात्मा, प्रणमूं शुद्ध निपात ॥२१॥

ॐ ह्रीं शुद्धनिपाताय नमः अर्घ्यं०।

लोकालोक अनन्तवें, भाग वसो तुम आन।
ये तुमसों अति भिन्न हैं, शुद्ध गर्भ यह जान ॥२२॥

ॐ ह्रीं शुद्धगर्भाय नमः अर्घ्यं०।

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास।
शुद्ध वास परमात्मा, नमों सुगुण की रास ॥२३॥

ॐ ह्रीं शुद्धवासाय नमः अर्घ्यं०।

अति विशुद्ध निज धर्म में, वसत नशत सब खेद।
परमवास नमि सिद्धको, वासी वास अभेद ॥२४॥

ॐ ह्रीं विशुद्धपरमवासाय नमः अर्घ्यं०।

बहिरंतर द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय।
निरविकार परमात्मा, नमूं नमूं सुखदाय ॥२५॥

ॐ ह्रीं शुद्धपरमात्मने नमः अर्घ्यं०।

हीन अधिक इक देशको, विकल विभाव उछेद।
शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूं सिद्ध निरभेद ॥२६॥

ॐ ह्रीं शुद्धअनन्ताय नमः अर्घ्यं०।

त्रोटक

तुम राग-विरोध विनाश कियो, निजज्ञान सुधारस स्वाद लियो।
तुम पूरण शांति विशुद्ध धरो, हमको इकदेश विशुद्ध करो ।।२७

ॐ ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घ्यं०।

विद पंडित नाम कहावत है, विद अन्त जु अन्तहि पावत है।
निजज्ञान प्रकाश सु अन्त लहो, कुछ अंश न जानन माहिं रहो ।।२८

ॐ ह्रीं शुद्धविदन्ताय नमः अर्घ्यं०।

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो।
मन इन्द्रिय ज्ञान न पावत हो, अति शुद्ध निरूपम ज्योति मही ।।२९

ॐ ह्रीं शुद्धज्योतिजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।५।।

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन-शासन में परसिद्ध कहो ।।३०

ॐ ह्रीं शुद्धनिर्वाणाय नमः अर्घ्यं०।

करि अन्त न गर्भ लियो फिरके, जनमे शिववास जनम धरके।
जिनको फिर गर्भ न हो कबहूं, शिवराय कहाय नमूं अबहूं ।।३१

ॐ ह्रीं शुद्धसन्दर्भगर्भाय नमः अर्घ्यं०।

जग जीवन पाप नशायक हो, तुम आप महा सुखनायक हो।
तुम मंगल मूरति शांति सही, सब पाप नशै तुम पूजत ही ।।३२

ॐ ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घ्यं०।

अथ जयमाल

दोहा

पंच परमपद ईश है, पंचमगति जगदीश।
जगत प्रपंच रहित बसे, नमूं सिद्ध जग ईश ।।
परम ब्रह्म परमातमा, परम ज्योति शिव थान।
परमातम पद पाइयो, नमों सिद्ध भगवान ।।१।।

छन्द कामिनी मोहन

जन्म मरण कष्ट को टारि अमरा भये,
जरादिरोग-व्याधि परिहार अजरा भये।
जय द्विविधि कर्ममलजार अमला भये;
जय दुविधि टार संसार अचला भये॥
जय जगतवास तज जगतस्वामी भये,
जय विनाश नाम थिर परमनामी भये।
जय कुबुद्धिरूप तजि सुबुद्धिरूपा भये,
जय निषधदोष तज सुगुण भूपा भये॥
कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइए,
लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइये।
इन्द्रनागेन्द्र धर शीश तुम पद जजैं,
महा वैरागरसपाग मुनिगण भजैं॥
विघनवन दहन को अघन घन पौन हो,
सघन गुणरास के वास को भौन हो।
शिवतिय वशकरन मोहिनी मंत्र हो,
काल क्षयकार बेताल के यंत्र हो॥
कोटिथित क्लेश को मेटि शिवकर रहो,
उपलकी नकल हो अचल इकथल रहो।
स्वप्न में हूं न निजअर्थ को पावहीं,
जे महा खल न तुम ध्यान धरि ध्यावहीं॥
आपके जाप बिन पाप सब भेंट ही,
पापकी तापकों पाप कब मेंटही।
'संत' निज दास की आस पूरी करो,
जगत ते काढ़ निज चरण में ले धरो॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं०।

घत्ता

जय अमल अनूपं, शुद्ध स्वरूपं, निखिल निरूपं धर्मधरा।
जय विघन नशायक, मंगल दायक, तिहुं जगनायक परमपरा॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

यहां १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ स नमः' मंत्र को जाप करें।

चतुर्थ पूजा

(चौंसठ गुण सहित)

छप्पय

ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रां णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्। पुष्पांजलि क्षिपेत्।

दोहा—सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्मरहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलि क्षिपेत्।

अथाष्टकं

सिद्धगण पूजो हरषाई, चौंसठि गुणनामा विधि माला—
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजोरे भाई ॥ अचरी ॥
त्रिभुवन उपमा वास लखैं, तुम पद-अम्बुज के माई ।
निर्मल जलको धार देहु, अवशेष करण ताई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्री सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोगविनाशनाय जलं ॥१॥

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन माई ।
निजसों गुणाधिक्य संगतिको, लहि मन हर्षाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्री सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं० ॥२॥

क्षीरज धान सुवासित नीरज, करसों छरलाई ।
अंगुलसे तंदुलसों पूजत, अक्षय पद पाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥३॥

धूलिसार छवि हरण विवर्जित, फूलमाल लाई ।
कामशूल निरमूल करणकों, पूजहूं तुम पाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविनाशनाय पुष्पं ॥४॥

भूखा गार अक्षीण रसो हूं, पूरति है नाई ।
चरुलाय तुम पद पूजत हों, पूरन शिवराई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥५॥

दीपनि प्रति तुम पद नित पूजत, शिवमारग दरशाई ।
घोर अंध संसार हरण को, भली सूझ पाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं० ॥६॥

कृष्णागरु कर्पूर पूर घट, अगनी से प्रजलाई ।
उड़े धूम यह, उड़े किधों जर करमन की छाई ।। सिद्ध० ।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं० ।।७।।

मधुर मनोग सु प्रासुक फलसों, पूजों शिवराई ।
यथायोग विधि फलको दे गुण, फलकी अधिकाई ।। सिद्ध० ।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं० ।।८।।

निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई ।
भेंट धरत तुम पद में, पाऊं पद निर-आकुलताई ।। सिद्ध० ।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं० ।।६

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।।
वर दीप माल उजाल धूपायन, रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ।।१।।

ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं ।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुं गुण गेह, द्यो हम शुभमती ।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हंतजिनादिसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं ।

अथ चौसठ गुण अर्घ्य

(चाल अलोचना पाठ)

चउ घाती कर्म नशायो, अरहंत परम पद पायो ।
द्वै धर्म कह्यो सुखकारा, नमूं सिद्ध भए अविकारा ।।१।।

ॐ ह्रीं अरहंत-जिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

संक्लेश भाव परिहारी, भए अमल अवधि बलधारी।
सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना ॥२॥

ॐ ह्रीं अवधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

निर्मल चारित्र समारा, परमावधि पटल उधारा।
केवल पायो तिस कारण, नमूं सिद्ध भये जग तारण ॥३॥

ॐ ह्रीं परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधि के हो स्वामी।
अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमूं सिद्ध भये सुखदाया ॥४॥

ॐ ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

जिस अन्त अवधि को नाहीं, तुम उपजायो पद ताहीं।
निर्मल अवधी गुणधारी, सब सिद्ध नमूं सुखकारी ॥५॥

ॐ ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

तप बल महिमा अधिकाई, बुद्धि कोष्ठ रिद्धि उपजाई।
श्रुत ज्ञान कोष्ठ भंडारी, नमूं सिद्ध भये अविकारी ॥६॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनही बहु अभ्यासी।
यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमूं शिव ईशा ॥७॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धि ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

पदमात्र समस्त चितारे, है रिधि यह पद अनुसारे।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमूं शिवथानी ॥८॥

ॐ ह्रीं पादानुसारिणिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

जो भिन्न-भिन्न इक लारैं, शब्दन सुन अर्थ विचारैं।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमूं सिद्ध भये जगत्राता ॥९॥

ॐ ह्रीं संभिन्नसंश्रोतृऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, बिन गुरुके सहज सरूपा ।
भये स्वयंबुद्ध निज ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ।।१०।।
ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा ।
प्रत्येकबुद्ध गुण धारी, भये सिद्ध नमूं हितकारी ।।११।।
ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्ध-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

गणधर से समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी ।
ज्ञानिनि सिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये ।।१२।।
ॐ ह्रीं बोधितबुद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

मन योग सरलता धारैं, तिस अन्तर भेद उघारैं ।
जो होय ऋजुमति ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ।।१३।।
ॐ ह्रीं ऋजुमति-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

बांके मन की सब बाता, जाने सो विपुल कहाता ।
तुम पाय भये शिवधामी, नमूं सिद्धराज अभिरामी ।।१४।।
ॐ ह्रीं विपुलमति-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

सुर-विद्या को नहीं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं ।
दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो ।।१५।।
ॐ ह्रीं दशपूर्वऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जाने परोक्ष परमानी ।
प्रत्यक्ष लखो तिस सारूं, भये सिद्ध हरो अघ म्हारूं ।।१६।।
ॐ ह्रीं चौदहपूर्व-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

सुन्दरी

ज्योतिषादिक लक्षण जानकैं शुभ अशुभ फल कहत बखानिकैं ।
निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमूं यथा ।।१७
ॐ ह्रीं अष्टांगनिमित्त-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

बहु विधि अणिमादिक ऋद्धि जू, तप प्रभाव भई तिन सिद्धिजू।
निष्प्रयोजन निजपद लीन हैं, नमूँ सिद्ध भये स्वाधीन हैं ॥१८
ॐ ह्रीं विवर्ण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

भू जल जंतु जिय ना हरैं, नमूं ते मुनि शिव कामिनि वरैं।
नैकु नहीं बाधा परिहार हो, नमूं सिद्ध सभी सुखकार हो ॥१९
ॐ ह्रीं विज्ञाहरण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

जंघ पर दो हाथ लगावहीं, अन्तरीक्ष पवनवत जावहीं।
पाय ऋद्धि महामुनि चारणो, यथायोग्य विशुद्ध विहारणो ॥२०
ॐ ह्रीं चारण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

खग समान चलैं आकाश में, लीन नित निज धर्म प्रकाश में।
शुद्ध चारण करि निज सिद्धता, पाइयो हम नमन करैं यथा ॥२१
ॐ ह्रीं आकाशगामिनि-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

वाद विद्या फुरत प्रमानही, वज्रसम परमतगिरि हानही।
सब कुपक्षी दोष प्रगट करैं, स्याद्वाद महाद्युतिको धरैं ॥२२
ॐ ह्रीं परामर्श-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहिं तिस शक्ती हरैं।
ते महामुनि जग सुखदाय जू, हम नमें तिन शिवपद पाय जू ॥२३
ॐ ह्रीं आशीविष-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

जो महाविष अति परचण्ड हो, दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो।
सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमूं उर धारकैं ॥२४
ॐ ह्रीं दृष्टिविषविष-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

अनशनादिक नित प्रति साधना, मरणकाल तईं न विराधना।
उग्र तप करि वसुविधि नासतैं, हम नमें शिवलोक प्रकाशतैं ॥२५
ॐ ह्रीं उग्रतप-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

बढ़ति नित प्रति सहज प्रभावना, उग्र तप करि क्लेश न पावना।
दीप्ति तप करि कर्म जरायकैं, भये सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥२६
ॐ ह्रीं दीप्ततप-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

अन्तराय भये उत्सव बढ़े, बाल चन्द्र समान कला चढ़े ।
वृद्ध तपकी ऋद्धि लहैं यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती ॥२७
ॐ ह्रीं तपोवृद्धि-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

सिंहक्रीडित आदि विधानतें, नित बढ़ावत तप विधि हानतें ।
महामुनीश्वर तप परकाशतें नमूं मुक्त भये जगवासतें ॥२८
ॐ ह्रीं महातपो-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

शिखर-गिरि ग्रीषम,हिम सर-तटैं, तरु निकट पावस निजपद रटैं ।
घोर परिषह करि नाहीं हटैं,भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं ॥२९
ॐ ह्रीं घोरतपो-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

महाभयंकर निमित मिले जहां, निरविकार यती तिष्ठैं तहां ।
महापराक्रम गुणकी खान हैं, नमो सिद्ध जगत सुखदान हैं ॥३०
ॐ ह्रीं घोरगुण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

सघन गुणकी रास महा यती, रत्नराशि समान दिपै अति ।
शेष जिन वर्णन करि थकि रहै, नमूं सिद्ध महापदको लहै ॥३१
ॐ ह्रीं घोरगुणपरिक्रमाणं-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

अतुल वीर्य धनी हन कामको, चलत मन न लखत सुर वाम को ।
बालब्रह्मचारी योगीश्वरा, नमूं सिद्ध भये वसुविधि हरा ॥३२
ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्य-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

सकल रोग मिटैं संस्पर्शतें, महा यतीश्वर के आमर्शतें ।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३२
ॐ ह्रीं आमर्षऋद्धि सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

मूत्रमें अमृत अतिशय बसे, जा परसतैं सब व्याधी नसै ।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्धि नमत सुख पावना ॥३४
ॐ ह्रीं आमौसिय-औषधि-ऋद्धि सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

तन पसीजत जल-कण लगतही, रोग व्याधि सर्व जन भगतही।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३५
ॐ ह्रीं जलोसियऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

हस्त पादादिक नखकेश में, सर्व औषधि हैं सब देशमें ।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३६
ॐ ह्रीं सर्वोसियऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

अडिल्ल

मन सम्बन्धी वीर्य बढ़े अतिशय महा
एक महूरत अन्तर श्रुत चितवन लहा ।
मनोबली यह ऋद्धि भई सुखदाइ जू
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥३७॥
ॐ ह्रीं मनोबली-ऋद्धि सिद्धेभ्यों नमः अर्घ्यं० ।

भिन्न-भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक मुहूरत-अन्तर श्रुत वर्णन करैं ।
बचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥३८॥
ॐ ह्रीं बचनबली-ऋद्धि सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

खड्गासन इक अंग मास द्वैमासलों
अचलरूप थिर रहैं छिनक खेदित न हो ।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजों तिन पांय जू ॥३९॥
ॐ ह्रीं कायबली-ऋद्धि सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

अति अरस चरु क्षीर होय कर धरत ही,
वचन खिरत पर-श्रवण तुष्टता करत ही ।

क्षीरश्रावि यह रिद्धिभई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जूं ॥४०॥
ॐ ह्रीं क्षीरश्रावी-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

रूखे भोजनसे कर मे घृतरस श्रवै,
बचन सुनत परको घृतसम स्वादित ह्वै ।
सर्पितश्रावि यह रिद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४१॥
ॐ ह्रीं सर्पिश्रावी-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

हस्तकमलमें अन्न मधुर रस देत है,
मधुकर सम जिय वचन गंधको लेत है ।
मधुश्रावी यह रिद्धिभई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४२॥
ॐ ह्रीं मधुस्रावी-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

अमृत सम आहार होय कर आयके,
वचनामृत दे सुक्ख श्रवणमें जायके ।
आमियरस यह रिद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४०॥
ॐ ह्रीं आमियरसऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

जिस बासन जिस थान आहार करैं यती,
चक्री सेना खाय अखै होवे अती ।
अक्षीणरसी यह रिद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४४॥
ॐ ह्रीं अक्षीणरस-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

सोरठा

सिद्धरास सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे ।
नमूं ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम है ॥४५॥
ॐ ह्रीं वड्ढमाण सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

रागादिक परिणाम, अन्तरके अरि नाशके ।
लहि अरहंत सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया ॥४६॥
ॐ ह्रीं अरहन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

दो अन्तिम गुणथान, भाव-सिद्ध इस लोक में ।
तथा द्रव्य-शिवथान, सर्व सिद्ध प्रणमूं सदा ॥४७॥
ॐ ह्रीं णमो लोए सर्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी ।
नमूं सिद्ध जिननाह, संतनिके भवभय हरैं ॥४८॥
ॐ ह्रीं भगवते महावीरवड्ढमाणाय नमः अर्घ्यं० ।

क्षपकश्रेणि आरुढ़, निजभावी योगी तथा ।
निश्चय दर्शी अमूढ़, सिद्ध योग सब ही जजों ॥४९॥
ॐ ह्रीं णमो योगसिद्धाय नमः अर्घ्यं० ।

वीतराग परधान, ध्यान करें तिनको सदा ।
सोई ध्येय महान, णमो सिद्ध हम अघ हरो ॥५०॥
ॐ ह्रीं ध्येयसिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

लोक शिखर शिव थान, अचल विराजत सिद्ध जन ।
लोकवास सर्वान, भये सिद्ध प्रणमूं सदा ॥५१
ॐ ह्रीं णमो सव्वसिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय ।
सोई सिद्ध महान, मंगलहेतु नमूं सदा ॥५२॥
ॐ ह्रीं णमो स्वस्तिसिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

तीन लोक के पूज, सर्वोत्तम सुखदाय हैं ।
जिन सम और न दूज, तिनपद पूजों भावयुत ॥५३॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा ।
तातें सिद्ध महान, सर्व पूज्य के पूज्य हो ॥५४॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

परम धरम निज साध, परमातम पद पाइयो ।
सोई धर्म अबाध, पूजत हमको दीजिये ॥५५॥
ॐ ह्रीं परमात्मसिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

सर्व रिद्धि नव निद्ध, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हो ।
निजपद साधत सिद्ध, होत सही तिनको नमो ॥५६॥
ॐ ह्रीं परमसिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

परमागमकी शाख, परम अगम गुणगण सहित ।
सोई मनमें राख, श्रद्धायुत पूजा करो ॥५७॥
ॐ ह्रीं परमागमसिद्धाणं नमः अर्घ्यं० ।

गुण अनंत परकाश, महा विभवमय लसत है ।
आवर्णित पद नाश, ते पूजूं प्रणमूं सदा ॥५८॥
ॐ ह्रीं प्रकाशमानसिद्धाणं नमः अर्घ्यं ।

स्वयं सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाशमय ।
लसत नमूं मन आन, मम उर चिंता दुख हरो ॥५९॥
ॐ ह्रीं णमो स्वयंभूसिद्धाय नमः अर्घ्यं० ।

मन इन्द्रियसों भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर ।
सोई ब्रह्म अखिन्न, साधित सिद्ध भये नमूं ॥६०॥
ॐ ह्रीं णमोब्रह्मसिद्धाय नमः अर्घ्यं० ।

द्रव्य अनन्त गुणात्म, परणामी परसिद्ध के ।
सोई पद निज-आत्म, साधत सिद्ध अनन्त गुण ॥६१॥
ॐ ह्रीं णमो अनन्तगुणसिद्धाय नमः अर्घ्यं० ।

सर्व तत्वमय पर्म, गुण अनंत परमातमा ।
सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनको नमूं ॥६२॥
ॐ ह्रीं णमो परमानन्तसिद्धाय नमः अर्घ्यं० ।

लोक शिखर के वास, पायो अविचल थान निज ।
सर्व लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनको नमों ॥६३॥
ॐ ह्रीं लोकाग्रवासिसिद्धाय नमः अर्घ्यं० ।

काल विभाग अनादि, शास्वत रूप विराजते ।
यातें नहिं सो आदि, नमि अनादि सिद्धान को ॥६४॥
ॐ ह्रीं णमो अनादिसिद्धाय नमः अर्घ्यं० ।

सिद्धन के जु अनन्त गुण, कहि न सके गणराय ।
तिन सिद्धनको मैं जजूं, पूरण अर्घ चढ़ाय ॥
ॐ ह्रीं अनन्त गुणात्मक सिद्धं परमेष्ठि नमः अर्घ्यं० ।

अथ जयमाल

दोहा

तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, जापद करत प्रणाम ।
हम किह मुख वर्णन करें, तिन महिमा अभिराम ॥१॥

चौपाई

जय भवि-कुमुदन मोदन चंदा, जय दिनन्द त्रिभुवन अरविंदा ।
भव-तप-हरण शरण रस-कूपा, मद ज्वर जरन हरण घनरूपा ॥२
अकथित महिमा अमित अथाई, निर-उपमेय सरसता नांई ।
भावलिंग बिन कर्म खिपाई द्रव्यलिंग बिन शिव पद पाई ॥३
नय विभाग बिन वस्तु प्रमाणा, दया भाव बिन निज कल्याणा ।
पंगु सुमेरु चूलिका परसै, गुंग गान आरम्भे स्वर से ॥४

यों अजोग कारज नहीं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई ।
सर्व जैन-शासन जिनमाहीं, भाग अनन्त धरै तुम नाहीं ।।५
गोखुर में नहिं सिंधु समावे, वायस लोक अन्त नहीं पावै ।
तातें केवल भक्ति भाव तुम, पावन करो अपावन उर हम ।।६
जे तुम यश निज मुख उच्चारैं, ते तिहुं लोक सुजस विस्तारैं ।
तुम गुणगान मात्र कर प्रानी, पावै सुगुण महा सुखदानी ।।७
जिन चित ध्यान सलिल तुम धारा, ते मुनि तीरथ है निरधारा ।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवासी, वचन जाल में लेत न फांसी ।।८
जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि ।
अक्षय शिव-स्वरूप श्रिय स्वामी, पूरण निजानन्द विश्रामी ।।९
शरणागत सर्वस्व सुहितकर, जन्म मरण दुख आधि-व्याधि हर ।
'संत भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी ।।१०

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः महार्घ्यं० ।

घृतानन्द

जय जय सुखसागर, सुजस उजागर ,गुणगण आगर, तारण हो ।
जय संत उधारण, विपति विडारण,सुख विस्तारण, कारण हो ।।
तुम गुणगान परम फलदान, सो मंत्र प्रमान विधान करूं ।
जहरी कर्मनि वैरी की कहरी, असहैरी भवकी व्याधि हरूं ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः' मंत्र का जाप करना चाहिए ।
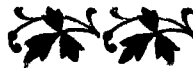
पंचम पूजा

(एक सौ अट्ठाईस गुण सहित)

छप्पय

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे।
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे॥
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर।
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥१॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं अष्टविंशत्यधिकशत—(१२८)गुणसहितविराजमान श्री सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्र स्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टकं

(चाल बारहमासा छन्द)

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकांतमणि, मनतैं श्रवै हुलसधारा हो।
कंज सुवासित प्रासुक जलसौं, पूजूं अंतर अनुसारा हो॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उरधारा हो।
चौसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण सुमिरत ही भवपारा हो॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

सुरगण मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं।
सो चंदन नंदनवन भूषण, तुम पदकमल चढ़ावत हैं॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरन, सुमरत ही भवपारा हो॥
॥लोका०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं ॥२॥

चंपक ही के भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए।
शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुंजधार पद कंज नये॥लोका०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टविंशत्यधिकशतगुण-सहिताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥३॥

मदन वदन दुतिहरन वरन रति, लोचन अलिगण छाय रहे।
पुष्पमाल वासित दिशा । सो, भेंट धरत उर काम दहे॥लोका०

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय क.मवाण विनाशनाय पुष्पं० ॥४॥

चितवन मन, वरणत रसना, रस स्वाद लेत हो तृप्त थये।
जन्मातर हूं की छुधा निवारै, सो नेवज तुम भेंट धरे॥लोका०

ॐ ह्रीं णमो ि द्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टविंशत्यधिकशतगुण-सहिताय क्षुधारोग विनाशनाय नेवेद्यं० ॥५॥

लवमणिप्रभा अनुपम सूर निज शीश धरणकी रास करैं।
या बिन तुच्छ विभव निज जानें, सो दीपक तुम भेंट धरैं॥लोका०

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरष्ठिने अष्टविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीप० ॥६॥

निलंजसा सुरी नभमें ज्यों, ऋषभ भक्ति कर नृत्य कियो।
सो तुम सन्मुख धूप उड़ावत, तिस छविको नहीं भाव लियो॥लोका०

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥७॥

सेव रंगीले अनार रसीले, केलाकी ले डाल फली ।
डाली हू नृपमाली हूँ, नातर प्रासुकताका रीति भली ॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो ।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरन सुमिरित ही भवपारा हो ॥
॥लोका०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥८॥

एकसे एक अधिक सोहत वसु-जाति अर्घ करि चरण नमूं ।
आनंद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमति बमूं ॥लोका०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविशत्यधिकशतगुण-सयुक्ताय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं० ॥९॥

गीता

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्म सब दलमले ।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं,
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापति,
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुं गुण गेह, द्यो हम शुभमति ॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशति अधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं० ॥१०॥

एक सौ अट्ठाईस गुण सहित अर्घ्य

त्रोटक

निरबाध सु तत्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो ।
अति शुद्ध सुभाविक छायक है, नमूं दर्श महासुखदायक है ॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घ्यं० ।

निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न विराधित हो।
निरअंत चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सु ज्ञान प्रमानत है ॥२॥
ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।

सब राग-विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन है।
परमें न कबहूं निज भाव वहै, अति सम्यक्चारित्र नाम यहै ॥३॥
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय नमः अर्घ्यं०।

उतपाद विनाश न बाध धरैं, परनाम सुभाव नहीं निसरै।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहाँ ॥४॥
ॐ ह्रीं अस्तित्वधर्माय नमः अर्घ्यं०।

निज भावनतैं व्यतिरिक्त न हो, प्रणमों गुणरूप गुणात्मन हो।
यह वस्तु सुभाव सदा विलसो, हम पूजत हैं सब पाप नसो ॥५॥
ॐ ह्रीं वस्तुत्वधर्माय नमः अर्घ्यं०।

परमाण न जानत हैं तिनको, छिन रोग न आवत है जिनकों।
अप्रमेय महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥६॥
ॐ ह्रीं अप्रमेयधर्माय नमः अर्घ्यं।

गुणपर्ज प्रमाण दसानित हो, निजरूप न छांड़त हैं कित ही।
जिन वैन प्रमाण सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥७॥
ॐ ह्रीं अगुरुलघुधर्मायनमः अर्घ्यं।

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब चित्त स्वरूप सुजान तिसैं।
मुख चेतनता गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥८॥
ॐ ह्रीं चेतनत्वधर्माय नमः अर्घ्यं।

जिन अंग उपंग शरीर नहीं, जिन रंग प्रसंग सु तीर नहीं।
नभसार अमूरति धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥९॥
ॐ ह्रीं अमूर्तित्वधर्माय नमः अर्घ्यं०।

परको न कदाचित धर्म गहैं, निजधर्म स्वरूप न छांड़त हैं।
अति उत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१०॥
ॐ ह्रीं समकितधर्माय नमः अर्घ्य०।

जितने कछु हैं परिणाम विषें, सब ज्ञान स्वरूप सु जान तिसें।
सुख-ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥११॥

ॐ ह्रीं ज्ञानधर्माय नमः अर्घ्यं०।

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता बिन भेद कही।
निज जीव सुभाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१२॥

ॐ ह्रीं जीवधर्माय नमः अर्घ्यं०।

मनको नहिं वेग लखावत हैं, जिस बिनै नहीं बतलावत हैं।
अति सूक्ष्म भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१३॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मधर्माय नमः अर्घ्यं०।

परघात न आप न घात करैं, इक खेत समूह अनन्त वरैं।
अवगाह सरूप सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१४॥

ॐ ह्रीं अवगाहधर्माय नमः अर्घ्यं०।

अविनाश सुभाव विराजत हैं, बिन बाध स्वरूप सु छाजत हैं।
यह धर्म महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१५॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधधर्माय नमः अर्घ्यं०।

निजसों निजको अनुभूति करैं, अपनों परसिद्ध सुभाव वरैं।
निज ज्ञान प्रतीति सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१६॥

ॐ ह्रीं स्वसंवेदनज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।

निज ज्योति स्वरूप उद्योतमई, तिसमें परदीप्त रहैं नित ही।
यह ताप स्वरूप उधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१७॥

ॐ ह्रीं स्वरूपतापतपसे नमः अर्घ्यं०।

निजऽनंत चतुष्टय राजत हैं, दृग ज्ञान बला सुख छाजत हैं।
यह आप महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत है ॥१८॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयाय नमः अर्घ्यं०।

सुख समकित आदि महागुण को, तुम साधित सिद्ध भये अबहो।
यह उत्तम भाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१६॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वादिगुणात्मकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

दोहा

निश्चय पंचाचार सब, भेद रहित तुम साध।
चेतनकी अति शक्तिमें, सूचत सब निरबाध ॥२०॥

ॐ ह्रीं पंचाचाराचारेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

चौपाई

सब विकलप तजि भेद स्वरूपी, निज अनभूतिमगन चिद्रूपी।
निश्चय रत्नत्रय परकासो, पूजूं भाव भेद हम नासो ॥२१॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयप्रकाशाय नमः अर्घ्यं०।

करण भेद रत्नत्रय धारी, कर्म भेद निज-भाव संवारी।
करता भेद आप परणामी, भेदाभेद रूप प्रणामामी ॥२२॥

ॐ ह्रीं स्वस्वरूपसाधकसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं०।

मनोयोग कृत जिय संसारी, क्रोधारम्भ करत दुखकारी।
तासों रहित सिद्ध भगवाना, अंतर शुद्ध करूं तिन ध्याना ॥२३॥

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसंरम्भमनोगुप्तये नमः अर्घ्यं०।

परके मन क्रोधी संरम्भा, करत मूढ़ नाना आरम्भा।
सिद्धराज प्रणमूं तिस त्यागी, निर्विकल्प निजगुण के भागी ॥२४॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसंरम्भनिर्वकल्पधर्माय नमः अर्घ्यं०।

भुजंगप्रयात

मनोयोग रंभा प्रशंसीक क्रोधा, निजानंद को मान ठाने अबोधा।
महानिंदनी भावको त्याग दीना, निजानंदको स्वाद ही आप लीना॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसंरम्भसानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥२५॥

मनोयोग क्रोधी समारंभ धारी, सदा जीव भोगे महाखेद भारी।
महानंद आख्यातको भाव पायो, नमों सिद्ध सो दोष नाहीं उपायो ॥
ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥२६॥

दोहा

समारम्भ क्रोधित सु मन, परकारित दुख नाहिं।
परमातम पद पाइयो, नमूं सिद्ध गुण ताहिं ॥२७॥
ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं०।

भुजंगप्रयात

समारंभ क्रोधी मनोयोग माहीं, धरे मोदना भाव को जीव ताहीं।
भये आप संतुष्ट ये त्याग भावा, नमूं सिद्धसो दोष नाहीं उपावा ॥२८
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसमारम्भ परमानन्दसंतुष्टाय नमः अर्घ्यं०।

पद्धरी

निज क्रोधित मन आरम्भ ठान, जग जिय दुखमें सुख रहे मान।
सो आप त्याग संक्लेश भाव, भये सिद्ध नमूँ धर हिये चाव ॥२९
ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधारम्भस्वसंस्थानाय नमः अर्घ्यं०।

क्रोधित मनसों आरम्भ हेत, पर प्रेरित निज अपराध लेत।
जग जीवनकी विपरीत रीति, तुम त्याग भये शिव पर पुनीत ॥३०
ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधारम्भयन्धसंस्थानाय नमः अर्घ्यं०।

क्रोधित मनसों आरम्भ देख, जिय मानत है आनन्द विशेष।
तुम सत्य सुखी इह भाव क्षार, भये सिद्ध नमूं उर हर्ष धार ॥३१
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधारम्भसंस्थानाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

मान योग मन रंभमें, वरतत जग जीव।
भये सिद्ध संक्लेश तजि, तिन पद नमूं सदीव ॥३२॥
ॐ ह्रीं अकृतमनोमानारम्भसाधर्माय नमः अर्घ्यं०।

मान उदय मन योगतें, परको रम्भ करान ।
त्याग भये परमातम, नमूं सरन पर हान ॥३३॥
ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसंरम्भअनन्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ।

मान सहित मन रंभमें, जग जिय राखें चाव ।
नमों सिद्ध परमातमा, जिन त्यागो इह भाव ॥३४॥
ॐ ह्रीं नानुमादितमनोमानसंरम्भसुगतभावाय नमः अर्घ्यं० ।

अडिल्ल

समारम्भ परिवर्तमान युत मन धरे ।
विकलपमई उपकरण विधि इकठे करै ॥
महाकष्टको हेत भाव यह ना गहो ।
प्रणमूं सिद्ध अनंत सुखातम गुण लहौ ॥३५॥
ॐ ह्रीं अकृतमनोमानसमारम्भसुखात्मगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करै ।
समारम्भ पर कृत्य करावन विधि वरै ॥
तहां कष्टको हेत भाव यह ना गहो ।
प्रणमूं सिद्ध अनन्तगुणातम पद लहौ ॥३६॥
ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भ-अनन्यगताय नमः अर्घ्यं० ।

जोड़े चित न समाज विविध जिस काजमें ।
समारम्भ तिस नाम सोम जिनराजमें ॥
माने मानी मन आनन्द सु निमित्तसे ।
नमूं सिद्ध हैं अतुल वीर्य त्यागत तिसे ॥३७॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारम्भ-अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं० ।

अशुभकाज परिवर्त नाम आरम्भको ।
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो ॥

जगवासी जिय नितप्रति पाप उपाय हैं।
णमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय है ॥३८॥
ॐ ह्रीं अकृतमनोमानारम्भ-अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं ०।

दोहा

मनो मान आरम्भके, भये अकारित आप।
अतुल ज्ञानधारी भये, नमत नसैं सब पाप ॥३६॥
ॐ ह्रीं अकारितमनोमानारम्भ-अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।
मनो मान आरम्भमें, नानुमोदि भगवंत।
गुण अनन्त युत सिद्ध पद, पूजत हैं नित संत ॥४०॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानारम्भ-अनंतगुणाय नमः अर्घ्यं०।

गीता

जो अशुभ काज विकल्प हो, सरम्भ मनयुत कुटिलता।
कर कर अनादित रंक जिय, बहु भांति पाप उपावता ॥
सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्धब्रह्मस्वरूप हो।
हम पूजि हैं नित भक्तियुत, तुम भक्त वत्सलरूप हो ॥४१
ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासंरम्भब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

मायावी मनतें नहीं, कबहुं आरम्भ कराय।
सिद्ध चेतना गुण सहित, नमूं सदा मन लाय ॥४२॥
ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासंरम्भचेतनाय नमः अर्घ्यं०।
मायावी मनतें कभी, रम्भानन्द न होय।
सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमूं सदा मद खोय ॥४३॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासंरम्भ अनन्यस्वभावाय नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी

मायावी मनतें समारंभ, नहिं करत सदा हो अचल खंभ।
तुम स्वानुभूति रमणीय संग, नित रमन करो धरि मन उमंग ॥४४
ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासमारम्भस्वानुभूतिरताय नमः अर्घ्यं०।

मन वच द्वार उपकरण ठान, विधि समारंभ को नहिं करान।
निज साम्यधर्म में रहो लिप्त, तुम सिद्ध नमों पद धार चित्त ॥४५

ॐ ह्रीं अकारितमनोमाया-समारम्भसाम्यधर्माय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

मायावी मनमें नहीं, समारम्भ आनन्द।
नमों सिद्धपद परमगुरु, पाऊं पद सुखवृन्द ॥४६॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासमारंभगुरवे नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी

बहु विधिकर जोड़ै अशुभ काज, आरम्भ नाम हिंसा समाज।
मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमूं यह विधि हरेय ॥४७॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायाऽऽरम्भपरमशांताय नमः अर्घ्यं०।

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान ॥४८॥

ॐ ह्रीं अकारित मनोमायाऽऽरम्भ-निराकुलाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

मायावी आरम्भ करि, मन में आनन्द मान।
सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान ॥४९॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायाऽऽरम्भ-अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं०।

लोभी मन द्वारे नहीं, करैं सदा समरम्भ।
हम अनन्त-दृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथंभ ॥५०॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसंरम्भ-अनन्तदृगाय नमः अर्घ्यं०।

लोभी मन समरम्भ को, पर सौं नाहिं कराय।
दृगानन्द भावातमा, नमूं सिद्ध मन लाय ॥५१॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसंरम्भदृगानन्दभावाय नमः अर्घ्यं०।

लोभी मन समरंभमें, मान नहिं आनन्द।
नमूं नमूं परमात्मा, भये सिद्ध जगवंद ॥५२॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसंरम्भसिद्धभावाय नमः अर्घ्यं०।

समारम्भ नहिं करत हैं, लोभी मनके द्वार ।
चिदानन्द चिद्देव तुम, नमूं लहूं पद सार ॥५३॥
ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसमारम्भचिद्देवा . नमः अर्घ्यं० ।

पर सों भी पूर्वोक्त विधि, कबहूं नहीं कराय ।
निराकार परमातमा, नमूं सिद्ध हर्षाय ॥५४॥
ॐ ह्रीं अ. ारिमनोलोभसमारम्भ-निराकाराय नमः अर्घ्यं० ।

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित होवे नाहिं ।
चित्सरूप साकारपद, धारत हूं उरमाहिं ॥५५॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसमारम्भसाकाराय नमः अर्घ्यं० ।

रचना हिंसा काजकी, लोभी मनके द्वार ।
नहीं करें हैं ते नमूं, चिदानन्द पद सार ॥५६॥
ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभारम्भचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं० ।

लोभी मन प्रेरित नहीं, परको आरम्भ हेत ।
चिन्मय रूपी पद धरें, नमूं लहूं निज खेत ॥५७॥
ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभारम्भचिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

मन लोभी आरम्भमें, आनन्द लहे न लेश ।
निजपदमें नित रमत हैं, ध्याऊं भक्ति विशेष ॥५८॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारंभस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

अडिल्ल

क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोगको ।
रचना विधि संकल्प नाम सभरंभ सो ।
तामें धरैं प्रवृति पाप उपजावते ।
नमूं सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते ॥५९॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसंरम्भवाग्गुप्तये नमः अर्घ्यं० ।

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावहीं,
वचनयोग करि विधि संरम्भ करावहीं ।

सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो,
नमूं उरानन्द धार चिदानन्द रूप हो ॥६०॥
ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसंरम्भस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

सोरठा

क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो संरम्भमे ।
सो तुम भाव विडार, नमूं स्वानुभव लब्धियुत ॥६१॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसरम्भस्वानुभवलब्धये नमः अर्घ्यं० ।

दोहा

क्रोध सहित वाणी न हीं, समारम्भ परव्रत ।
स्वानुभूति रमणी रमण, नमूं सिद्ध कृतकृत्य ॥६२॥
ॐ ह्री अकृतवचनक्रोधसमारम्भस्वानुभूतिरमणाय नमः अर्घ्यं० ।

समारम्भ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार ।
नमूं सिद्ध इस कर्म बिन, धर्मधरा साधार ॥६३॥
ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारम्भपरमशांताय नमः अर्घ्यं० ।

समारंभ मय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध ।
नमूं सिद्ध या बिन लहो, परम शांति सुख बोध ॥६४॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारंभपरमशांताय नमः अर्घ्यं० ।

मोतियादाम

वैर वचयोग धरैं जियरोष, करैं विधि भेद आरम्भ सदोष ।
तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूं परमामृत तुष्ट अवार ॥६५॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भपरमामृततुष्टाय नमः अर्घ्यं० ।

अकारित बैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार अरम्भ अबोध ।
भये समरूप महारस धार, नमैं हम सिद्ध लहैं भवपार ॥६६॥
ॐ ह्री अकारितवचनक्रोधारम्भसमरसाय नमः अर्घ्यं० ।

दोहा

नानुमोद आरम्भमें, क्रोध सहित वच द्वार ।
परम प्रीति निज आत्मरति, नमूं सिद्ध सुखकार ॥६७॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारम्भपरमप्रीतये मनमः अर्घ्यं० ।

अडिल्ल

वचन द्वार संरम्भ मानयुत जे करैं,
जोड़ करण उपकरण मानसो ऊचरैं ।
नानाविधि दुखभोग निजातमको हरैं,
नमूं सिद्ध या विन अविनश्वर पद धरैं ॥६८॥
ॐ ह्रीं अकृतवचमानसंरम्भ-अविनश्वरधर्माय नमः अर्घ्यं० ।
मान प्रकृति करि उदै करावै ना कदा,
वचनन करि संरम्भ भेद वरणूं यदा ।
मन इन्द्रिय अव्यक्तस्वरूप अनूप हो,
नमूं सिद्ध गुणसागर स्वातमरूप हो ॥६९॥
ॐ ह्रीं अकारित वचनमानसंरम्भ अव्यक्तस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

सोरठा

नानुमोद वच योग, मान सहित संरम्भ मय ।
दुर्लभ इन्द्री भाग, परम सिद्ध प्रणमूं सदा ॥७०॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसंरम्भदुर्लभाय नमः अर्घ्यं० ।

चौपाई

समारम्भ निज वैनन द्वार, करत नहीं है मान संभार ।
ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य है निर-आकार ॥७१॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसमारंभपरमगम्यनिराकाराय नमः अर्घ्यं० ।
वचन प्रवृति मानयुत ठान, समारम्भ विधि नाहिं करान ।
शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमूं सिद्ध उर आनन्द धार ॥७२॥
ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसमारंभपरमस्वभावाय नमःअर्घ्यं० ।

वचन प्रवृति मानयुत होय, समारम्भमय हर्षित सोय।
त्यागत एक रूप ठहराय, नमूं एकत्व गती सुखदाय ॥७३॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनसमारम्भ-एकत्वगताय नमः अर्घ्यं०।
मानी जिय निज वचन उचार, वरतत है आरम्भ मंझार।
परमातम हो तजि यह भाव नमूं धर्मपति धर्मस्वभाव ॥७४॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनमानारम्भ परमात्मधर्मराजधर्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं०।

सोरठा

मानी बोले बैन, पर-प्रेरण आरम्भ में।
सो त्यागो तुम ऐन, शाश्वत सुख आतम नमूं ॥७५॥
ॐ ह्रीं अकारितवचनमानारम्भशाश्वतानन्दाय नमः अर्घ्यं०।
हर्षित वचन उचार, मान सहित आरम्भमय।
सो तुम भाव विडार, निजानन्द रस घन नमूं ॥७६॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानारम्भ-अमृतपूरणाय नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी

धरि कुटिल भाव जो कहत बैन, संरम्भ रूप पापिष्ट एन।
तुम धन्य धन्य यह रीति त्याग, हो बेहद धर्मस्वरूप भाग ॥७७॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासंरम्भ-अनन्तधर्मकरूपाय नमः अर्घ्यं०।
मायायुत वचननको प्रयोग, संरम्भ करावत अशुभ भोग।
तुम यह कलंक नहिं धरो लेश, हो अमृत शशि पूजूं हमेश ॥७८॥
ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासंरम्भ-अमृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं०।
वच मायायुत संरम्भ कीन, सो पापरूप भाषी मलीन।
तिस त्याग अनेक गुणात्मरूप, राजत अनेक मूरत अनूप ॥७९॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासंरम्भ-अनेकमूर्तये नमः अर्घ्यं०।
तुम समारम्भकी विधि विधान, नहिं करत कुटिलता भेद ठान।
हो नित्य निरंजन भाव-युक्त, मैं नमूं सदा संशय विमुक्त ॥८०॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासमारंभनित्यनिरंजनस्वभावाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

मायायुत निज बैनतैं, समारम्भके हेत ।
नहिं प्रेरित परको नमूं, निजगुण धर्म समेत ॥८१॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासमारम्भआत्मैकधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

मायाकरि बोलत नहीं, समारम्भ हर्षाय ।
सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृष नमूं, नमूं सिद्ध मन लाय ॥८२॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासमारम्भ-आत्मैकधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

मायायुत आरम्भ की वचन प्रवृत्ति नशाय ।
नमूं अनन्त अवकाश गुण, ज्ञान द्वार सुखदाय ॥८३॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायारम्भ-अनन्तावकाशाय नमः अर्घ्यं० ।

मायायुत आरम्भ मय, मेंट वचन उपदेश ।
भये अमलगुण ते नमूं, रागद्वेष नहीं लेश ॥८४॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायारम्भ-अमलगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

मायायुत आरम्भ मय, मेंट वचन आनन्द ।
भये अनन्त सुखी नमूं, सिद्ध सदा सुखवृन्द ॥८५॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायारम्भनिरवधिसुखाय नमः अर्घ्यं० ।

अडिल्ल छन्द

जो परिग्रह को चाह लोभ सो मानिये,
विधि-विधान-ठानत संरम्भ बखानिये ।
वचन द्वार नहिं करें नमूं परमातमा,
सब प्रत्यक्षलखें व्यापक धर्मातमा ॥८६॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसंरम्भव्यापकधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

वर्तावन संरम्भ हेत परके तईं,
लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई ।
नमूं सिद्ध पद यह विपरीति सु जिन हरो,
सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण वरो ॥८७॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसंरम्भव्यापकगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

लोभी वच संरंभ हर्ष परकाशनं,
नाना विधि संचरे पाप दुख नाशनं।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपदपाइयो,
नमूं अचलगुणसहित सिद्ध मन भाइयो ॥८८॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसंरम्भ-अचलाय नमः अर्घ्यं०।

सोरठा

समारम्भ के बैन, लोभ सहित पर आसरैं।
तज निरलम्बी ऐन, नमूं सिद्ध उर धारिके ॥८९॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसमारम्भनिरालंबाय नमः अर्घ्यं०।
समारम्भ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें।
पायो अचल स्वदेश, नमूं निराश्रय सिद्ध गुण ॥९०॥
ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसमारम्भनिराश्रयाय नमः अर्घ्यं०।
नानुमोद वच लोभ, समारम्भ परवृत्त में।
नमूं तिन्हैं तजि लोभ, नित्य अखण्ड विराजतें ॥९१॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारम्भ-अखण्डाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

लोभ सहित आरम्भ को, करत नहीं व्याख्यान।
नूतन पंचम गति लहो, नमूं सिद्ध भगवान ॥९२॥
ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभारम्भपरीतावस्थाय नमः अर्घ्यं०।
लोभ वचन आरम्भ को, कहत न पर के हेत।
समयसार परमातमा, नमत सदा सुख देत ॥९३॥
ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भसमयसाराय नमः अर्घ्यं०।

सोरठा

नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरम्भमय।
अजर अमर सुखदाय, नमूं निरन्तर सिद्धपद ॥९४॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भनिरन्तराय नमः अर्घ्यं०।

अडिल्ल

क्रोधित रूप भयंकर हस्तादिक तनी,
करत समस्या सो संरम्भ प्रकाशनी।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तदा,
दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमूं सदा ॥९५॥
ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसंरम्भकायगुप्तये नमः अर्घ्यं०।

सोरठा

पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित संरम्भ तज।
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूं सदा ॥९६॥
ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसंरम्भ शुद्धकायाय नमः अर्घ्यं०।
हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय संरम्भ में।
त्यागत भये अकाय, नमूं सिद्ध पद भावयुत ॥९७॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसंरम्भ-अकायाय नमः अर्घ्यं०।
समारम्भ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोध की।
स्वै गुणपर्य समेट, भक्ति सहित प्रणमूं सदा ॥९८॥
ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भस्वान्वयगुणाय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

समारम्भ विधि क्रोध युत, तनसों नहीं कराय।
नित-प्रति रति निजभाव में, बंदूं तिनके पांय ॥९९॥
ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भभावरतये नमः अर्घ्यं०।
समारम्भ सो कायसों, क्रोध सहित परसंस।
स्वै अभिन्न पद पाइयो, नमूं त्याग सरवंस ॥१००॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितकाय क्रोधसमारम्भस्वान्वयधर्माय नमः अर्घ्यं०।
क्रोधित कायारम्भ तजि, परसों रहित स्वभाव।
शुद्ध द्रव्य में रत नमूं, निज सुख सहज उपाव ॥१०१॥
ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधारम्भशुद्धद्रव्यरताय नमः अर्घ्यं०।

क्रोधित कायारम्भ नहिं, रंच प्रपंच कराय ।
पंचरूप संसार हनि, नमूं पंचमगति राय ॥१०२॥
ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधारम्भसंसार-छेदकाय नमः अर्घ्यं० ।
क्रोधित कायरम्भ में हर्ष विषाद विडार ।
अनेकांत वस्तुत्व गुण, धरैं नमों पद सार ॥१०३॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारम्भजैनधर्माय नमः अर्घ्यं० ।
मान सहित संरम्भ की, तनसों रचना त्याग ।
पर प्रवेश बिन रूप जिन, लियो नमूं बड़भाग ॥१०४॥
ॐ ह्रीं अकृतकायमानसंरम्भस्वरूपगुप्तये नमः अर्घ्यं० ।
मान उदय संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय ।
निज कृत पर उपकार बिन, लियो नमूं तिन पाय ॥१०५॥
ॐ ह्रीं अकारितकायमानसंरम्भनिजकृतये नमः अर्घ्यं० ।
मान सहित संरम्भ में, तनसों हर्ष न लेश ।
ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूं अशेष ॥१०६॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसंरम्भ-ध्येयभावाय नमः अर्घ्यं० ।
मदयुत तनसों रंच भी, समारम्भ विधि नांहि ।
परमाराधन योगपद, पायो प्रणमूं तांहि ॥१०७॥
ॐ ह्रीं अकृतकायमानसमारम्भ-परमाराधनाय नमः अर्घ्यं० ।
समारम्भ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय ।
ज्ञानानन्द सुभाव युत, प्रणमूं शीश नवाय ॥१०८॥
ॐ ह्रीं अकारितकायानसमारम्भानन्दगुणाय नमः अर्घ्यं० ।
समारम्भ मय विधि सहित, तनसों हर्ष न होय ।
निजानन्द नन्दित तिन्हैं, नमूं सदा मद खोय ॥१०९॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसमारम्भस्वानन्दानन्दिताय नमः अर्घ्यं० ।

अर्द्ध चौपाई

अकृत मानारम्भ शरीर, पर अनिंद्य बन्दूं धर धीर ॥११०॥
ॐ ह्रीं अकृतकायमानारम्भसंतोषाय नमः अर्घ्यं० ।

कायारम्भ अकारित मान, स्वस्वरूप-रत बन्दूं तान ॥१११॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमानारम्भस्व-स्वरूपरताय नमः अर्घ्यं० ।

मानारम्भ अनन्दित काय, प्रणमूं विमल शुद्ध पर्याय ॥११२॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानारम्भशुद्धपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ।

दोहा

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों करत न आप ।
गुप्त निजामृत रस लहैं, नमूं तिन्हैं तज पाप ॥११३॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासंरम्भ-अमृतगर्भाय नमः अर्घ्यं० ।

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय ।
मुख्य धर्म चैतन्यता विलसै, प्रणमूं पाय ॥११४॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासंरम्भचैतन्याय नमः अर्घ्यं० ।

मायायुत संरम्भ मय, नानुमोदयुत काय ।
वीतराग आनन्द पद, समरस भावन भाय ॥११५॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासंरम्भ-समरसीभावाय नमः अर्घ्यं० ।

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद ।
बन्ध दशा निज पर द्विविधि, नमत नसै भव खेद ॥११६॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भबंधच्छेदकाय नमः अर्घ्यं० ।

समारम्भ तन कुटिलसों, भये अकारित स्वामि ।
निज परिणति परिणमन बिन, गुण स्वातन्त्र नमामि ॥११७॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासमारम्भस्वातंत्र्यधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

नानुमोदित तन कुटिलता, समारम्भ विधि देव ।
गुण अनन्त युत परिणमूं धर्म समूही एव ॥११८॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भधर्मसमूसहाय नमः अर्घ्यं० ।

मायायुत निज देहसों, नहीं आरम्भ करेह ।
परमातम सुख अक्ष-बिन, पायो बन्दूं तेह ॥११९॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायारम्भपरमात्मसुखाय नमः अर्घ्यं० ।

मायारम्भ शरीर करि, परसों नहीं करान ।
निष्ठातम स्वस्थित नमूं सिद्धराज गुणखान ॥१२०॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायारम्भनिष्ठात्मने नमः अर्घ्यं० ।

मायारम्भ शरीरसों, नानुमोद भगवन्त ।
दर्शज्ञानमय चेतना, सहित नमें नित 'सन्त' ॥१२१॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायारम्भचेतनाय नमः अर्घ्यं० ।

अर्द्ध पद्धड़ी

संरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग ॥१२२

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसंरम्भपरमचित्परिणताय नमः अर्घ्यं० ।

संरम्भ अकारित लोभ देह, निज आतम रत स्वसमय तेह ॥१२३

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसंरम्भ-स्वसमयरताय नमः अर्घ्यं० ।

संरम्भ लोभ तन हर्ष नाश, नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश ॥१२४

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसंरम्भ-व्यक्तधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

सोरठा

लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाशके ।
ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजूं सिद्धपद ॥१२५॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भ-नित्यसुखाय नमः अर्घ्यं० ।

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि ।
पायो पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजूं सदा ॥१२६॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

पूर्ववर्तनानन्द, परिग्रह इच्छा मेटिकें ।
पायो शौच स्वछन्द, नमूं सिद्ध पद भक्ति युत ॥१२७॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

दोहा

काय द्वार आरम्भकी, लोभ उदय विधि नाश ।
नमों चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश ॥१२८॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभारम्भचिदात्मने नमः अर्घ्यं० ।

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय।
निज अवलंबित पद लियो, नमूं सदा तिन पाय ॥१२९॥
ॐ ह्रीं अकारितकायलोभारम्भ-निराबम्बाय नमः अर्घ्यं०।

लोभी तन आरम्भ में, आनन्द रीती मेंट।
नमूं सिद्ध पद पाइयो, निज आतम गुण श्रेष्ठ ॥१३०॥
ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभारम्भात्मने अर्घ्यं०।

सवैया

जेते कछु पुदगल परमाणु शब्दरूप
भये हैं, अतीत काल आगे होनहार हैं।
तिनको अनंत गुण करत अनंतबार,
ऐसे महाराशि रूप धरैं विसतार हैं॥
सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातमके,
मानो गुण गण उचरन अर्थधार हैं।
तौ भी इक समयके अनंत भाग अनंदको,
कहत न कहैं हम कौन परकार हैं॥
ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

अथ जयमाल

दोहा

शिवगुण सरधा धार उर, भक्ति भाव है सार।
केवल निज आनन्द करि, करूं सुजस उच्चार॥

पद्धड़ी

जय मदन कदन मन करण नाश, जय शांतिरूप निज सुख विलास।
जय कपट सुभट पट करन सूर, जय लोभ क्षोभ मद दम्भ चूर ॥१
पर-परणतिसों अत्यंत भिन्न, निज परिणतिसों अति ही अभिन्न।
अत्यंत विमल सब ही विशेष, मल लेश शोध राखो न शेष ॥२

मणि दीप सार निर्विघन ज्योति, स्वाभाविक नित्य उद्योत होत।
त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, संपूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड ॥३
मुनि-मन-मंदिर को अंधकार, तिस ही प्रकाशसौं नशत सार।
सो सुलभ रूप पावै निजार्थ, जिस कारण भव-भव भ्रमे व्यर्थ ॥४
जो कल्प-काल में होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध।
भवि पतितन को उद्धार हेत, हस्तावलंब तुम नाम देत ॥५
तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर सरीख नहीं पार पाह।
जो भवदधि पार अभव्य रास, पावे न वृथा उद्यम प्रयास ॥६
जिन-मुख द्रहसों निकसी अभंग, अति वेग रूप सिद्धान्त गंग।
नय-सप्त-भंग-कल्लोल मान, तिहुं लोक वही धारा प्रमान ॥७
सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढ़त आनन्द विशाल।
यातें जग में तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम ॥८॥
सो तुम ही सों है शोभनीक, नातर जल सम जु वहै सु ठीक।
निज पर आतमहित आत्म-भूत, जबसे है जब उतपत्ति सूत ॥९
ज्यों महाशीत ही हिम प्रवाह, है मेटन समरथ अग्नि दाह।
त्यों आप महा मंगलस्वरूप, पर विघन विनाशन सहज रूप ॥१०
है 'सन्त' दीन तुम भक्ति लीन, सो निश्चय पावै पद प्रवीण।
तातें मन-वच-तन भाव धार, तुम सिद्धनकूं मम नमस्कार ॥११

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अर्हं अष्टाविंशत्यधिकशत-दलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

दोहा

जो तुम ध्यावें भावसों, ते पावें निज भाव।
अगनि पाक संयोग करि, शुद्ध सुवर्ण उपाव ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

यहां १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ स नमः' मंत्र को जाप करें।

षष्ठम पूजा

(दो सौ छप्पन गुण सहित)

छप्पन

ऊरध अधो सु रेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै ।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ।।
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ।।११।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये नमः, श्री सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् । पुष्पांजलिंक्षिपेत् ।

दोहा

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग ।
सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ।।२।।

इति यन्त्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अथाष्टकं

गीता

अति नम्रता तिहुं योगमें निज भक्ति निर्मल भावहीं ।
यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं ।।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं ।
द्वै अर्द्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसंयुक्ताय जन्मजरारोगविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

अति वास विषय न वासमायुत मलय शील सुभावहीं ।
अरु चंदनादि सुगन्ध द्रव्य मनोज्ञ प्रासुक लावहीं ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पंचाशदधिकद्विशत-गुणसहिताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ।।२।।

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं ।
तिस सार अक्षय अखय स्वच्छ सुवास पुंज बनावहीं ।। यह उ०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पंचाशदधिकगुण-सहिताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ।।३।।

मन पाग भक्त्यनुराग आनन्द ताग माल पुरावही ।
तिस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागबास सु लावही ।।यह उभय०

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पंचाशदधिकगुणसहिताय कामवाणविनाशनाय पुष्पं० ।।४।।

जिन भक्ति रसमें तृप्तता मन आन स्वाद न चावहीं ।
अंतर चरू बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावहीं ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पंचाशदधिकगुणसहिताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ।।५।।

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावही ।
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभाष भेंट धरावही ।।यह उभय०

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पचाशदधिकगुणसहिताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं० ।।६।।

आनन्द धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र सु छावहीं ।
गंधित दरव शुभ घ्राण प्रिय अति अग्नि संग जरावहीं ।।यह उ०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पचाशदधिकगुणसहिताय अष्टकर्मदहनाय धूपं० नि० ।।७।।

शुभ चिंतवन फल विविध रस युत भक्ति तरु उपजावही ।
रसना लुभावन कलपतरुके सुर असुर मन भावही ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पंचाशदधिकगुणसहिताय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ।।८।।

समकित विमल वसु अंग युत करि अर्घ अन्तर भावही ।
वसु दरव अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावही ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं ।
द्वै अर्द्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पंचाशदधिकद्विशत-गुणसंयुक्ताय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं० ॥६॥

गीता

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ॥
वर दीपमाल उजाल, धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं ॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती ॥
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुं गुण गेह, द्यो हम शुभमति ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये षड्पचाशदधिक द्विशत-गुणसंयुक्ताय पूर्णार्घ्यं० ।

दो सौ छप्पन गुण अर्घ्य

चौपाई

मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरंजन विधि संसारा ।
तिस हनि समरथ अतिशयरूपा, केवल पाय नमूं शिव भूपा ॥१

ॐ ह्रीं चिरन्तरसंसारकारण-ज्ञाननिर्द्धूतोद्भूतकेवलज्ञानातिशयसंपन्नाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं० ।

मन-इन्द्रिय निमित्त मतिज्ञाना, योग देश तिष्ठत पद जाना ।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥२॥

ॐ ह्रीं अभिनिबोधवारकविनाशकाय नमः अर्घ्यं० ।

द्वादश अंगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद बखाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥३॥
ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुतावरणीकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

है असंख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञान के भेद सु तेते।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥४॥
ॐ ह्रीं असंख्यभेदलोक-अवधिज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

है असंख्य परमान प्रमाना, मनपर्यय के भेद बखाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥५॥
ॐ ह्रीं असंख्यप्रकारमनःपर्ययज्ञानावरणकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञानं, सत स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमानं।
केवल आवर्णी विधि नाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥६॥
ॐ ह्रीं निखिलरूप-गुणपर्याय-बोधककेवलज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

द्वारपती भूपति के ताईं, रोक रहै देखन दे नाहीं।
सोई दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥७॥
ॐ ह्रीं सकलदर्शनावरण कर्म विनाशाय अर्घ्यं०।

मूर्तीक पदको प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवै परकाशन।
चक्षु-दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वाज्ञन प्रकाशो ॥८॥
ॐ ह्रीं चक्षुदर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

दृग बिन अन्य इन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उघारे।
अदृग-दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥९॥
ॐ ह्रीं अचक्षुदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घ्यं०।

देश-काल-द्रव-भाव प्रमानं, अवधि दर्श होवे सब ठानं।
अवधि-दर्श-आवरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥१०॥
ॐ ह्रीं अवधिदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घ्यं०।

बिन मर्याद सकल तिहु काल, होय प्रकट घटपट तिह हाल ।
केवल दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥११॥

ॐ ह्रीं केवलदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घ्य० ।

बैठे खड़े पड़े घुम्मरिया, देखे नहीं निद्राकी विरिया ।
निद्रा दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥१२॥

ॐ ह्रीं निद्राकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

सावधानि कितनी की जावे, रंच नेत्र उघड़न नहीं पावे ।
निद्रा निद्रावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥१३॥

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

मंदरूप निद्रा का आना, अवलोके जाग्रतहि समाना ।
प्रचला दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥१४॥

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

मुखसों लार बहै अति भारी, हस्त पाद कंपत दुखकारी ।
प्रचला-प्रचला वर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥१५॥

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

सोता हुआ करै सब काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा ।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥१६॥

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जे पदार्थ हैं इन्द्रिय योग, ते सब वेदे जिय निज जोग ।
सोई नाम वेदनी होई, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोई ॥१७॥

ॐ ह्रीं वेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

रतिके उदय भोग सुखकार, पावे जिय शुभ विविध प्रकार ।
साता भेद वेदनी होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥१८॥

ॐ ह्रीं सातावेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार ।
एही भेद असाता होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥१९॥

ॐ ह्रीं असातावेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

ज्यों असावधानी मदपान, करत मोह विधितैं सो जान ।
ता विधि करि निज लाभ न होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ।।२०
ॐ ह्रीं मोहकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जाके उदय तत्व परतीत, सत्य रूप नहीं हो विपरीत ।
पंच भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ।।२१।।
ॐ ह्रीं मिथ्यात्वकर्मविनाशकाय नमः अर्घ्यं० ।

प्रथमोपशम समकित जब गले, मिथ्या समकित दोनों मिले ।
मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ।।२२।।
ॐ ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्वकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं ।

दर्शन में कुछ मल उपजाय, करै समल, नहिं मूल नसाय ।
सम्यक-प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ।।२३।।
ॐ ह्रीं सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्वरहिताय नमः अर्घ्यं ।

धर्म-मार्ग में उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष ।
यह अनन्त-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ।।२४।।
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धोक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ्य ० ।

देव-धर्म-गुरुसों अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान ।
यह अनन्त अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ।।२५।।
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धोमानकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

छलसों धर्म रीति दलमलै, उदय होय मिथ्या जब चलै ।
यह अनन्त अनुबन्ध निवार, प्रणमूं सिद्ध महासुखकार ।।२६।।
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धोमायाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

लोभ उदय निर्मालय दर्व, भक्षै महानिंद मति सर्व ।
यह अनन्त अनुबन्ध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ।।२७।।
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धोलोभकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

सुन्दरी

क्रोध करि अणुव्रत नहि लीजिए, चरितमोह प्रकृति सु भनीजिए ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ।।२८।।
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

मान करि अणुव्रत न हो कदा, रहै अव्रत युत दर्शन सदा।
है अप्रत्यख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥२९॥
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमानकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्रताको जहं उद्योत है।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३०॥
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

मोह लोभ चरित जे जिय वसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसे।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३१॥
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

अडिल्ल छन्द

प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरे।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥३२॥
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणक्रोधविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है।
जास उदय पूरणसंयम अव्यक्त है।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥३३॥
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमानरहिताय नमः अर्घ्यं०।

प्रत्याख्यानी माया मुनि-पदकों हतै,
श्रावकव्रत पूरण नहीं खंड़े जासतैं।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥३४॥
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायारहिताय नमः अर्घ्यं०।

श्रावक पदमें जास लोभको वास है,
प्रत्याख्यानी श्रुतमें संज्ञा तास है।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥३५॥
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभरहिताय नमः अर्घ्यं०।

भुजंगप्रयात

यथाख्यात चारित्रको नाश कारा,
महाव्रत को जासमें हो उजारा।
यही संज्वलन क्रोध सिद्धांत गाया,
नमूं सिद्ध के चरण ताको नसाया ॥३६॥
ॐ ह्रीं संज्वलनक्रोधरहिताय नमः अर्घ्यं०।
रहै संज्वलन रूप उद्योत जेते,
न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते।
यही संज्वलन मान सिद्धांत गाया,
नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ॥३७॥
ॐ ह्रीं संज्वलनमानरहिताय नमः अर्घ्यं०।
बहै संज्वलन की जहां मन्द धारा,
लहै है तहां शुक्लध्यानो उभारा।
यही संज्वलन माया सिद्धांत गाया,
नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ॥३८॥
ॐ ह्रीं संज्वलनमानरहिताय नमः अर्घ्यं०।
जहां संज्वलन लोभ है रंच नाहीं,
निजानन्द को वास होवे तहां ही।
यही संज्वलन लोभ सिद्धांत गाया,
नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ॥३९॥
ॐ ह्रीं संज्वलनलोभरहिताय नमः अर्घ्यं०।

मोदक

जा करि हास्य भाव जुत लहातहिं, हास्य किये परको यह पातहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं ।।४०

ॐ ह्रीं हास्यकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

प्रीति करै पर सों रति मानहिं, सो रति भेद विधि तिस जानहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं,शीश नमं तुमको धरि हाथहिं ।।४१

ॐ ह्रीं रतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जो परसों परसन्न न हो मन, आरति रूप रहै निज आनन ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं,शीस नमूं तुमको धरि हाथहिं ।।४२

ॐ ह्रीं अरतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जा करि पावत इष्ट वियोगहिं, खेदमई परिणाम सु शोकहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूं तुमको धरि हाथहिं ।।४३

ॐ ह्रीं शोककर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

हो उद्वेग उच्चाटन रूपहिं, मन तन कंपित होत अरूपहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं,शीस नमूं तुमको धरि हाथहिं ।।४४

ॐ ह्रीं भयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

सवैया

जो परको अपराध उघारत, जो अपनो कछु दोष न जाने ।
जो परके गुण औगुण जानत, जो अपने गुण को प्रगटाने ।।
सो जिनराज बखान जुगुप्सित, है जियनो विधिके वश ऐसो ।
हे भगवंत ! नमूं तुमको, तुम जीति लियो छिन में अरि तैसो ।।४५

ॐ ह्रीं जुगुप्साकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जो नर नारि रमावन को, निजसों अभिलाष धरै मनमाहीं ।
सो अति हो परकाश हिये नित, काम को दाह मिटै छिनमाहीं ।।

सो जिनराज बखान नपुंसक, वेद हनो विधिके वश ऐसो ।
हे भगवंत ! नमूं तुमको तुम जीति लियो छिन अरि तैसो ॥४६॥

ॐ ह्रीं नपुंसकवेदरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरन से कछु आनन्द माने ।
किंचित काम जगै उर में नित, शांति सुभावन की सुधि ठाने ॥
सो जिनराज, बखानत है, नर-वेद हनो विधिके वश ऐसो ।
हे भगवंत ! नमूं तुमको तुम,जीत लियो छिन में अरि तैसो ॥४७॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जो नर संग रमें सुख मानत, अन्तर गूढ़ न जानत कोई ।
हाव विलास हि लाज धरै मन, आतुरता करि तृप्त न होई ॥
सो जिनराज बखानत है, तिय-वेद हनो विधिके वश ऐसो ।
हे भगवंत! नमूं तुमको तुम, जीत लियो छिन में अरि तैसो ॥४८॥

ॐ ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

बसन्ततिलका

आयु प्रमाण दृढ़ बन्धन और नाहीं,
गत्यानुसार थिति पूरण करण नाहीं ॥
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदू तुम्हें तरणकारण जोर हाथा ॥४९॥

ॐ ह्रीं आयुकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥४९॥

जो है कलेश अवधि सब होत जासों,
तेतीस सागर रहे थिति नर्क तासों ।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वन्दूं तुम्हें तरणकारण जोर हाथा ॥५०॥

ॐ ह्रीं नरकायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५०॥

याही प्रकार जितने दिन देव देही,
नासै अकाल नहिं जे सुर आयु से ही ।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वन्दूं तुम्हें तरणतारण जोर हाथा ॥५१॥
ॐ ह्रीं देवायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५१॥

जासों करें त्रियंक् की थिति आउ पूरी,
सोई कहो त्रिजग आयु महा लघूरी ।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वन्दूं तुम्हें तरणकारण जोर हाथा ॥५२॥
ॐ ह्रीं तिर्यंचायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५२॥

जेते नरायु विधि दे रस आप जाको,
तेते प्रजाय नर रूप भुगाय ताकों ।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वन्दूं तुम्हें तरणकारण जोर हाथा ॥५३॥
ॐ ह्रीं मनुष्यायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५३॥

जो करे जीवको बहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार ।
सो नामकर्म तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५४
ॐ ह्रीं नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जासों उपजे तिर्यंच जीव, रहै ज्ञानहीन निर्बल सदीव ।
सो तिर्यग्गति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५५॥
ॐ ह्रीं तिर्यंचगातिरहिताय नमः अर्घ्य० ।

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय ।
सो नरकगती तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५६॥
ॐ ह्रीं नरकगतिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय ।
सो देवगती तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५७॥
ॐ ह्रीं देवगतिकमरहिताय नमः अर्घ्य० ।

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीच ऊंच ताको उद्योत ।
सो मानुष गति तुम नाश कीन,मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५८

ॐ ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

कामिनीमोहन

एक ही भाव सामान्यका पावना, जीवकी जातिका भेद सो गावना ।
होत जो थावरा एक इन्द्री कहो,पूजहूं सिद्धके चरण ताको दहो ॥५९

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५९॥

फर्सके साथमें जीभ जो आ मिले, पांयसों आपने आप भूपर चले ।
गामिनी कर्मसो तीन इन्द्री कहो,पूजहूं सिद्धके चरण ताको दहो ॥६०

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

नाक हो और दो आदिके जोड़ में, हो उदय चालना योगसों लोड में ।
गामिनी कर्मसो तीन इन्द्री कहो,पूजहूं सिद्धके चरणताको दहो ॥६१

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६१॥

आंख हो और नाक हो जीभ हो फर्श हो,
कान के शब्द का ज्ञान जामें न हो ।
गामिनी कर्म सों चार इन्द्री कहो,
पूजहूं सिद्ध के चरण ताको दहो ॥६२॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६२॥

कान भी आ मिले जीव की जाति में,
हो असंज्ञी सुसंज्ञी दो भांति में ।
गामिनी कर्म की पंच इन्द्री कहो,
पूजहूं सिद्ध के चरण ताको दहो ॥६३॥

ॐ ह्रीं पंचेंद्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६३॥

लावनी

हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्मकी प्रकृति भनी ।
लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृतिके उदय तनी ॥
भये अकाय अमूरति आनन्द,-पुंज चिदातम ज्योति बनी ।
नमूं तुम्हें कर जोर युगल तुम सकल रोगथल काय हनी ॥६४॥

ॐ ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥६४॥

निज शरीर को अणिमादिक करि, बहु प्रकार परणमाय वरे ।
वैक्रिय तन कहलावे है यह, देव नारकी मूल धरे ॥भये अकाय०॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥६५॥

धवल वर्ण शुभ योगी संशय-हरण अहारकका पुतला ।
जो प्रमत्त गुणथानक मुनिके,देह औदारिकसों निकला ॥भये अ०

ॐ ह्रीं आहारकशरीररहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६६॥

पुद्गलीक तन कर्म वर्गणा, कारमाण परदीप्त करण ।
तैजस नाम शरीर शास्त्रमें, गावत हैं नहिं तेज वरण ॥भये अ०॥

ॐ ह्रीं तैजसशरीररहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६७॥

पुद्गलीक वरगणा जीवसों, एक क्षेत्र अवगाही है ।
नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहैं ॥भये अ०॥

ॐ ह्रीं कार्माणशरीररहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६८॥

इन्द्रवज्रा

जेते प्रदेशा तन बीच आवें, सारे मिलें जोड़ न छिद्र पावें ।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ॥

ॐ ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६९॥

ऐसे प्रकारा तनमें आहारा, संधी मिलावा कर वेतसारा ।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ॥

ॐ ह्रीं आहारकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥७०॥

वैक्रिय के जोड़ जो होत ताही, संघातनामा जिन बैन माहीं।
संघात नामा जिय देह जानो,पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म मानो ॥
ॐ ह्रीं वैक्रियसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥७१॥

तेजस्सके अंग उपंग सारे, संधी मिलाया तिस मांहि धारे।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ॥७२
ॐ ह्रीं तैजससंघातरहिताय नमः अर्घ्यं०।

ज्ञानादि आवर्ण जो कर्म-काया,ताको मिलाया श्रुत मांहि गाया।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ॥७३
ॐ ह्रीं कार्मणसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं०।

चौबोला

पुद्गलीक वर्गणा जोग तैं जब जिय करत अहारा।
प्रणवावे तिनको एकत्र करि, बंध उदय अनुसारा ॥
यही औदारिक बन्धन तुमने, छेद किये निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥७४॥
ॐ ह्रीं औदारिकबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं०।

वैक्रियक तनु परमाणु मिल, परस्परा अनिवारा।
हो स्कन्ध रूप पर्याई, यह बन्धन परकारा ॥
वैक्रियिक तनु बन्धन तुमने छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम जजूं भक्ति उरधारा ॥७५॥
ॐ ह्रीं वैक्रियिकबन्धनच्छेदकाय नमः अर्घ्यं०।

मुनि शरीरसों बाहिज निसरे, संशय नाशनहारा।
ताको मिले प्रदेश परस्पर, हो सम्बन्ध अवारा ॥
यही अहारक बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम जजूं भक्ति उरधारा ॥७६॥
ॐ ह्रीं आहारकबन्धनच्छेदकाय नमः अर्घ्यं०।

दीप्त जोती जो कारमाणको, रहै निरन्तर लारा ।
जहां तहां नहि बिखरें किन ज्यों, बहै एक ही धारा ।।
तैजस नामा बंधन तुमने छेद कियो निरधारा ।
भये अबंध अकाय अनूपम जजूं भक्ति उरधारा ।।७७।।

ॐ ह्रीं तैजसबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, पुद्गल जाति पसारा ।
एक क्षेत्र अवगाही जियको, दुविधि भाव करतारा ।।
कारमाण यह बंधन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भये अबंध अकाय अनूपम जजूं भक्ति उरधारा ।।७८।।

ॐ ह्रीं कार्माणबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

रोला

तन आकृत संस्थान आदि, समचतुरस्र बखानो,
ऊपर तले समान यथाविधि सुन्दर जानो ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूं भव्यनिप्रति सुखप्रद ।।७९।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानविमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ।

ऊपर से हो थूल तले हो न्यून देह जिस,
परिमण्डलनिग्रोध नाम वरणो सिद्धांत तिस ।।यह विप०।।८०।।

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्य० ।

नीचेसे हो थूल न्यून होवे उपराही,
बमई सम वामीक देह जिन आज्ञा माहीं ।।यह विपरीत०।।८१।।

ॐ ह्रीं वामीकसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जो कूबड़ आकार रूप पावे तन प्राणी,
कुब्ज नाम संस्थान ताहि वरणैं जिन वानी ।।यह विप०।।८२।।

ॐ ह्रीं कुब्जकनामसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

लघुसों लघु ठिगना रूप एम तन होवे जाको,
वामनहै परसिद्धलोक मे कहिये ताको ।।यह विपरीत०।।८३।।

ॐ ह्रींवामन संस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जित तित बहु आकार कहीं नहिं हो यकसार ,
हुंडक अति असुहावन पाप फल प्रगट उघारू ।। यह विष०।।८४।।
ॐ ह्रीं हुंडकसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

लक्ष्मीधरा

जीव आपभावसों जु कर्मकी क्रिया करेत,
अंग वा उपंग सो शरीर के उदय समेत ।
सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास ।।८५।।
ॐ ह्रीं औदारिकांगोपांगरहिताय नमः अर्घ्यं०

देव नारकी शरीर मांस रक्त से न होत,
तास को अनेक भांति आप देसके उद्योत ।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास ।।८६।।
ॐ ह्रीं वैक्रियिकआंगोपांगरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

साधुके शरीर मूल-तें कढ़े प्रशंसयोग,
संशय को विध्वंसकार केवली सु लेत भोग ।
आहारक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास ।।८७।।
ॐ ह्रीं आहारकांगोपांगरहिताय नमः अर्घ्यं०

गीता

संहनन बन्धन हाड़ होय अभेद वज्र सो नाम है,
नाराच कीली वृषभ डोरी बांधने की ठाम है ।
है आदि को जो संहनन जिम वज्र सब परकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ परम आनन्दधार हो ।।८८।।
ॐ ह्रीं वज्रर्षभनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

ज्यों वज्रकी कीली ठुकी हो हाड़ संधि में जहां,
सामान्य वृषभ जु जेवरी ताकरि बंधाई हो तहां।
है दूसरा संहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो,
यह त्याग बंध-प्रबंध निवसौ परम आनन्दधार हो ॥८९॥

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं०।

नहिं वज्रकी हो वृषभ अरु नाराच भी नहीं वज्र हो,
सामान्य कीली करि ठुकी सब हाड़ वज्र समान हो।
है तीसरा संहनन जो नाराच ही परकार हो,
यह त्याग बंध-प्रबंध निवसौ परम आनन्दधार हो ॥९०॥

ॐ ह्रीं नाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं०।

हो जड़ित छोटी कीलिका, सो संधि हाड़ों की जबै,
कछु ना विशेषण वज्र के, सामान्य ही होवे सबै।
है चौथवां संहनन जो, नाराच अर्द्ध प्रकार हो,
यह त्याग बंध-प्रबंध निवसौ, परम आनंदधार हो ॥९१॥

ॐ ह्रीं अर्द्धनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं०।

जो परस्पर जड़ित होवे, संधि हाड़नकी जहां,
नहिं कीलिका सो ठुकी होवे, साल संधी के तहां।
है पांचवां संहनन जो, कीलक नाम कहाय हो,
यह त्याग बन्ध-प्रबन्ध निवसौ, परम आनन्दधार हो ॥९२॥

ॐ ह्रीं कीलकसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं०।

कछु छिद्र कछुक मिलाप होवे, सन्धि हाड़ोंमय सही,
केवल नसासों होय बेढी, मांससों लतपत रही।
अन्तिम स्फाटिक संहनन यह, हीन शक्ति असार हो,
यह त्याग बन्ध-प्रबन्ध निवसौ, परम आनन्दधार हो ॥९३॥

ॐ ह्रीं स्फाटिकसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं०।

दोहा

वर्ण विशेष न स्वेत है, नामकर्म तन धार
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं ताहि कर्मरज टार ॥स्वच्छ० ६४॥
ॐ ह्रीं स्वेतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

वर्ण विशेष न पीत है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६५॥

वर्ण विशेष न रक्त है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६६॥

वर्ण विशेष न हरित है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६७॥

वर्ण विशेष न कृष्ण है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६८॥

गन्ध विशेष न शुभ कहो, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं सुगन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥६६॥

गन्ध विशेष न अशुभ है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं दुर्गन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१००॥

स्वाद विशेष न तिक्त है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं तिक्तरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०१॥

स्वाद विशेष न कटुक है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं कटुकरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०२॥

स्वाद विशेष न आम्ल है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं आम्लरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०३॥

स्वाद विशेष न मधुर है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं मधुररसरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०४।

स्वाद विशेष न कषाय है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०५॥

फर्स विशेष न नर्म है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं ताहि कर्मरज टार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं मृदुत्वस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०६॥

फर्स विशेष न कठिन है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं कठिनस्पर्शरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०७।

फर्स विशेष न भार है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरसहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०८॥

फर्स विशेष न अगुरु है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१०६॥

फर्स विशेष न शीत है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥११०॥

फर्स विशेष न उष्ण है, नामकर्म नामकर्म तन ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१११॥

फर्स विशेष न चिकरण है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥११२॥

फर्स विशेष न रूक्ष है, नामकर्म तन धार ॥स्वच्छ०॥
ॐ ह्रीं रूक्षस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥११३॥

मरहठा

हो जो प्रजाप्त वर, पणइन्द्रीधर, जाय नर्क निरधार,
विग्रहसु चाल में, अन्तराल में धरै पूर्व आकार।
सो नर्क मानकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूं भवपार ॥११४॥
ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वोछेदकाय नमः अर्घ्यं०।

निजकाय छांडकरि, अन्त समय मरि, होय पशू अवतार,
विग्रहसु चाल में, अन्तराल में, धरैं, पूर्व आकार।

सो तिर्यं मान करि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूं भवपार ॥११५॥
ॐ ह्रीं तिर्यंचगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।
समकितसों मर, बा कलेश करि, धरहिं देवगति चार।
विहग्रसु चाल में, अन्तराल में, धरै पूर्व आकार।
सो देव मानि करि, गावत गणधर, आनुपूर्वीसार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूं भवपार ॥११६॥
ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।
हो मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुजगति सार।
विग्रहसु चाल में अन्तराल में धरै पूर्व आकार।
सो मनुष्य मान करि गावत गणधर अनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो शिवगति पायो नमित लहूं भवपार ॥११७॥
ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

त्रोटक

तनभार भए निज घात ठने,तिसकी कछु विधि ऐसी आकृति बने।
अपघात सुकर्म सिद्धांत भनो,जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥११८॥
ॐ ह्रीं अपघातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।
विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणनिको निर्मूल करै।
परघाति सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥११९
ॐ ह्रीं परघातनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।
अति तेजमई, परदीप्त महा, रवि-बिंब विषै जिय भूमि लहा।
यह आतप कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये जग तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं अतितेजमयो आतप-नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२०॥
परकासमई जिन बिंब शशी, पृथिवी जिय पावत देह इसी।
द्युति नाम सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं उद्यातनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२१॥

तनकी थिति कारण स्वास गहै, स्वर अन्तर बाहर भेद बहै।
यह स्वास सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं स्वासकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२२॥

शुभ चाल चलें अपनी जिसमें, शशि ज्यों नभ सोहत है तिसमें।
नभमें गति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं विहायोगतिनाम कर्मविमुक्तिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२३॥

इक इन्द्रिय जात विरोध भई, चतुरांति सुभावक प्राप्त भई।
त्रस नाम सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२४॥

इक इन्द्रिय जातहिं पावत है, अरु शेष न ताहि धरावत है।
यह थावर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं थावरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२५॥

परमें परवेश न आप करें, परको निजमें नहिं थाप धरें।
यह बादर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं बादरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२६॥

जलसों दवसों नहीं आप मरै, सब ठौर रहै परको न हरै।
यह सूक्षम कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२७॥

जिसतें परिपूरणता करि है, निज शक्ति समान उदय धरि है।
पर्याप्त सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं पर्याप्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२८॥

परिपूरणता नहिं धार सके, यह होत सभी साधारण के।
अपरयापति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं अपर्याप्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१२९॥

जिम लोहन भार धरै तन में, जिम आकन फूल उड़े वन में।
है अगुरुलघु यह भेद भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं अगुरुलघुकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१३०॥

इक देह विषैं इक जीव रहै, इकलो तिसको सब भोग लहै।
परतेक सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं प्रत्येककर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१३१॥

इक देह विषैं बहु जीव रहैं, इक साथ सभी तिस भोग लहैं।
यह भेद निगोद सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो ॥
ॐ ह्रीं साधारणनामकमरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१३२॥

उपेन्द्रवज्रा

चले न जो धातु तजै न वासा, यथाविधि आप धरै निवासा।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥
ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१३३॥

अनेक थानं मुख गौण धातं, चलंति धारं निजवासधातं।
यही प्रकाराऽथिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥
ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१३४॥

यथाविधी देह विलास सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै।
यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥
ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१३५॥

असुन्दराकार शरीर मांहो, लखों जहाँसों विडरूप ताहीं।
यहै प्रकाराऽशुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३६
ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी।
सुभगता को यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३७॥
ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

धरै अनेका गुण तो न जासों, करैं कभी प्रीति न कोई तासों।
दुर्भाग ताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३८॥
ॐ ह्रीं दुर्भगनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

पद्धड़ी छन्द

ध्वनि बीन भांति ज्यों मधुर बैन, निसरै पिक आदिक सुरस बैन ।
यह सुस्वर नाम प्रकृति कहाय,तुम हनी नमूं निज शीस लाय ॥१३९

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

गर्दभस्वर जैसो कहो भास, तैसो रव अशुभ कहो सु भास ।
यह दुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूं जिन शीस लाय ॥१४०

ॐ ह्रीं दुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

अडिल्ल

होत प्रभामई कांति महा रमणीक जू ।
जग जन मन भावन माने यह ठीक जू ॥
यह आदेय सुप्रकृति नाश निजपद लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अर्घ दहो ॥१४१॥

ॐ ह्रीं आदेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

रूखो मुखकों वरण लेश नहिं कांतिकों ।
रूखे केश नखाकृति तन बढ़ भांतिकों ॥
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहों ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहों ॥१४२॥

ॐ ह्रीं अनादेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

होत गुप्त गुण तौ भी जगमें विस्तरै ।
जगजन सुजस उचारत ताकी थुति करैं ॥
यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४३॥

ॐ ह्रीं यशः प्रकृतिछेदकाय नमः अर्घ्यं० ।

जासु गुणनको औगुण कर सब ही ग्रहैं ।
करत काज परशंसित पण निंदित कहैं ॥

अपयश प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४४॥
ॐ ह्रीं अपयशःनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

योग थान नेत्रादिक ज्यों के त्यों बनों ।
रचित चतुर कारीगर करते हैं तनो ॥
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४५॥
ॐ ह्रीं निर्माणनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

पंचकल्याणक चौंतिस अतिशय राजहीं,
प्रातिहार्य अठ समोसरण द्युति छाजहीं ।
तीर्थंकर विधि विभव नाश निजपद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४६॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरप्रकृतिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

(चाल छंद)

जो कुम्भकार की नाई, छिन घट छिन करत सुराई ।
सो गोत कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४७॥
ॐ ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

लोकनिमें पूज्य प्रधाना, सब करत विनय सनमाना ।
यह ऊंच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४८॥
ॐ ह्रीं उच्चगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जिसको सब कहत कमीना, आचरण धरे अति हीना ।
यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४९॥
ॐ ह्रीं नीचगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

ज्यों दे न सके भण्डारी, परधनको हो रखवारी ।
यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५०॥
ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

हो दान देनको भावा, दे सके न कोटि उपावा ।
दानांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५१॥
ॐ ह्रीं दानांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

मन दान लेन को भावे, दातार प्रसंग न पावै ।
लाभांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५२॥
ॐ ह्रीं लाभांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाय न अवसर योगा ।
भोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५३॥
ॐ ह्रीं भोगांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

तिय आदिक बारम्बारा, नहिं भोग सके हितकारा ।
उपभोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५४॥
ॐ ह्रीं उपभोगांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

चेतन निज बल प्रकटावे, यह योग कबहुं नहिं पावे ।
वीर्यान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५५॥
ॐ ह्रीं वीर्यान्तरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

ज्ञानावरणादिक नामी, निज काज उदय परिणामी ।
अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५६॥
ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

इकसौ अड़ताल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ता धारी ।
सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५७॥
ॐ ह्रीं एकशताष्टचत्वारिंशत् कर्मप्रकृतिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

परणाम भेद संख्याता, जो वचन योग में आता ।
संख्यात कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५८॥
ॐ ह्रीं संख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

है वचननसों अधिकाई, परिणाम भेद दुखदाई।
विधि असंख्यात परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५९॥
ॐ ह्रीं असंख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

अविभाग प्रछेद अनन्ता, यह केवलज्ञान लहन्ता।
यह कर्म अनन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१६०॥
ॐ ह्रीं अनन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

सब भाग अनन्तानन्ता, यह सूक्ष्मभाव धरन्ता।
विधि नन्तानन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१६१॥
ॐ ह्रीं अनन्तानन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

मोतियादाम

न हो परिणाम विषैं कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै बिन भेद।
निजाश्रित भाव रमै सुखधाम, करूं तिस आनन्दकों पिरणाम॥
ॐ ह्रीं आनन्दस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ॥१६२॥

धरैं जितने परिणामन भेद, विशेषनि तैं सब ही बिन भेद।
पराश्रितता बिन आनन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूं पद शर्म॥
ॐ ह्रीं आनन्दधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥१६३॥

न हो परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसै निज आनन्द भाव।
यहीं वरणो परमानन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूं पद पर्म॥
ॐ ह्रीं परमानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥१६४॥

कबहुं परसों कछु द्वेष न होत, कबहुं पुनि हर्ष विशेष न होत।
रहैं नित ही निज भावन लीन, नमूं पद साम्य सुभाव सु लीन॥
ॐ ह्रीं साम्यस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ॥१६५॥

निजाकृति में नहिं लेश कषाय, अमूरति शांतिमई सुखदाय।
आकुलता बिन साम्य स्वरूप, नमूं तिनको नित आनन्द रूप॥
ॐ ह्रीं साम्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥१६६॥

अनन्त गुणातम द्रव पर्याय, यही विधि आप धरैं बहु भाय।
सभी कुमति करि हो अलखाय, नमूं जिनवैन भली विधि गाय॥
ॐ ह्रीं अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६७॥

अनन्त गुणातम रूप कहाय, गुणी-गुण भेद सदा प्रणमाय।
महागुण स्वच्छमयी तुम रूप, नमूं तिनको पद पाइ अनूप॥
ॐ ह्रीं अनन्तगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥१६८॥

अभेद सुभेद अनेक सु एक, धरो इन आदिक धर्म अनेक।
विरोधित भावनसों अविरुद्ध, नमूं जिन आगम को विधि शुद्ध॥
ॐ ह्रीं अनन्तधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥१६९॥

रहै धर्मी नित धर्म सरूप, न हो परदेशनसों अन्यरूप।
चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरो प्रणमूं मन भक्ति स्वरूप॥
ॐ ह्रीं अनन्तधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥१७०।

चौपाई

हीनाधिक नहीं भाव विशेष, आतमीक आनन्द हमेश।
सम स्वभाव सोई सुखराज, प्रणमूं सिद्ध मिटै भवबास॥१७१॥
ॐ ह्रीं समस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ॥१७१॥

इष्टानिष्ट मिटो भ्रम जाल, पायो निज आनन्द विशाल।
साम्य सुधारसको नित भोग, नमूं सिद्ध सन्तुष्ट मनोग॥
ॐ ह्रीं सन्तुष्टाय नमः अर्घ्यं० ॥१७२॥

पर पदार्थ को इच्छुक नाहिं, सदा सुखी स्वातम पद माहिं।
मेटो सकल राग अरु दोष, प्रणमूं राजत सम सन्तोष॥
ॐ ह्रीं समसन्तोषाय नमः अर्घ्यं० ॥१७३॥

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय।
शुद्ध निरंजन समगुण लहो, नमूं सिद्ध परकृत दुख दहो॥
ॐ ह्रीं साम्यगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।१७४॥

निजपदसों थिरता नहिं तजें, स्वानुभूत अनुभव नित भजें।
निराबाध तिष्ठैं अविकार, साम्यस्थाई गुण भण्डार ॥

ॐ ह्रीं साम्यस्थाय नमः अर्घ्यं० ॥१७५॥

भव सम्बन्धी काज निवार, अचल रूप तिष्ठैं समधार।
कृत्याकृत्य साम्य गुण पाइयो, भक्ति सहित हम शीश नाइयो ॥

ॐ ह्रीं साम्यकृत्याकृत्यगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७६॥

झूलना

भूल नहीं भय करैं, छोभ नाहीं धरैं, गैरकी आसको त्रास नाहीं धरैं।
शरण काको चहै, सबनको शरण है, अन्य की शरण बिन नमूं नाहीं वरैं ॥

ॐ ह्रीं अनन्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७७॥

द्रव्य षट्में नहीं, आप गुण आप ही,
आपमें राजते सहज नीको सही।
स्वगुण अस्तित्वता, वस्तुकी वस्तुता,
धरत हो मैं नमूं आपही को स्वता ॥

ॐ ह्रीं अनन्यगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७८॥

गैरसे गैर हो आपमें रमाइयो,
स्व चतुर खेत में वास तिन पाइयो।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो,
मैं तुम्हैं भक्तियुत शीश निज नाइयो ॥

ॐ ह्रीं अनन्यधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥१७९॥

साधना जबतईं, होत है तबतईं,
दोउ परिमाण को काज जामें नहीं।
आप निजपद लियो, तिन जलांजली दियो,
अन्य नहीं चहत निज शुद्धता में लियो ॥

ॐ ह्रीं परिमाणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥१८०॥

तोमर

दृग ज्ञान पूरणचन्द्र, अकलंक ज्योति अमन्द ।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूं चिद्रूप ॥१८१॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

सब ज्ञानमयी परिणाम, वर्णादिको नहिं काम ।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूं चिद्रूप ॥१८२॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

निज चेतनागुण धार, बिन रूपहो अविकार ।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूं चिद्रूप ॥१८३॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मचेतनाय नमः अर्घ्यं० ।

सुन्दरी

अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा ।
कहत हैं मुनि शुद्ध सुभावजी, नमूं सिद्ध सदा तिन पायजी ॥
ॐ ह्रीं शुद्धस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ॥१८४॥

पर परिणामनसों नहिं मिलत हैं,निज परिणामनसों नहिं चलत हैं ।
परिणामी शुद्ध स्वरूप एह, नमूं सिद्ध सदा नित पांय तेह ॥
ॐ ह्रीं शुद्धपारिणामिकाय नमः अर्घ्यं० ॥१८५॥

वस्तुता व्यवहार नहीं अहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै ।
शुद्ध स्वरूप न ताकरि साध्य है, निर्विकल्प समाधि अराध्य है ॥
ॐ ह्रीं अशुद्धरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१८६॥

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभव में विकलप नहिं कोऊ ।
सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम निज पद परतीत हो ॥
ॐ ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥१८७॥

चौपाई

क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षाइक रूप उधारो ।
युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेषा ॥
ॐ ह्रीं अनन्तदृगस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥१८८॥

जब पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनन्द उपायो ।
अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेषा ॥
ॐ ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ॥१८९॥

नाश सु पूर्वक हो उतपादा, सत लक्षण परिणति मरजादा ।
क्षय उपशम तन क्षायक पेखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेषा ॥
ॐ ह्रीं अनन्तदृगुत्पादकाय नमः अर्घ्यं० ॥१९०॥

नित्य रूप निज चित पद माहीं, अन्य रूप पलटन हो नाहीं ।
द्रव्य-दृष्टिमें यह गुण देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेषा ॥
ॐ ह्रीं अनन्तध्रुवाय नमः अर्घ्यं० ॥१९१॥

कर्म नाश जो स्व-पद पावै, रञ्च मात्र फिर अन्त न आवै ।
यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेषा ॥
ॐ ह्रीं अव्ययभावाय नमः अर्घ्यं० ॥१९२॥

पर नहिं व्यापै तुम पद मांही, परमें रमण भाव तुम नाहीं ।
निज करि निजमें निज लय देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेषा ॥
ॐ ह्रीं अनन्तनिलयाय नमः अर्घ्यं० ॥१९३॥

शंखनारी

अनंताभिधानो, गुणाकार जानो ।
धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥१९४॥
ॐ ह्रीं अनन्ताकाराय नमः अर्घ्यं० ।

अनंत स्वभावा, विशेषन उपावा ।
धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥१९५॥
ॐ ह्रीं अनन्तस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ।

विनाकाररूपा यह चिन्मयस्वरूपा ।
धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥१९६॥
ॐ ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

सदा चेतनामें, न हो अन्यतामें ।
धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥१९७॥
ॐ ह्रीं चिद्रूपाय नमः अर्घ्यं० ।

दोहा

जो कुछ भाव विशेष हैं, सब चिद्रूपी धर्म ।
असाधारण पूरण भये, नमत नशें सब कर्म ॥१९८॥
ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

परकृति व्याधि विनाशके, निज अनुभव की प्राप्त ।
भई, नमूं तिनको, लहूं, यह जगवास समाप्त ॥१९९॥
ॐ ह्रीं स्वानुभवोपलब्धिरमाय नमः अर्घ्यं० ।

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभव की डोर ।
गहो लहो थिरता रहो, रमण ठोर नहीं और ॥२००॥
ॐ ह्रीं स्वानुभूतिरताय नमः अर्घ्यं० ।

सरवोत्तम लौकीक रस-सुधा कुरस सब त्याग ।
निज पद परमामृत रसिक, नमूं चरण बड़भाग ॥२०१॥
ॐ ह्रीं परमामृतरताय नमः अर्घ्यं० ।

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान ।
जान निजानन्द परमरस, तुष्ट सिद्ध भगवान ॥२०२॥
ॐ ह्रीं परमामृततुष्टाय नमः अर्घ्यं० ।

शंकातीत प्रतीतसों, धरैं प्रीति निज मांहि ।
अमल हिये संतान प्रिये, परम प्रीति नमूं ताहि ॥२०३॥
ॐ ह्रीं परमप्रीताय नमः अर्घ्यं० ।

अक्षय आनन्द भाव युत, नित हितकार मनोग ।
सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग ॥२०४॥
ॐ ह्रीं परमवल्लभयोगाय नमः अर्घ्यं० ।

शब्द गन्ध रस फरस नहिं नहीं वरण आकार ।
बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार ॥२०५॥
ॐ ह्रीं अव्यक्तभावाय नमः अर्घ्यं० ।

सर्व दर्वसों भिन्न हैं, नहिं अभिन्न तिहुं काल ।
नमूं सदा परकाश धर, एकहि रूप विशाल ॥२०६॥
ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

सर्व दर्वतों भिन्नता, निज गुण निज में वास ।
नमूं अखण्ड परमातमा, सदा सुगुण की राशि ॥२०७॥
ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

सर्व दर्व परिणामसों, मिलै न निज परिणाम ।
नमूं निजानन्द ज्योति घन, नित्य उदय अभिराम ॥२०८॥
ॐ ह्रीं एकत्वभावाय नमः अर्घ्यं० ।

चौपाई

पर संयोग तथा समवाय, यह संवाद न हो द्वै भाय ।
नित्य अभेद एकता धरो, प्रणमूं द्वैत भाव तुम हरो ॥२०९॥
ॐ ह्रीं द्वैतभावविनाशकाय नमः अर्घ्यं० ।

पूरव पर्याय नासियो सोई, जाको फिर उतपात न होई ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२१०॥
ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घ्यं० ।

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२११॥
ॐ ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय नमः अर्घ्यं० ।

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरो निज ज्ञान ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२१२॥
ॐ ह्रीं शाश्वतोद्योताय नमः अर्घ्यं० ।

ज्ञानानन्द सुधाकर चन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत, रूप नमूं सुखधाम ॥२१३॥
ॐ ह्रीं शाश्वतामृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं० ।

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निरविच्छेद अभेद अपार।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२१४॥
ॐ ह्रीं शाश्वतामूर्तये नमः अर्घ्यं० ।

पद्धड़ी

मन-इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्षम नाम सरूप तेह।
मनपर्यय जाकूं नाहिं पाय, सो सूक्षम परम सुगुण नमाय ॥२१५
ॐ ह्रीं परमसूक्ष्माय नमः अर्घ्यं० ।

बहु राशि नभोदरमें समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताकों न पाय।
इकसों इककों बाधा न होहि, सूक्षम अवकाशी नमों सोहि ॥२१६॥
ॐ ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय नमः अर्घ्यं० ।

नभ गुण ध्वनि हो यह जोग नाहिं,
हो जिसो गुणी गुण तिसो ताहिं।
सो राजत हो सूक्षम स्वरूप,
नमहूं तुम सूक्षम गुण अनूप ॥२१७॥
ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

तुम त्याग द्वैतताको प्रसंग, पायो एकाकी छबि अभंग।
जाको कबहूं तुम अनुभव न होय, नमूं परमरूप है गुप्त सोय ॥
ॐ ह्रीं परमरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥२१८॥

त्रोटक

सर्वार्थविमानिक देव तथा, मन इन्द्रिय भोगन शक्ति यथा।
इनके सुखको एक सीम सही, तुम आनंदको पर अन्त नहीं ॥
ॐ ह्रीं निरवधिसुखाय नमः अर्घ्यं ० ॥२१९॥

जन जीवनिको नहिं भाग्य यहै,
निज शक्ति उदय करि व्यक्ति लहै।
तुम पूरण क्षायक भाव लहो,
इम अन्त बिना गुणरास गहो ॥२२०॥
ॐ ह्रीं निरवधिगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

भवि-जीव सदा यह रीति धरें, नित नूतन पर्य विभाव धरें।
तिस कारणको सब व्याधि दहो, तुम पाइ सुरूप जु अन्त न हो ॥
ॐ ह्रीं निरवधिस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२२१॥

अवधि मनपर्य सु ज्ञान महा, द्रव्यादि विषै मरजाद लहा।
तुम ताहि उलंघन सुभावमई, निजबोध लहो जिस अन्त नहीं ॥
ॐ ह्रीं अतुलज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥२२२॥

तिहुं काल तिहूं जगके सुखको, कर वार अनंत गुणा इनको।
तुम एक समय सुखकी समता, नहीं पाय नमूं मन आनन्दता ॥
ॐ ह्रीं अतुलसुखाय नमः अर्घ्यं० ॥२२३॥

नाराच

सर्व जीव राशके, सुभाव आप जान हो।
आपके सुभाव, अंश औरकौ न ज्ञान हो ॥
सो विशुद्ध भाव पाय, जासकौ न अन्त हो।
राजहो सदीव देव, चरणदास 'सन्त' हो ॥२२४॥
ॐ ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घ्यं० ।

आपकी गुणौध वेलि फैलि है अलोकलों।
शेष से भ्रमाय पत्रकी न पाय नोंकलों ॥
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो।
राजहो सदीव देव चरणदास 'सन्त' हो ॥२२५॥
ॐ ह्रीं अतुलगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

सूर्यको प्रकाश एक-देश वस्तु भास हो।
आपको सुज्ञान भान सर्वथा प्रकाश हो॥
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो।
राजहो सदीव देव चरणदास 'सन्त' हो॥२२६॥

ॐ ह्रीं अतुलप्रकाशाय नमः अर्घ्य०।

तास रूप को गह्यो न फेरि जास नाश हो।
स्वात्मवासमें विलास आस त्रास नाश हो॥
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो।
राजहो सदीव देव चरण दास 'सन्त' हो॥२२७॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं०।

सोरठा

मोहादिक रिपु जीति, निजगुण निधि सहजे लहो।
विलसो सदा पुनीति, अचल रूप बन्दों सदा॥२२८॥

ॐ ह्रीं अचलगुणाय नमः अर्घ्यं०।

उत्तम क्षाइक भाव, क्षय उपशम सब गये विनशि।
पायो सहज सुभाव, अचल रूप बन्दों सदा॥२२९॥

ॐ ह्रीं अचलगुणाय नमः अर्घ्यं०।

अथिर रूप संसार, त्याग सुथिर निजरूप गहि।
रहो सदा अविकार, अचल रूप बन्दों सदा॥२३०॥

ॐ ह्रीं अचलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं०।

मोतियादाम

निराश्रित स्वाश्रित आनंदधाम, परं परसो न परं कछु काम।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद-बंद रहूं सुखवृन्द॥२३१॥

ॐ ह्रीं निरालम्बाय नमः अर्घ्यं०।

अराग अदोष अशोक अभोग, अनिष्ट संयोग न इष्ट वियोग।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद-बंद रहूं सुखवृन्द ॥२३२॥
ॐ ह्रीं आलम्बरहिताय नमः अर्घ्यं०।

अजीव न जीव न धर्म-अधर्म, न काल अकाश लहै तिस धर्म।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद-वंद रहूं सुखवृन्द ॥२३३॥
ॐ ह्रीं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं०।

अवर्ण अकर्ण अरूप अकाय, अयोग असंयमता अकषाय।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद-वंद रहूं सुखवृन्द ॥२३४॥
ॐ ह्रीं निष्काय नमः अर्घ्यं०।

न हो परसों रुष-राग विभाग, निजातममें अवलीन स्वभाव।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद-वंद रहूं सुखवृन्द ॥२३५॥
ॐ ह्रीं आत्मरतये नमः अर्घ्यं०।

दोहा

निज स्वरूप में लीनता, ज्यों जल पुतली खार।
गुप्त-स्वरूप नमूं सदा, लहूं भवार्णव पार ॥२३६॥
ॐ ह्रीं स्वरूप गुप्ताय नमः अर्घ्यं०।

जो हैं सो हैं और नहिं, कछु निश्चय-व्यवहार।
शुद्ध द्रव्य परमातमा, नमूं शुद्धता धार ॥२३७॥
ॐ ह्रीं शुद्धद्रव्याय नमः अर्घ्यं०।

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव भय छेद कराय।
असंसार हदको नमूं यह भव वास नशाय ॥२३८॥
ॐ ह्रीं असंसाराय नमः अर्घ्यं०।

नागरूपिणी तथा अर्धनाराच।

हरो सहाय कर्णको, सुभोगता विवर्ण को।
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही ॥२३९॥
ॐ ह्रीं स्वानन्दाय नमः अर्घ्यं०।

न हो विभावता कदा, स्वभाव में सुखी सदा ।
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास हो ॥२४०॥
ॐ ह्रीं स्वानन्दभावाय नमः अर्घ्यं० ।

अछेद रूप सर्वथा, उपाधि की नहीं व्यथा ।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही ॥२४१॥
ॐ ह्रीं स्वानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

दुभेदता न वेद हो, सचेतना अभेद ही ।
निजातमीक एक ही, लहो आनन्द तास हो ॥२४२॥
ॐ ह्रीं स्वानन्दगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

न अन्यकी परवाह है, अचाह है, न चाह है ।
निजातमीक एक हो, लहो आनन्द तास हो ॥२४३॥
ॐ ह्रीं स्वानन्दसंतोषाय नमः अर्घ्यं० ।

सोरठा

रागादिक परिणाम, हैं कारण संसार के ।
नाश, लियो सुखधाम, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२४४॥
ॐ ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ।

उदइक भाव विनाश, प्रगट कियो निज धर्मको ।
स्वातम गुण परकाश नमत सदा भव-भय हरूं ॥२४५॥
ॐ ह्रीं स्वतन्त्रधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

निजगुण पर्ययरूप, स्वयं-सिद्ध परमातमा ।
राजत हैं शिवभूप, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२४६॥
ॐ ह्रीं आत्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ।

विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणतिमई ।
राजे हैं, सुखखानि, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२४७॥
ॐ ह्रीं परमचित्परिणामाय नमः अर्घ्यं० ।

दर्श-ज्ञानमय धर्म चेतन धर्म प्रगट कहो ।
भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२४८॥
ॐ ह्रीं चिद्रूपदधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

दर्श-ज्ञान-गुणसार, जीवभूत परमातमा ।
राजत सब परकार, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२४६॥
ॐ ह्रीं चिद्रूपगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

अष्ट कर्ममल जार, दीप्तरूप निज पद लहो ।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव-भय तरूं ॥२५०॥
ॐ ह्रीं परमस्नातकाय नमः अर्घ्यं० ।

रागादिक मल सोध, दोऊ विविध विधान विन ।
लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२५१॥
ॐ ह्रीं स्नातकधर्याय नमः अर्घ्यं० ।

विधि आवरण विनाश, दर्श-ज्ञान परिपूर्ण हो ।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२५२॥
ॐ ह्रीं सर्वविलोकाय नमः अर्घ्यं० ।

निजकर निज में वास, सर्व लोकसों भिन्नता ।
पायो शिव सुख-रास, नमत, सदा भव-भय हरूं ॥२५३॥
ॐ ह्रीं लोकाग्रथिताय नमः अर्घ्यं० ॥७१॥

ज्ञान-भानकी जोति, व्यापक लोकालोक में ।
दर्शन बिन उद्योग, नमत सदा भय-भय हरूं ॥२५४॥
ॐ ह्रीं लोकालोकव्यापकाय नमः अर्घ्यं० ।

जो कुछ धरत विशेष, सब ही सब आनन्दमय ।
लेश न भाव कलेश, नमूं सदा भव-भय हरूं ॥२५५॥
ॐ ह्रीं आनन्दविधानाय नमः अर्घ्यं० ।

जिस आनन्दको पार, पावत नहिं यह जगतजन ।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव-भय हरूं ॥२५६॥

दोहा

इत्यादिक आनन्द गुण, धारत सिद्ध अनन्त ।
तिन पद आठों दरवसों, पूजत है नित 'सन्त' ॥२५७॥
ॐ ह्रीं आनन्दपूर्णाय नमः अर्घ्यं० ।

अथ जयमाल

दोहा

थावर शब्द विषय धरै, त्रस थावर पर्याय ।
यो न होय न सुगुण, हम किहविधि वर्णाय ॥१॥
तिसपर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान ।
बालक जल शशि-बिंब को, चहत ग्रहण निज पान ॥२॥

पद्धड़ी

जय पर-निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध-स्वरूप भाग ।
जय जगपालन बिन जगत देव, जय दयाभाव बिन शांतिमेव ॥३॥
पर सुख-दुखकरण कुरीतिटार, पर सुख-दुख-कारण शक्ति धार ।
पुन पुनि नव नव नित जन्मरीत, बिन सर्वलोक थापी पुनीत ॥४॥
जय लीला रास विलास नाश, स्वाभाविक निजपद रमण वास ।
शयनासन आदि क्रिया-कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप ॥५॥
बिन कामदाह नहिं नार भोग, निरद्वन्द्व निजानन्द मगन योग ।
बरमाल आदि शृंगार रूप, बिन शुद्ध निरंजन पद अनूप ॥६॥
जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश पुंज चिद्रूपसार ।
उपकरण हरण दव सलिलधार, निज शक्ति प्रभाव उदय अपार ॥७
नभ सीम नहीं अरु होत होउ, नहीं काल अंत, लहो अन्त सोउ ।
पर तुम गुण रास अनंत भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग ॥८
आनन्द जलधि धारा-प्रवाह, विज्ञानसुरी मुखद्रह अथाह ।
निज शांति सुधारस परम खान, समभाव बीज उत्पत्ति अभाव ॥९

निज आत्मलीन विकलप विनाश, शुद्धोपयोग परिणत प्रकाश ।
दृग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव ।।१०।।
निज गुणपर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम ।
अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध ।।११।।
एकाग्ररूप चिन्ता निरोध, जे ध्यावैं पावैं स्वयं बोध ।
गुणमात्र 'सन्त' अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप ।।१२।।

दोहा

सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मंत्रराज है सार ।
सर्व सिद्धि दातार है, सर्व विघन हर्तार ।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं षड्पंचाशदधिकद्विशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

तीन लोक चूड़ामणी, सदा रहो जयवन्त ।
विघन हरण मंगल करण, तुम्हैं नमैं नित 'संत' ।।१४।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

यहां १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ स नमः' मंत्र की जाप करें ।

सप्तम पूजा

(पांच सौ बारह गुण सहित)

छप्पय

ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिधर,
अग्रभागमें मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर।
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् द्वादशाधिकपंचशतगुण-संयुक्ताविराजमान ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। पुष्पांजलिंक्षिपेत्।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग॥

इति यन्त्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टकं

(चाल बारहमासा)

सुर मणि-कुम्भ क्षीर भर धारत, मुनि मन-शुद्धप्रवाह बहावहिं।
हम दोऊ विधि लाइक नाहीं, कृपा करहु लहि भवतट भावहिं॥
शक्ति सारु सामान्य नीरसों पूजूं हूं शिव-तियके स्वामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत-(५१२) गुणसहिताय जन्मजरारोगविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

नतु कोऊ चन्दन नतु कोऊ केसरि,–भेंट किये भवपार भयो है।
केवल आप कृपा-दृग ही सों, यह अथाह दधि पार लयो है॥
रीति सनातन भक्तन की लख, चन्दनको यह भेंट धरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशतगुण-सहिताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ॥२॥

इन्द्रादिक पद हूँ अनवस्थित, दीखत अन्तर रूचि न करैं हैं।
केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपद की चाह धरैं हैं॥
तातें अक्षतसों अनुरागी, हूं सो तुम पद पूज करामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत गुण सहिताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥३॥

पुष्प-वाण सो ही मन्मथ-जग, विजई जगमें नाम धरावे।
देखहु अद्भुत रीति भक्तकी, तिस ही भेंट धर काम हनावे॥
शरणागत की चूक न देखी, तातैं पूज्य भये शिरनामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशतगुण-संयुक्ताय कामबाणविनाशनाय पुष्पं० ॥४॥

हनन असाता पीर नहीं यह, भीर परै चरु भेंटन लायो।
भक्त अभिमान मेंट हो स्वामी, यह भवकारण भाव सतायो॥
मम उद्यम करि कहा आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत गुण-संयुक्ताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥५॥

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी।
हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी।

मोह अन्ध विनसो तिह कारण, दीपनसों अर्चूं अभिरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत गुण-संयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं० ॥६॥

धूप भरें उघरें प्रजरें मणि, हेम धरें तुम पद पर वारूं।
बार बार आवर्त जारि करि, धार धार निज शीश न हारूं॥
धूम्र धार समतन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत गुण-संयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं० नि० ॥७॥

तुम हो वीतराग निज पूजन, वन्दन थुति परवाह नहीं है।
अरु अपने समभाव वहै कछु, पूजा फलकी चाह नहीं है॥
तौभी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत गुण-संयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥८॥

तुमसे स्वामी के पद सेवत, यह विधि दुष्ट रंक कहा कर है।
ज्यों मयूरध्वनि सुनि अहि निज बिल, विलय जाय छिन बिलम न धर है॥
तातैं तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुं मुदामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत गुण-संयुक्ताय सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं०।

गीता

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥

वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है ॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूर शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय,चहुंगुण गेह,द्यो हम शुभ मती ॥१०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपंचशत गुण-संयुक्ताय पूर्णपदप्राप्तये महार्घ्यं० ।

अथ पांच सौ बारह गुण अर्घ्य

अर्द्ध जोगीरासा

लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकाशी ।
भव्यन मन तम मोह विनाशक, बन्दूं शिव-थल वासी ॥१॥
ॐ ह्रीं अरहंताय नमः अर्घ्यं० ।

सुरनर मुनि मन कुमुदन मोदन, पूरण चन्द्र समाना ।
हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, बन्दूं श्री भगवाना ॥२॥
ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नमः अर्घ्यं० ।

केवल-दर्श-ज्ञान-किरणावलि, मंडित तिहुं जग चन्दा ।
मिथ्यातप हर जल आदिक करि, बन्दूं पद अरविन्दा ॥३॥
ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नमः अर्घ्यं० ।

घातिकर्म रिपु जारि छारकर, स्वचतुष्टय पद पायो ।
निजस्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो ॥४॥
ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल-भान उगायो ।
भव्यन को प्रतिबोध उधारे, बहुरि मुक्ति पद पायो ॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।

धर्म-अधर्म तास फल दोनों, देखो जिम कर-रेखा।
बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिनमें देखा ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनाय नमः अर्घ्यं०।
मोह महा दृढ़ बंध उघारो, कर विषतन्तु समाना।
अतुल बली अरहंत कहायो, पाय नमूं शिवथाना ॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्याय नमः अर्घ्यं०।
युगपत लोकालोक विलोकन, है अनन्त दृगधारी।
गुप्त रूप शिवमग दरसायो, तिनपद धोक हमारी ॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनगुणाय नमः अर्घ्यं०।
घटपटादि सब परकाशत जद, हो रवि-किरण पसारा।
तैसो ज्ञान-भान अरहत को, ज्ञेय अनन्त उघारा ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानगुणाय नमः अर्घ्यं०।
आसन शयन पान भोजन बिन, दीप्त देह अरहंता।
ध्यान वान कर तान हान विधि, भए सिद्ध भगवंता ॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यगुणाय नमः अर्घ्यं०।
सप्त तत्त्व षट् द्रव्य भेद सब, जानत संशय खोई।
ताकरि भव्य जीव संबोधें, नमूं भये सिद्ध सोई ॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सम्यक्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं०।
ध्यान सलिलसों धोय लोभमल, शुद्ध निजातम कीनो।
परम शोच अरहंत स्वरूपी, पाय नमूं शिव लीनो ॥१२॥
ॐ ह्रीं अरहंतशौचगुणाय नमः अर्घ्यं०।
नय-प्रमाण श्रुतज्ञान प्रकारा, द्वादशांग जिनवानी।
प्रगटायो परतक्ष ज्ञानमें, नमूं भये शिव-थानी ॥१३॥
ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगाय नमः अर्घ्यं०।
मन-इन्द्रिय बिन सकल चराचर, जगपद करि प्रकटायो।
यह अरहंत मती कहलायो, बन्दूं तिन शिव पायो ॥१४॥
ॐ ह्रीं अर्हद्भिन्नबोधकाय नमः अर्घ्यं०

अनुभव सम नहीं होत दिव्यध्वनि, ताको भाग अनन्ता।
जानो गणधर यह श्रुत अवधी, पाई नमूं अरहंता ॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतावधिगुणाय नमः अर्घ्यं०।

सर्वावधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल-सागर मांही।
एक भयो अरहंत अवधि यह, मुक्त भए नमि ताही ॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हदवधिगुणाय नमः अर्घ्यं०।

अति विशुद्ध मय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा।
यह अरहंत पाय मन—पर्यय, नमूं भये भवपारा ॥१७॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छुद्धमनः पर्ययभावाय नमः अर्घ्यं०।

मोह मलिनता जग जिय नाशैं, केवलता गुण पावैं।
सर्व शुद्धता पाइ, नमत हैं हम, अरहंत कहावैं ॥१८॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणाय नमः अर्घ्यं०।

मोह-जनित सो रूप विरूपी, तिस बिन केवलरूपा।
श्री अरहंत रूप सर्वोत्तम, बन्दूं हो शिवभूपा ॥१९॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं०।

तास विरोधी कर्म जीति करि, केवल-दरशन पायो।
इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भावसहित शिरनायो ॥२०॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलदर्शनाय नमः अर्घ्यं०।

निर-आवरण करण बिन जाको, शरण हरण नहीं कोई।
केवल-ज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई ॥२१॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो।
केवल बल अरहन्त नमें हम, शिव थल बास करानो ॥२२॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलवीर्याय नमः अर्घ्यं०।

सब विधि अपने विघ्न निवारण, औरन विघ्न विडारी।
मंगलमय अर्हंत सर्वदा, नमूं मुक्ति पदधारी ॥२३॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय नमः अर्घ्यं०।

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, छाइक मंगलकारी ।
यह अर्हंत दर्श पायो मैं, नमूं भये शिवकारी ॥२४॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ।

निजपर संशय आदि पाय बिन, निरावरण विकसानो ।
मंगलमय अरहंत ज्ञान है, बन्दूं शिव सुख थानो ॥२५॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।

परकृत जरा आदि संकट बिन, अतुल बली अर्हंता ।
नमूं सदा शिवनारी के संग, सुखसों केलि करंता ॥२६॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलवीर्याय नमः अर्घ्यं० ।

पापरूप एकान्त पक्ष बिन, सर्व तत्वपरकाशी ।
द्वादशांग अरहंत कहों मैं, नमूं भये शिववासी ॥२७॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलद्वादशांगाय नमः अर्घ्यं० ।

बिन प्रतक्ष अनुमान सुबाधित, सुमतिरूप परिणामा ।
मंगलमय अर्हंतमती मैं, नमूं देउ शिवधामा ॥२८॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगल-अभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं० ।

नय-विकलप श्रुत-अंग पक्षके, त्यागी हैं भगवन्ता ।
ज्ञाता दृष्टा वीतराग, विख्यात नमूं अरहंता ॥२९॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलश्रुतात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।

मंगलमय सर्वावधि जाकरि, पावैं पद अरहंता ।
बन्दूं ज्ञान प्रकाश, नाश भव, शिव थल वास करंता ॥३०॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलावधिज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।

वर्धमान मनपर्यय ज्ञान करि, केवल-भानु उगायो ।
भव्यनि प्रति शुभ मार्ग बतायो, नमूं सिद्ध पद पायो ॥३१॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलमनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।

ता बिन और अज्ञान सकल, जगकारण बंध प्रधाना ।
नमूं पाय अरहंत मुक्ति पद, मंगल केवलज्ञाना ॥३२॥
ॐ ह्रीं अर्हंन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमई राजैं ।
केवलरूप नमूं सब अघहर, श्री अरहन्त विराजैं ॥३३॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।
चक्षु आदि सब भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया ।
श्री अरहन्त नमूं शिववासी, इह जग पाप नशाया ॥३४॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ।
जग मंगल सब विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता ।
मंगलमय सब मंगलदायक, नमूं कियो जग अन्ता ॥३५॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।
केवलरूप महामंगलमय, परम शत्रु छयकारा ।
सो अरहन्त सिद्ध पद पायो, नमूं पाय भवपारा ॥३६॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलरूपाय नमः अर्घ्यं० ।
शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानन्द विराजैं ।
सो अरहन्त परम मंगलमय, नमूं शिवालय राजैं ॥३७॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्माय नमः अर्घ्यं० ।
सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्मस्वरूपा ।
सो अरहन्त भये परमातम, नमूं त्रियोग निरूपा ॥३८॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।
सर्व जगत सम्बन्ध विघन नहीं, उत्तम मंगल सोई ।
सो अरहन्त भये शिववासी पूजत शिवसुख होई ॥३९॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ।
लोकातीत विलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी ।
लोकशिखर सुखरूप विराजैं, तिनपद धोक हमारी ॥४०॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ।
लोकाश्रित गुण सब विभाव हैं, श्रीनिजपदसों न्यारे ।
तिनको त्याग भये शिव बन्दूं काटो बन्ध हमारे ॥४१॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

मिथ्या मतिकर सहित ज्ञान, अज्ञान जगतमें सारो ।
ता विनाशि अरहन्त कहो, लोकोत्तम पूज हमारो ॥४२॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।
क्षायक दरशन है अरहन्ता, और लोकमें नाहीं ।
सो अरहन्त भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई ॥४३॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ।
कर्मबली ने सब जग बांध्यों, ताहि हनो अरहन्ता ।
यह अरहन्त वीर्य लोकोत्तम, पायो सिद्ध अनन्ता ॥४४॥
ॐ ह्रीं अर्हलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं० ।
अक्षातीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला ।
यह अरहन्त नमूं शिवनायक, पाऊं भवदधि कूला ॥४५॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं० ।
परमावधि ज्ञान सुखखानी, केवलज्ञान प्रकाशी ।
यहै अवधि अरहन्त नमूं मैं, संशय तमको नाशी ॥४६॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधिज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।
जो अरहन्त धरै मनपर्यय, सो केवल के मांहीं ।
साक्षात् शिवरूप नमों मैं, अन्य लोक में नाहीं ॥४७॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।
तीन लोक में सार सु श्री—अरहन्त स्वयंभू ज्ञानी ।
नमूं सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी ॥४८॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।
सर्वोत्तम तिहुं लोक प्रकाशित, केवल ज्ञान स्वरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥४९॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।
ज्ञान तरंग अभंग वहै, लोकोत्तम धार अरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥५०॥
ॐ ह्रीं अहल्लोकोत्तमकेवलपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ।

सहित असाधारण गुण-पर्यय, केवलज्ञान सरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥५१॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलाय नमः अर्घ्यं० ।

जगजिय सर्व अशुद्ध कहो, इक केवल शुद्ध सरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥५२॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ।

विविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वयं सरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥५३॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

हीनाधिक धिक धिक जग प्राणी, धन्य एक ध्रुवरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥५४॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमध्रुवभावाय नमः अर्घ्यं० ।

दोहा

संसारिनके भाव सब, बन्ध हेत वरणाय ।
मुक्तिरूप अरहंतके, भाव नमूं सुखदाय ॥५५॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमभावाय नमः अर्घ्यं० ।

कबहुं न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश ।
मुक्तिरूप प्रणमूं सदा, नाशे विघन विशेष ॥५६॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमस्थिरभावाय नमः अर्घ्यं० ।

जा सेवत वेवत स्वसुख, सो सर्वोत्तम देव ।
शिववासी नाशी त्रिजग–फांसी नमहूं एव ॥५७॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय नमः अर्घ्यं० ।

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चै सो सुखरास ।
शरण स्वरूपी जिन नमूं, करैं सदा शिववास ॥५८॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छरणरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

पद्धड़ी

स्वाभाविक गुण अरहंत गाय, जासों पूरण शिवसुख लहाय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हद्गुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।५९।

बिन केवलज्ञान न मुक्ति होय, पायो है श्री अरहंत जोय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं० । ६०।।

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, भाख्यो है शिव-मारग अखेव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।६१।।

संसार विषम बन्धन उछेद, अरहंत वीर्य पायो अखेद ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।६२।।

सब कुमति विगत मत जिन प्रतीत,हो जिसतैं शिवसुख दे अभीत ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगाद्यश्रुतगणशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।६३।।

अनुमानादिक साधित विज्ञान, अरहंत मती प्रत्यक्ष जान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हदभिनिबोधकाय शरणाय नमः अर्घ्यं० ।।६४।।

जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव,पायो शिव अविनाशी सदीव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।६५।।

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधी शिवसुख कराय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हदवधिबोधशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।६६।।

मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिव वास देत ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥६७॥
आवरण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन सुजान ।
हम शरण गही मन मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥६८॥
मुनि केवलज्ञानी जिन अराध, पावैं शिव-सुख निश्चय अबाध ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥६९॥
शिव-सुखदायक निज आत्म-ज्ञान, सो केवल पावै जिन महान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं० । ७० ।
यह केवलगुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाय ।
हम शरण गहो मन वचन काय, नित नमैं 'सन्त' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७१॥
संसार रूप सब विघन टार, मंगल गुण श्री निज मुक्तिकार ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७२॥
छय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता विन जिन ज्ञानी शिव सरूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सन्त' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७३॥
अरहन्त दर्श मंगल स्वरूप, तासो दरशै शिव-सुख अनूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं० । ७४॥
अरहंत बोध है मंगलीक, शिव-मारग प्रति वरते अलीक ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७५॥

निज ज्ञानानन्द प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७७॥
जा बिन तिहुं लोक न और मान, भव सिंधु तरण तारण महान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७६॥
स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण संसार जाल ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७८॥
तुम बिन समरथ तिहुँ लोकमांहि, भवसिंधु उतारण और नांहि ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥७६॥
बिन परिश्रम तारणतरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय ।
हम शरण गही वचन काय, नित नमैं 'संत' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तवीर्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥८०॥
अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'संत' आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥८१।
सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ–मत कारण प्रकाश ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सन्त' आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं० ॥८२।
मिथ्यारत प्रकृति अवधि विनाश, लोकोत्तम अवधी को प्रकाश ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं० ॥८३॥
मनपर्यय शिव मंगल लहाय, लोकोत्तम श्रीगुरु सो कहाय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥८४॥

आवरणातीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जगमें प्रधान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सन्त' आनंद पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥८५॥
हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अंतर लोकोत्तम ज्ञानरूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सन्त' आनन्द पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिप्रधानशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥८६॥
रतनत्रय निमित मिलो अबाध, पायो निज आनन्द धर्म साध।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सन्त' आनंद पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥८७॥
सुख ज्ञान वीर्य दर्शन सुभाव, पायो सब कर प्रकृती अभाव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सन्त' आनन्द पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअनन्तचतुष्टयशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥८८॥

अडिल्ल

दर्श ज्ञान सुख बल निजगुण ये चार हैं,
आतमीक परधान विशेष अपार हैं।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पायें नमन यातें करा ॥८९॥
ॐ ह्रीं अर्हदनन्तगुणचतुष्टाय नमः अर्घ्यं०।
क्षयोपशम सम्बाधित ज्ञानकला हरी,
पूरण ज्ञायक स्वयं बुद्धि श्रीजिनवरी।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पायें नमन यातें करा ॥९०॥
ॐ ह्रीं अर्हन्निजज्ञानस्वयंभुवे नमः अर्घ्यं०।
जनमत ही दश अतिशय शासनमें कही,
स्वयं शक्ति भगवान आप तिन को लही।

इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूं यह गुण पायें नमन यातैं करा ॥६१॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयस्वयंभुवे नमः अर्घ्यं० ।

ये दश अतिशय घातिकर्म छयको करें,
महा विभव को पाय मोक्ष नारी वरैं ।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूं यह गुण पायें नमन यातैं करा ॥६२॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयाय नमः अर्घ्यं० ।

केवल विभव उपाय प्रभू जिन पद लह्यो,
चौदह अतिशय देवनकरि सेवन कियो ।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूं यह गुण पायें नमन यातैं करा ॥६३॥
ॐ ह्रीं अर्हच्चतुर्दशअतिशयाय नमः अर्घ्यं० ।

चौतिस अतिशय जे पुराण वरणे मह्या,
मुक्ति समाज अनूप श्री गुरु ने कह्या ।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूं यह गुण पायें नमन यातैं करा ॥६४॥
ॐ ह्रीं अर्हच्चतुस्त्रिंशत-अतिशयविराजमानाय नमः अर्घ्यं० ।

डालर

लोकालोक अणु सम जानो, ज्ञानानंत सुगुण पहिचानो ।
सो अरहंत सिद्ध-पद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानानन्दगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥६५॥

समरस सुस्थिर भाव उधारा, युगपति लोकालोक निहारा ।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्ध्यानानन्तध्येयाय नमः अर्घ्यं० ॥६६॥

इक इक गुणका भाव अनन्ता, पर्ययरूप सो है अरहन्ता ।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हदनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥९७॥

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी ।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्प-अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥९८॥

आतमशक्ति जास करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी ।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्परमात्मने नमः अर्घ्यं० ॥९९॥

निज गुण निज ही मांहि समाया, गणधरादि वरनन न कराया ।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्स्वरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥१००॥

दोधक

जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई ।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥
ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०१॥

सर्व विशुद्ध विरूप सरूपी, स्वातम-रूप विशुद्ध अनूपी ।
लोकशिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी ॥
ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०२॥

पराश्रित सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा ।
लोकशिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी ॥
ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०३॥

आकुलता सबही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी ।
लोक शिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥
ॐ ह्रीं सिद्ध ज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०४॥

जीव अजीव लखे अविचारा, हो नहीं अन्तर एक प्रकारा ।
लोकशिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी ॥
ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०५॥

अन्तर बाहिर भेद उघारी, दर्श विशुद्ध सदा सुखकारी।
लोकशिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी ॥
ॐ ह्रीं सिद्धशुद्धसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०६॥

एक अणू मल कर्म लजावे, सोय निरंजनता नहिं पावै।
लोकशिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी ॥
ॐ ह्रीं सिद्धनिरंजनेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०७॥

अर्द्धरोला

चारों गति को भ्रमण नाशकर थिरता पाई।
निजस्वरूप में लीन, अन्य सों मोह नशाई ॥१०८॥
ॐ ह्रीं सिद्धाचलपदप्राप्ताय नमः अर्घ्यं०।

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो।
संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो ॥१०९॥
ॐ ह्रीं संख्यातीतसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

असंख्यात मरजाद, एक ताहू सो बीते।
विजयी लक्ष्मीनाथ, महाबल सब विधि जीते ॥११०॥
ॐ ह्रीं असंख्यातसिद्धेभ्या नम. अर्घ्यं०।

काल आदि मर्याद अनादि–सों इह विधि जारी।
भए अनन्त दिगम्बर साधु जु शिवपद धारी ॥१११॥
ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

पुष्करार्द्ध सागर लों, जे जल थान बखानो।
देव सहाइ उपाइ, उर्ध्व–गति गमन करानो ॥११२॥
ॐ ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

वन गिरि नगर गुफादि, सर्व थलसों शिव पाई।
सिद्धक्षेत्र सब ठौर बखानत, श्री जिनराई ॥११३॥
ॐ ह्रीं स्थलसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

नभ ही में जिन शुक्लध्यान—बल कर्म नाश किये ।
आयु पूर्ण वश ततछिन, ही शिववास जाय लिये ॥११४॥
ॐ ह्रीं गगनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

आयु स्थिति सम अन्य कर्म—कारण परदेशा ।
परसें पूरण लोक, आतम, केवली जिनेशा ॥११५॥
ॐ ह्रीं समुद्घात-सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

केवलि जिन बिन समुद्घात, शिववास लिया है ।
स्वते स्वभाव समान, अघाती कर्म किया है ॥११६॥
ॐ ह्रीं असमुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

उल्लाला

तिन विशेष अतिशय रहित, सामान्य केवली नाम है ।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥११७॥
ॐ ह्रीं साधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

त्रिभुवन में नहीं पावतो, जो जिन गुण अभिराम हैं ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतें, तिनके पद परणाम है ॥११८॥
ॐ ह्रीं असाधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

गर्भ कल्याण आदि युत, तीर्थंकर सुखधाम है ।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥११९॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

तीर्थङ्कर के समय में, केवली जिन अभिराम है ।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२०॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकर-अन्तरसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

पंच शतक पच्चीस पुनि, धनुष काय अभिराम है ।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२१॥
ॐ ह्रीं उत्कृष्टावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

आदि अन्त अन्तर विषै, मध्यवगाहन नाम है ।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२२॥
ॐ ह्रीं मध्यमावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

तीन अर्ध तन केवली, हस्त प्रमाण कहाय हैं।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद पद परणाम हैं ॥१२३॥
ॐ ह्रीं जघन्यावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

देव निमित्त मिलो जहां, त्रिजग केवली धाम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२४॥
ॐ ह्रीं त्रिजगलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

षट्विध परिणति कालकी, तिन अपेक्ष यह नाम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२५॥
ॐ ह्रीं षड्विधकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

अन्त समय उपसर्गतें, शुक्लध्यान अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२६॥
ॐ ह्रीं उपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

पर-उपसर्ग मिलै नहीं, स्वतः शुक्ल सुख धाम है।
सिद्ध भये, तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२७॥
ॐ ह्रीं निरुपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

अन्तर द्वीप मही जहां, देवन के अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२८॥
ॐ ह्रीं अन्तर द्वीपसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

देव गये ले सिंधु जल, कर्म छयो तिह ठाम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥१२९॥
ॐ ह्रीं उदधिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

भुजंगप्रयात

धरैं जोग आसन गहे शुद्धताई,
न हो खेद ध्यानाग्नि सो कर्म छाई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३०॥
ॐ ह्रीं स्वस्थित्यासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

महा शांति मुद्रा पलौथी लगाये,
किये कर्म को नाश ज्ञानी कहाये।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३१॥
ॐ ह्रीं पर्यंकासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

लहै आदिको संहनन पुरुष देही,
लखायो परारंभ में भाव ते ही।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३२॥
ॐ ह्रीं पुरुषवेदसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

खपायो प्रथम सात प्रकृति विमोहा,
गहो शुद्ध श्रेणी क्षयो कर्मलोहा।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३३॥
ॐ ह्रीं क्षपकश्रेणीसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

समय एक में एक वासौ अनंता,
धरो आठ तापं यही भेद अन्ता।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३४॥
ॐ ह्रीं एकसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

किसी देशमें वा किसी काल माहीं,
गिने दो समयमें तथा अन्तराई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३५॥
ॐ ह्रीं द्विसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

समय एक दो तीन धाराप्रवाही,
किये कर्म छय अन्तराय होय नाहीं।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३६॥
ॐ ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

हुवे हों सु होंगे सु हो हैं अबारी,
त्रिकालं सदा मोक्ष पंथा विहारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३७
ॐ ह्रीं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१३७॥

तिहूं लोक के शुद्ध सम्यक्त्व धारी,
महा भार संजम धरैं हैं अबारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥१३८॥
ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

मरहठा

तिहुं लोक निहारा, सब दुखकारा, पापरूप संसार।
ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भयो सिद्ध अविकार॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार ॥१३९॥
ॐ ह्रीं सिद्धमंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१३९॥

तिहुं कर्म-कालिमा, लगी जालिमा, करै रूप दुखदाय।
तुम ताको नाशो, स्वयं प्रकाशो स्वातम रूप सुभाय ॥हे जग०
ॐ ह्रीं सिद्धमंगलज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१४०॥

तिहुं जगके प्राणी, सब अज्ञानी, फंसे मोह जंजाल।
हो तिहुं जगत्राता, पूरण ज्ञाता, तुम ही एक खुशहाल ॥हे जग०
ॐ ह्रीं सिद्धमंगल स्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१४१॥

यह मोह अंधेरी, छाई घनेरी, प्रबल पटल रह्यो छाय ।
तुम ताहि उधारो, सकल निहारो, युगपत आनंददाय ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१४२॥

निजबंधन डोरी, छिन में तोरी, स्वयं शक्ति परकाश ।
निरभय निरमोही, परम अछोही, अन्तरायविधि नाश ॥हे जग०

ॐ ह्री सिद्धमंगलवीर्येभ्यो नमः अर्घ्यं० १४३॥

जाके प्रसादकर, सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय ।
रुष-राग निवारा, सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं १४४

अस्पर्श अमूरति, चिनमय मूरति, अरस अलिंग अनूप ।
मन अक्ष अलक्षं, ज्ञान प्रत्यक्षं, शुभ अवगाहि स्वरूप ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलावगाहनेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४५॥

अव्यक्त स्वरूपं, अमल अनूपं अलख अगम असमान ।
अवगाह उदर धर, वास परस्पर, भिन्न भिन्न परनाम ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलसूक्ष्मत्वेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१४६॥

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीनाधिक विधि नाश ।
विधि गोत्र नाशकर, पूरण पदधर असंबाध परकार ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगल-अगुरुलघुभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१४७॥

पुद्गल कृत सारी, विविधि प्रकारी, द्वैतभाव अधिकार ।
सब भांति निवारी, निज सुखकारी, पायो पद अविकार ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलअव्याबाधितेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१४८॥

अवगाह प्रणामी, ज्ञानारामी, दर्शन-वीर्य अपार ।
सूक्षम अवकाशं, अज अविनाशं, अगुरुलघू सुखकार ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलाष्टगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१४९॥

शुद्धातम सारं, अष्ट प्रकारं, शिव स्वरूप अनिवार।
निज गुणपरधानं, सम्यकज्ञानं, आदि अन्त अविकार ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगल-अष्टरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१५०॥

मंगल अरहन्तं, अष्टम भन्तं, सिद्ध अष्टगुण भाव।
ये ही बिलसावें, अन्य न पावें, साधारण परकाश ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगल-अष्टप्रकाशकेभ्यो नमः अर्घ्य० ॥१५१॥

निर आकुलताई, सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम।
संसार निवारण, बन्ध विडारन, यही धर्म सुखधाम ॥हे जग०

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलधर्मेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१५२॥

चूलिका

तीनकाल तिहुंलोक में, तुम गुण और न माहिं लखाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५३॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

लोकत्रय शिर छत्र मणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने।
लोकत्तम परसिद्ध हो, परसिद्धराज, सुखसाज बखाने ॥१५४॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

अमल अनूप तेजघन, निरावरण निजरूप प्रमाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५५॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।

लोकालोक प्रकाश कर, लोकातीत प्रत्यक्ष प्रमाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५६॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।

सकल दर्शनावरण बिन, पूरन-दरसन जोत उगाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५७॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं०।

अतुल अतीन्द्रिय वीरजकर, भोग तिनें शिवनारि अघाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५८॥
ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं० ।

त्रोटक

बिनकारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोकविषैं हितु हो।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१५९॥

तुम रूप अनूप ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६०॥

निरभेद अछेद विकासित हैं, सब लोक अलोक विभासित हैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६१॥

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वन्द्व अबंध अभय अजई।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।
ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६२॥

हितकारण तारण-तरण कहै, अप्रमाद प्रमाद प्रकाशन है।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६३॥

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम-तत्व प्रबोध लहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६४॥

जिनको पूर्वापर अन्त नहीं, नित धार-प्रवाह बहै अति ही।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं सिद्ध-अनन्तशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६५॥

कबहूं नहीं अन्त समावत है, सु अनन्त-अनन्त कहावत है।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥
ॐ ह्रीं सिद्ध-अन्तानन्तशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६६॥

तिहुं काल सु सिद्ध महा सुखदा निजरूप विषैं थिर भाव सदा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६७॥

तिहुं लोक शिरोमणि पूज्य महा, तिहुं लोक प्रकाशक तेज कहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६८॥

गिनती परमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करे।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥
ॐ ह्रीं सिद्धासंख्यातशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६९॥

पूर्वापर एकहि रूप लसे, नित लोक सिंहासन वास बसे।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।
ॐ ह्रीं सिद्धध्रौव्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७०॥

जगवास पर्याय विनाश कियो, अब निश्चय रूप विशुद्ध भयो।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥
ॐ ह्रीं सिद्धोत्पादगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७१॥

परद्रव्य थकी रुष राग नहीं, निज भाव बिना कहुं लाग नहीं।
इनहीं गुण में मन पागत है शिववास करो शरणागत हैं॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७२॥

बिन कर्म-कलंक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत हैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥
ॐ ह्रीं सिद्धस्वच्छगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७३॥

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहां, रुष-राग कलेश प्रवेश न ह्वां
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥
ॐ ह्रीं सिद्धस्वथितगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७४॥

निजरूप विषें नित मगन रहैं, पर योग-वियोग न वाहु लहैं।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७५।
श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।
ॐ ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७६॥
परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोध न गुह्य कहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ॥
ॐ ह्रीं सिद्ध-अव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१७७॥

निजगुणवर स्वामी शुद्धसंबोधनामी।
परगुण नहि लेशा एक ही भाव शेषा।
मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१७८॥
ॐ ह्रीं सिद्धगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥१७८॥

सब विधि-मल जारा बन्ध-संसार टारा।
जगजिय हितकारी उच्चता पाय सारी ॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१७९॥
ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मास्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥१७९॥

पर-परणति-खण्डं भेदबाधा-विहण्डं।
शिवसदन निवासी नित्य स्वानंदरासी ॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८०॥
ॐ ह्रीं सिद्धाखण्डस्वरूपाय नमः अर्घ्यं०।

चितसुखविलसानं आकुलं भावहानं।
निज अनुभवसारं द्वैतसंकल्पटारं ॥

मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८१॥
ॐ ह्रीं सिद्धचिदानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं०।

परकरणनिवारं भाव संभाव धारं।
निज अनुपम ज्ञानं सुक्खरूपं निधानं ॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८२॥
ॐ ह्रीं सिद्धसहजानन्दाय नमः अर्घ्यं०।

विधिवश सब प्रानी हीन-आधिक्य ठानी।
तिस करण निमूला पायरूपा धरूला ॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८३॥
ॐ ह्रीं सिद्धाच्छेदरूपाय नमः अर्घ्यं०।

जब लग परजाया भेद नाना धराया।
इक शिवपद माहीं भेद आभास नाहीं ॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८४॥
ॐ ह्रीं सिद्धाभेदगुणाय नमः अर्घ्यं०।

अनुपम गुणधारी लोक संभावटारी।
सुरनरमुनि ध्यावें सो नहीं पार पावें ॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८५॥
ॐ ह्रीं सिद्धानुपमगुणाय नमः अर्घ्यं०।

जिस अनुभव सरसै धार आनंद वरसै।
अनुपम रस सोई स्वाद जासो न कोई ॥

मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।

भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८६॥

ॐ ह्रीं सिद्ध-अमृतस्वाय नमः अर्घ्यं०।

सब श्रुत विस्तारा जास माहीं उजारा।

यह निजपद जानो आत्म संभावमानो॥

मनवचतन लाई पूजहों भक्तिभाई।

भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८७॥

ॐ ह्रीं सिद्धश्रुतप्राप्ताय नमः अर्घ्यं०।

दोधक

जीव-अजीव सबै प्रतिभासो, केवल जोति लहो तम नाशो।

सिद्ध-समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिद्धकेवल प्राप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥१८८॥

चेतनरूप सदेश बिराजै, आकृतिरूप अलिंग सु छाजै।

सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिसद्धाकारनिराकाराय नमः अर्घ्यं० ॥१८९॥

नांहि गहैं पर आश्रित जानो, जो अवलम्ब बिना पद मानो।

सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं निरालम्बाय नमः अर्घ्यं० ॥१९०॥

राग-विषाद बसै नहिं जामें, जोग वियोग भोग नहिं तामैं।

सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिद्धि निकलंकाय नमः अर्घ्यं० ॥१९१॥

ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म-समूह विनाश भयो है।

सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिद्धतेजःसंपन्नाय नमः अर्घ्यं० ॥१९२॥

आतमलाभ निजाश्रित पाया, द्वैत विभाव समूल नसाया।

सिद्ध-समूह जजों मन लाई, कलाप पाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिद्धआत्मसंपन्नाय नमः अर्घ्यं० ॥१९३॥

मोतियादाम

चहूं गति काय-स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अनूप अलक्ष।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरो चरणांबुजको निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धगर्भवासाय नमः अर्घ्यं० ॥१६४॥

निजानन्द श्रीयुत् ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाय।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुजको निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धलक्ष्मीसंतर्पकाय नमः अर्घ्यं० ॥१६५॥

सुभाव निजातम अन्तरलीन, विभाव परातम आपद कीन।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुजको निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धान्तराकाराय नमः अर्घ्यं० ॥१६६॥

जहां लग द्वेष प्रवेश न होय, तहां लग सार रसायन होय।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ धरो चरणांबुजको निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाररसाय नमः अर्घ्यं० ॥१६७॥

जिसो निरलेप हुए विषतुंव्य, तिसो जग अग्र निराश्रय लुंव्य।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुजको निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नमः अर्घ्यं० ॥१६८॥

तिहूं जग शीस विराजत नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नमः अर्घ्यं ॥१६६॥

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ धरो चरणांबुज को निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२००॥

अडिल्ल

ऋषभ आदि चितधारि प्रथम दीक्षा धरो,
केवलज्ञान उपाय धर्मविधि उच्चरी।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,

परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०१॥

ॐ ह्रीं सूरिभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

निज ही निज उर धार हेत सामर्थ है,

आत्मशक्ति कर व्यक्ति करण विधि व्यर्थ है ।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,

परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०२॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

साधन साधक साध्य भाव हवही गयो,

भेद अगोचर रूप महासुख संचयो ।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,

परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥२०३॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

तत्वप्रतीत निजातमरूप अनुभव कला,

पायो सत्यानंद कुमारग दलमला ।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,

परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०४॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्यक्त्वगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

वस्तु अनंत धर्म प्रकाशक ज्ञान है,

एकपक्ष हठ गृहित निपट असुहान है ।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,

परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०५॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

वस्तुधर्म समान ताहि अवलोकना,

शुद्ध निजातमधर्म ताहि नहीं लोपना ।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०६॥
ॐ ह्रीं सूरिदर्शनगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

अतुल अकम्प अखेद शुद्ध परिणति धरें,
जगतस्वरूप व्यापार न इक छिन आदरें ।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०७॥
ॐ ह्रीं सूरिवीर्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

षट्त्रिंशत गुण सूरि मोक्षफल पाइयो,
तातैं हम इन गुणकर ही जश गाइयो ।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०८॥
ॐ ह्रीं सूरिषट्त्रिंशत्गुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

पंचाचार आचार साथ शिवपद लियो,
वास्तव में ये गुण निजमें परगट कियो ।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०९॥
ॐ ह्रीं सूरिपंचाचारगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

गुण समुदाय सरूप द्रव्य आतम महा,
परसों भिन्न अभेद निजातम पद लहा ।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२१०॥
ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

वीतराग परणति रचही सुखकार जू,
परम शुद्ध स्वयं सिद्ध भयो अनिवार जू ।

निज स्वरूप थिति करण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२११॥
ॐ ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

चंचला

आप सुक्खरूप हो सु, और सौख्यकार होत,
ज्यूं घटादिको प्रकाशकार है सुबोप जोत ।
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एकही अभेद पक्षमान ॥२१२॥
ॐ ह्रीं सूरिमंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

संस अंश भान वस्तु भावको प्रकाशमान ।
ज्ञान इन्द्रिया-निन्द्रिया कहै उभै प्रमाण ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिज्ञानमंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२१३॥

लोक उत्तमा सु वसु कर्मको प्रसंग टार ।
शुद्ध बुद्ध रिद्ध पाय लोक वेदना निवार ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२१४॥

लोकभीत सो अतीत आदि अन्त एक रूप ।
लोक में प्रसिद्ध सर्व भाव को अनूप भूप ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिज्ञान लकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२१५॥

बीच में न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय ।
या अबाध धर्मको प्रकाश में करै सहाय ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिदर्शनलोकत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२१६॥

मोह भारको निवार, शुद्ध चेतना सुधार ।
यह वीर्यता अपार लोक में प्रसंसकार ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिवीर्यलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२१७॥

धर्म केवली महान, मोह अन्ध तेज भान ।
सप्त तत्वको बखानि, मोक्ष मार्ग को निधान ॥
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान ।
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥२१८॥
ॐ ह्रीं केवलधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

शील आदि पूर भेद कर्मके कलाप छेद ।
आत्म-शक्तिको प्रकाश शुद्ध चेतना विलास ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरितपेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२१९॥

लोक चाहकी न दाह, द्वेष को प्रवेश नाह ।
शुद्ध चेतना प्रवाह वृद्धता धरै अथाह ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिपरमतपेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२२०॥

मोह को न जोर जाय, घोर आपदा नसाय ।
घोरतैं तपो सु लोक-शीश जाय मुक्ति पाय ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिघर्मतपेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२२१॥

कामिनी कोहन

वृद्ध पर गुण गहन नित हो जहां,
शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहाँ ।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूं जोर कर मोक्षधामी भये ॥२२२॥
ॐ ह्रीं सूरिघोरगुणपराक्रमेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

एक सम-भाव सम और नहीं ऋद्धि है,
सर्वही ऋद्धि जाके भये सिद्ध है ॥सूरि०॥२२३॥
ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

जोगके रोकसे कर्म का रोक हो,
गुप्ति साधन किये साध्य शिवलोक हो ॥सूरि०॥४२२॥
ॐ ह्रीं सूरिसुयागिनेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

ध्यान-बल कर्म के नाशके हेतु है,

कर्मको नाश शिववास ही देत है ॥सूरि०

ॐ ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२२५॥

पंचधाचारमें आत्म अधिकार है,

बाह्य आधार-आधेय सुविकार है ॥सूरि०

ॐ ह्रीं सूरिधात्रिभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२२६॥

सूर सम आप परतेज करतार है,

सूर ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है ॥सूरि०

ॐ ह्रीं सूरिपात्रेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥२२७॥

बाह्य छत्तीस अन्तर अभेदातमा,

आप थिर रूप हैं सूर परमात्मा ॥सूरि०

ॐ ह्रीं सूरिगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२२८॥

ज्ञान उपयोग में स्वस्थिता शुद्धता,

पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही बुद्धता ॥सूरि०

ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२२९॥

शरण, दुख हरण, पर आपही शर्ण हैं,

आपने कार्य में आपही कर्ण हैं ॥सूरि०

ॐ ह्रीं सूरिशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२३०॥

दोहा

ज्यों कंचन बिन कालिमा, उज्जवल रूप सुहाय ।

त्योंही कर्म-कलंक बिन, निज स्वरूप दरसाय ॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२३१॥

भेदाभेद सु नय थकी, एक ही धर्म विचार ।

पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि करि उद्धार ॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२३२॥

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन ।
पूरण-ज्ञान स्वरूप यह पायो सूरि सुधीन ।।
ॐ ह्रीं सूरिज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।२३३।।

सुखाभास इन्द्रीजनित, त्यागी सूरि महन्त ।
पूरण-सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त ।।
ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।२३४।।

अनेकांत तत्वार्थ के, ज्ञाता सूरि महान ।
निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण ।।
ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।२३५।।

मोहादिक रिपु नाशिके, सूर्य महा सामर्थ ।
शिव भामिन भरतार तिन, रमै साध निज अर्थ ।।
ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।२३६।।

पद्धड़ी

जिन निज-आतम निष्पाप कीन, ते सन्त करें पर पाप छीन ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ।।
ॐ ह्रीं सूरिमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।२३७।।

रत्नत्रय जीव सुभावभाय, भवि पतित उधारण हो सहाय ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ।।
ॐ ह्रीं सूरिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।२३८।।

तपकर ज्यों कंचन अग्नि जोग, ह्वै शुद्ध निजातम पद मनोग ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ।।
ॐ ह्रीं सूरितपशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।२३९।।

एकाग्र-चित्त चिन्ता निरोध, पावें अबाध शिव आतमबोध ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ।।
ॐ ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।२४०।।

केवलज्ञानादि विभूति पाइ, ह्वै शुद्ध निरंजन पद सुखाइ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२४१॥

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक माँहि, या सम दूजो सुखदाय नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२४२॥

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुँ काल भव्य पावैं निर्वाण।
शिवगम प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२४३॥

मधि अधो उर्द्ध तिहुँ जगतमाँहि,सब जीवन सुखकर और नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलाय नमः अर्घ्यं० ॥२४४॥

तिहुं लोकमाँहि सुखकार आप, सत्यारथ मंगल हरण पाप।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२४५॥

उत्तम मंगल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिव-सुख-स्वरूप।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलोत्तमशरणा नमः अर्घ्यं० ॥२४६॥

शरणागत दुखनाशन महान,तिहुं जग हितकारण सुख निधान।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२ ७॥

तिहुं लोकनाथ तिहुं लोक पूज्य, शरणागत प्रतिपालन अदूज्य।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमण्डनशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२४८॥

अव्यय अपूर्व सामर्थ युक्त, संसारातीत विमोहमुक्त।
शिवमग पगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिमण्डल शरणाय नमः अर्घ्यं० ॥२४९॥

त्रोटक

निज रूप अनूप लखें सुख हो, जग में यह मंत्र महान कहो।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२५०॥

जिम नागदेव वश मंत्र विधि, भव वास हरण तुम नाम निधि।
धरि भक्ति हिहे गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥२५१॥

जगमोहित जीव न पावत है, यह मंत्र सु धर्म कहावत है।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरिधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥२५२॥

चितरूप चिदातम भाव धरें, गुण सार यही अविरुद्ध करें।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरिचैतन्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२५३॥

अविकार चिदातम आनन्द हो, परमातम हो परमानन्द हो।
धरि भक्ति हिये गणराज्य सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरिचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥२५४॥

निज ज्ञान प्रमाण प्रकाश करैं, सुख रूप निराकुलता सु धरैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिवावस करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरिज्ञानानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥२५५॥

धरि योग महा शम भाव गहैं, सुख राशि महा शिववास लहैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिवास करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरिशमभावाय नमः अर्घ्यं० ॥२५६॥

सम भाव महा गुण धरत हैं, निज आनन्द भाव निहारत हैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥
ॐ ह्रीं सूरितपोगुणानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥२५७॥

शिवसाधनको विघिनाश कहा, विघिनाशनको तप कर्म महा।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा प्रणमूं शिववास करें सुखदा॥
ॐ ह्रीं सूरितपोगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२५८॥

निज आत्म विषैं नित मगन रहैं,जगके सुख मूल न भूलि चहैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा प्रणमूं शिववास करें सुखदा॥
ॐ ह्रीं सूरिहंसाय नमः अर्घ्यं० ॥२५९॥

बनवास उदास सदा जगतें, पर आस न खास विलास रतें।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा प्रणमूं शिववास करें सुखदा॥
ॐ ह्रीं सूरिहंसगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥२६०॥

निज नाम महागुण मंत्र धरें, छिन मात्र जपे भवि आश वरें।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा प्रणमूं शिववास करें सुखदा॥
ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रगुणानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥२६१॥

परमोत्तम सिध परियाय कही, अति शुद्ध प्रसिध सुखात्म मही।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा प्रणमूं शिववास करें सुखदा॥
ॐ ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥२६२॥

माला

शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै।
मिथ्यातम हरि भवि आनन्द करि अनुभव भाव दरसै॥
सूरि निज भेद कियो परसैं
भये मुक्त मैं नमूं शीश नित जोर युगल करसैं॥टेक॥
ॐ ह्रीं सूरि-अमृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं० ॥२६३॥

पूरण चन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान-सुधा बरसै।
भवि चकोर चित चाहत नित मनु चरण जोति परसै॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिसुधाचन्द्रस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२६४॥

जगजिय ताप निवारण कारण विलसे अन्तर सैं।
देव सुधा सम गुण निवाहकर, सकल चराचर सैं ॥सूरि०॥
सूरि निज भेद कियो परसैं
भये मुक्त मैं नमूं शीश नित जोर युगल करसैं ॥टेक॥
ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नमः अर्घ्यं० ॥२६५॥

जा धुनि मुनि संशय विनसै जिम ताप मेघ वरसै।
मनहु कमल मकरन्द वृन्द अलि पाय सुधा सरसै ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नमः अर्घ्यं० ॥२६६॥

अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यों मयूर हरसै,
गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसैं ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरि-अमृतध्वनिसुरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२६७॥

चकोर

जो अपने गुण वा पर्याय, वरं निज धर्म न होत विनास।
द्रव्य कहावत है सु अनन्त स्वभाव धरे निज आतम विलास॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम भये सुख काम नमूं वसु जाम॥
ॐ ह्रीं सूरिद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥२६८॥

ज्यों शशि जोति रहै सियरा नित,
ज्यों रवि जोति रहै नित ताप।
त्यों निज ज्ञानकला परपूरण,
राजत हो निज कारण सु आप ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥२६९॥

हो अविनाश अनूपमरूप सु,
ज्ञानमई नित केलि करान।
पै न तजै मरजाद रहै,
जिम सिन्धु कलोल सदा परिणाम ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ॥२७०॥

जे कछु द्रव्य तनो गुण है,
सु समस्त मिलै गुण आतम माहीं ।
ताकरि द्रव्य सरूप कहावत,
है अविनाश नमैं हम ताईं ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२७१॥

जा गुण में गुण और न हो,
निज द्रव्य रहै नित और ठौर ।
सो गुण रूप सदा निवसैं,
हम पूजत हैं करके कर जोर ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरिगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२७२॥

जो परिणाम धरैं तिनसों,
तिनमें करहै वरतै तिस रूप ॥
सो पर्याय उपाय बिना नित,
आप विराजत है सु अनूप ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिपर्याय स्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२७३॥

हो नित ही परणाम समय प्रति,
सो उत्पाद कहो भगवान ॥
सो तुम भाव प्रकाश कियो,
निज यह गुण का उत्पाद महान ॥सूरि०
ॐ ह्रीं सूरि गुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं० ॥२७४

ज्यों मृतिका निज रूप न छांडत,
है घटिमांहि अनेक प्रकार ।
सो तुम जीव स्वभाव धरो नित,
मुक्त भए जगवास निवार ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिध्रवगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं ० ॥२७५॥

ये जगमें सब भाव विभाव,
परा श्रित रूप अनेक प्रकार ॥
ते सब त्याग भये शिवरूप,
अबंध अमन्द महा सुखकार ॥
सूरिकहाय सु कर्म खिपाइ,
निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम,
भये सुख काम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिव्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं० । २७६॥

जे जगमें षट्-द्रव्य कहे,
तिनमें इक जीव सुज्ञान स्वरूप ॥
और सभी बिन-ज्ञान कहे,
तुम राजत हो नित ज्ञान अनूप ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वाय नमः अर्घ्यं० ॥२७७।

ज्ञान सुभाव धरो नित ही,
नहिं छांड़त हो कबहूं निज बान ।
ये ही विशेष भयो सबसों,
नहीं औरनमें गुण ये परधान ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥२७८।

हो कर्तादि अनेक सुभाव,
निजातम में परमं अनिवार ।
सो परको न लगाव रहो,
निजहो निजकर्म रहो सुखकार ॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिनिजस्वभावधारकाय नमः अर्घ्यं० ॥२७९॥

द्रव्य तथापि, विभाव दोऊ विधि,
कर्म प्रवाह वहै बिन आदि ।
ते सब एक भये थिररूप,
निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद ॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरि-आश्रवविनाशाय नमः अर्घ्यं० ॥२८०॥

मोदक

बंध दऊ विधिके दुख कारण,
नाश कियो भवपार उतारण ।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर,
सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ॥टेक॥

ॐ ह्रीं सूरिबन्धतत्त्वविनाशाय नमः अर्घ्यं० ॥२८१॥

संवरतत्व महा सुख देत है ।
आश्रव रोकनको यह हेत है ॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वसहिताय नमः अर्घ्यं० ॥२८२॥

ज्यूं नशि दीप अडोल अनूपही ।
संवर तत्व निराकुलरूप ही ॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसवरतत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२८३॥

संवरके गुण ते मुनि पावहिं ।
जो मुनि शुद्ध सुभाव सु ध्यावत ॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥२८४॥

संवर धर्मतनी शिव पावहिं ।
संवर धरम तहां दरशावहि ॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥२८५॥

दोहा

एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप ।
नमूं निरजरा तत्व सो, पायो सिद्ध अनूप ॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वाय नमः अर्घ्यं० ॥२८६॥

शुद्ध सुभाव जहां तहां, कहो कर्मको नाश।
एम निरजरा तत्वका, रूप कियो परकाश॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२८७॥

कोटि जन्मके विघन सब, सूखे तृण सम जान।
दहे निर्जरा अग्निसों, इस गुण है परधान॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२८८॥

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म।
धर्मी सोई आतमा, एक हि रूप सुपर्म॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वपाय नमः अर्घ्यं० ॥२८९॥

समय समय गुणश्रेणि का, खिरैं कर्म बल ध्यान।
ये सम्बन्ध निवार करि, करैं मुक्ति सुख पान॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबंधाय नमः अर्घ्यं० ॥२९०॥

अतुल शक्ति थिर भावकी, सो प्रगटी तुम माहिं।
यही निर्जरा रूप है, नमूं भक्ति कर ताहि॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२९१॥

सर्व कर्म के नाश बिन, लहै न शिव-सुखरास।
निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नमः अर्घ्यं० ॥२९२॥

सकल कर्ममल नाशतें, शुद्ध निरंजन रूप।
ज्यों कंचन विन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥२९३॥

द्रव्य-भाव दोनों सु विधि, करैं जगतमें वास।
द्वैविध बन्ध उखारिकैं, भये मुक्त सुखरास॥
ॐ ह्रीं सूरिबन्धमोक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥२९४॥

पर विकलप सुख नहीं, अनुभव निज आनन्द ।
जन्म-मरण विधि नाशकर, राजत शिवसुख कन्द ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥२९५॥

जहाँ न दुखको लेश है, उदय कर्म अनुसार ।
सो शिवपद पायो महा, नमूं भक्ति उर धार ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥२९६॥

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध हैं, तिनसों नित्त प्रबन्ध ।
जे जगवास विलास दुख, तिनकूं नमूं अबन्ध ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुबन्धाय नमः अर्घ्यं० ॥२९७॥

जैसी निज तन आकृती, तज कीनो शिववास ।
ते तैसें नित अचल हैं ज्ञानानन्द प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घ्यं० ॥२९८॥

क्षयोपशम परिणाम कर साधन निजका रूप ॥
वा निजपदमें लीनता, ये ही गुप्त-स्वरूप ॥
ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नमः अर्घ्यं० ॥२९९॥

इन्द्रियजनित न दुख जहाँ, सदा निजानन्दरूप ॥
निर-आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप ॥
ॐ ह्रीं सूरिपरमात्म—स्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३०० ॥

रोला

सम्पूरण श्रुत-सार निजातम बोध लहानो,
निजअनुभव शिवमूल मानु उपदेश करानो ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥
ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥३०१॥

मुक्ति मूल है आत्मज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी ।
तत्व-ज्ञान सों लहै निजातम पद सुखदानी ॥

शिष्यन के अज्ञान हरैं ज्यूं रवि अन्धियारा ।
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ।।टेक।।
ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनाय नमः अर्घ्यं० ।।३०२।।
भवसागर तें भव्य जीव तारण अनिवारा ।
तुममें यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।।३०३।।
दर्शन ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपो ।
हीनाधिक बिन अचल विराजत शुद्ध सरूपी ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।।३०४।।
निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरै है ।
तिहुं काल प्रति अन्य भाव नहीं ग्रहण करै है ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ।।३०५।।
सहभावी गुण सार जहां परभाव न लेसा ।
अगुरुलघू परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।।३०६।।
गुण समुदाय द्रव्य याहितें निरगुण नाहीं ।
सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माहीं ।।शिष्यनके०
ॐ ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ।।३०७।।
सत सरूप सब द्रव्य सधै नीके अबाधकर ।
सो तुम सत्य सरूप विराजो द्रव्य भाव धर ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।३०८।।
जे जे हैं परनाम बिना परनामी नाहीं ।
परनामी परनाम एक ही हैं तुम माहीं ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ।।३०९।।
अगुरुलघू पर्याय शुद्ध परनाम बखानी ।
निज सरूपमें अन्तरगत श्रुतज्ञान प्रमानी ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।३१०।।

जगतवास सब पापमूल जियको दुखदाई ।
ताको नाशन हेतु कहो शिव मूल उपाई ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकमंगलाय नमः अर्घ्यं० ।।३११।।

जहाँ न दुखको लेश सर्वथा सुख ही जानो ।
सोई मंगल गुण तुममें प्रत्यक्ष लखानो ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकमंगलगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।३१२।।

औरन मंगलकरन आप मंगलमय राजैं ।
दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजैं ।।शिष्यनके०
ॐ ह्रीं पाठकमंलगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।३१३।।

आदि अनन्त अविरुद्ध शुद्ध मंगलमय मूरति ।
निज सरूपमें बसैं सदा परभाव विदूरति ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमंगलाय नमः अर्घ्यं० ।।३१४।।

जितनी परणति धरौ सबहि मंगलमय रूपी ।
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी ।।शिष्यके०।।
ॐ ह्रीं पाठकमंगलपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ।।३१५।।

निश्चय वा विवहार सर्वथा मंगलकारी ।
जग जीवनके विघन विनाशन सर्व प्रकारी ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायमंगलाय नमः अर्घ्यं० ।।३१६।।

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व बखानो ।
वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमंगलाय नमः अर्घ्यं० ।।३१७।।

सब विशेष प्रतिभासमान मंगलमय भासे ।
निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे ।।शिष्यनके०।।
ॐ ह्रीं पाठकस्वरूपमंगलाय नमः अर्घ्यं० ।।३१८।।

पायत्ता

निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मंगल सोई।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥
ॐ ह्रीं पाठकमंगलोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥३१६॥

जग जीवनको हम देखा, तुम ही गुण सार विशेखा ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥३२०॥

षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठद्रव्यलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥३२१॥

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥३२२॥

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम मानी ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानालोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥३२३॥

युगपत निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ॥३२४॥

हम सोवत हैं नित मोही, निरमोही लखे तुमको ही ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥३२५॥

दृगवंत महासुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३२६॥

निरशंस अनन्त अबाधा, निज बोधन भाव अराधा ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं० ॥३२७॥

सम्यक्त्व महासुखकारी, निज गुण स्वरूप अविकारी ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३२८॥

निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा ॥तुम गुण०॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥३२९॥

निज भोग कलेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त प्रदेशा ॥तुम०॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥३३०॥

परनाम सुथिर निज माहीं, उपजै न कलेस कदाही ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्याय नमः अर्घ्यं० ॥३३१॥

द्रव्य भाव लहो तुम जैसो, पावै जगजन नहिं ऐसो ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥३३२॥

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनंद सुभाव सु जीवत ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्याय नमः अर्घ्यं० ॥३३३॥

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ॥३३४॥

इकबार लखे सबही को, तद्रूप निजातम ही को ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३३५॥

सपरस आदिक गुण नाहीं, चिद्रूप निजातम माहीं ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥३३६॥

शरणागत दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३३७॥

जिनशरण गही शिव पायो, इम शरण महा गुण गायो ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३३८॥

अनुभव निज बोध करावै, यह ज्ञान शरण कहलावै ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३३९॥

दृग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३४०॥

निरभेद स्वरूप अनूपा, है शर्ण तनी शिव भूपा ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३४१॥

निज आत्म-स्वरूप लखाया, इह कारण शिवपद पाया ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३४२॥

आतम-स्वरूप सरधाना, तम शरण गहो भगवाना ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३४३॥

निज आतम साधन माहीं, पुरुषारथ छूटै नाहीं ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३४४॥

आतम शकती प्रगटावै, तब निज स्वरूप जिय पावै ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३४५॥
परमातम वीर्य महा है, पर निमित न लेश तहाँ है ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठवीर्यपरमात्मशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३४६॥
श्रुतद्वादशांग जिनवाणी, निश्चय शिववास करानी ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकद्वादशांगशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३४७॥
दश पूर्व महा जिनवाणी, निश्चय अघहर सुखदानी ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकदशपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं० ॥३४८॥
दश चार पूर्व जिनवानी, निश्चय शिववास करनी ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकचतुर्दशपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं० ॥३४९॥
निज आतम चर्ण प्रकटावै, आचार अंग कहलावै ॥तुम॥
ॐ ह्रीं पाठकाचारांगाय नमः अर्घ्यं० ॥३५०॥

रेखता

विविध शंकादि तुम टारी, निरन्तर ज्ञान आचारी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाचाराय नमः अर्घ्यं० ॥३५१॥
पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकतपसाचाराय नमः अर्घ्यं० ॥३५२॥
मुक्तपद दैन अनिवारी, सर्व बुध चर्ण आचारी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नमः अर्घ्यं० ॥३५३॥
शुद्ध रत्नत्रय धारी, निजातमरूप अविकारी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठरत्नत्रयसहायाय नमः अर्घ्यं० ॥३५४॥
ध्रौव्य पंचम-गती पाई, जन्म पुनि मर्ण छुटकाई ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकध्रुव असंसाराय नमः अर्घ्यं० ॥३५५॥
अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३५६॥

आन तुम सम न गुण होई, कहो एकत्व गुण सोई ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥३५७॥
निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोई परमात्म कहलाया ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वपरमात्मने नमः अर्घ्यं० ॥३५८॥
उच्चगत मोक्षका दाता, एक निजधर्म विख्याता ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥३५९॥
जु तुम चेतनता परकासी, न पावैं ऐसी जगवासी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वचेतनाय नमः अर्घ्यं० ॥३६०॥
ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वचेतनस्वरूपया नमः अर्घ्यं० ॥३६१॥
गहैं नित निज चतुष्टयको, मिलैं कबहूं नहीं परसों ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥३६२॥
स्वपद अनुभूत सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥३६३॥
अनन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि बाधक हो ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नमः अर्घ्यं० ॥३६४॥
स्वातम ज्ञान दरशाया, ये पूरण ऋद्धि पद पाया ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकऋद्धिपूर्णाय नमः अर्घ्यं० ॥३६५॥
सकल विधि मूरछात्यागी, तुम्हीं निरग्रन्थ बड़भागी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकनिर्ग्रन्थाय नमः अर्घ्यं० ॥३६६॥
निजाश्रित अर्थ जानाहीं अबाधित अर्थ तुम माहीं ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकार्थविधानाय नमः अर्घ्यं० ॥३६७॥
न फिर संसार पद पाया, अपूरब बन्ध विनसाया ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसंसारानतुबन्धाय नमः अर्घ्यं० ॥३६८॥
आप कल्याणमय राजो, सकल जगवास दुख त्याजो ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठककल्याणाय नमः अर्घ्यं० ॥३६९॥
स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥३७०॥

अहित अपरिहार पद जो हैं, परम कल्याण तासों है ॥
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥
ॐ ह्रीं पाठककल्याणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३७१।

स्वसुख द्रव्याश्रये माहीं, जहां कछु पर निमित नाहीं ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥३७२॥

जोहै सोहै अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥३७३॥

रहें नित चेतना माहीं, कहें चिद्रूप मुनि ताहीं ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३७४॥

सर्वथा ज्ञान परिणामी प्रकट है चेतना नामी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकचेतनाय नमः अर्घ्यं० ॥३७५॥

नहीं अन्यत्व भेदा है, गुणी गुण निर-विछेदा है ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकचेनागुणाय नमः अर्घ्यं० ॥३७६॥

घटाघट वस्तु परकाशी, धरें हैं जोति प्रतिभाशी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकज्योतिप्रकाशाय नमः अर्घ्यं० ॥३७७॥

वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दर्श सिद्धोंका ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नमः अर्घ्यं० ॥३७८॥

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुति में प्रगट सारा ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नमः अर्घ्यं० ॥३७९॥

ज्ञानसों जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकजीवचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥३८०॥

चराचर वस्तु स्वाधीना, समय एकहि में लख लीना ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नमः अर्घ्यं० ॥३८१॥

सकल जीवों के सुख कारन,शरण तुमही हो अनिवारन ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसकलशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३८२॥

तुम हो त्रयलोक हितकारी, अद्वितीय शर्ण बलिहारी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकत्रैलोक्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३८३॥

तुम्हारी शर्ण तिहुं काला, करन जग जीव प्रतिपाला ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकत्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं० । ३८४॥
शरण अनिवार सुखदाई, प्रगट सिद्धान्त में गाई ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकत्रिमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३८५॥
लोकमें धर्म विख्याता सो तुमही में सुखसाता ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकलोकशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३८६॥
जोग बिन आश्रवै नाहीं, भये निर आश्रवा ताही ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकाश्रवावेदाय नमः अर्घ्यं० ॥३८७॥
आश्रव कर्म का होना, कार्य था आपना खोना ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठाश्रवविनाशाय नमः अर्घ्यं० ॥३८८॥
तत्त्व निर्बाध उपदेशा, विनाशे कर्म परवेशा ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-आश्रवोपदेशछेदकाय नमः अर्घ्यं० ॥३८९॥
प्रकृति सब कर्मकी चूरी भाव मल नाश दुख पूरी ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकबन्ध-अन्तकाय नमः अर्घ्यं० ॥३९०॥
न फिर संसार अवतारा, बन्ध-विधि अन्त कर डारा ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकबन्धमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥३९१॥
आश्रव कर्म दुखदाई, रुके संवर ये सुखदाई ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसंवरस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३९२॥
सर्वथा जोग विनसाया, स्व-संवररूप दरशाया ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसंवरस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३९३॥
कलुषता भावमें नाहीं, भये संवर करण नाहीं ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकसंवरकरणाय नमः अर्घ्यं० ॥३९४॥
कुपरणति राग-रुष नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३९५॥
कामदव दाह जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठककंदर्पच्छेदकाय नमः अर्घ्यं० ॥३९६॥
चहुं विधि बंध विधि चूरा, ये विस्फोटक कहो पूरा पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठककर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं० ॥३९७॥

वक्र विधि कर्मका खोना, सोई है मोक्ष का होना।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥३६८॥
द्रव्य अर भाव मल टारा, नमूं शिवरूप सुखकारा ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३६६॥
अरति-रति पर-निमित खोई, आत्म-रति है प्रगट सोई ॥पूर्ण०॥
ॐ ह्रीं पाठक-आत्मरतये नमः अर्घ्यं० ॥४००॥

लोलतरंग तथा बड़ी चौपाई

अठाईस मूल सदा गुण धारी, सो सब साधु वरें शिवनारी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥४०१॥
मूल तथा सब उत्तर गाये, ये गुण पालत साधु कहाये ॥साधु०॥
ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४०२॥
साधुनके गुण साधुहि जाने, होत गुणी गुणही परमाने ॥साधु०॥
ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४०३॥
नेम थकी विश्वास करे जो, द्रव्य थकी शिवरूप करै जो ॥साधु०॥
ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥४०४॥
जीव सदा चित भाव विलासी,आपही आप सधै शिवराशी ॥साधु०
ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥४०५॥
ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रतिभासी ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥४०६॥
एकहि बार लखाय अभेदा, दर्शनको सब रोग विछेदा ॥साधु०॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ॥४०७॥
आपहि साधन साध्य तुम्हीं हो,एक अनेक अबाध तुम्हीं हो ॥साधु
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नमः अर्घ्यं० ॥४०८॥

चेतनता निजभाव न छारे, रूप स्पर्शन आदि न धारें ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४०९॥

जो उतपाद भये इकबारा, सो निरबाध रहै अविकारा ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥४१०॥

है परनाम अभिन्न प्रणामी, सो तुम साधु भये शिवगामी ॥साधु०

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ॥४११॥

जो गुण वा परियाय धरो हो, सो निज माहिं अभिन्न वरो हो ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ॥४१२॥

मंगलमय तुम नाम कहावै, लेतहि नाम सु पाप नसावै ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलाय नमः अर्घ्यं० ॥४१३॥

मंगल रूप अनूप सोहै, ध्यान किये नित आनन्द होहै ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४१४॥

पाप मिटै तुम शरण गहेतें, मंगल शरण कहाय लहैतें ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४१५॥

देखत ही सब पाप नसे हैं, आनन्द मंगलरूप लसे हैं ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ॥४१६॥

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटै तिनहीके ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥४१७॥

ज्ञानमई तुम हो गुणरासा, मंगल ज्योति धरो रविकासा ॥साधु०

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणमंगलाय नमः अर्घ्यं० ॥४१८॥

मंगल वीर्य तुम्हीं दर्शाया, काल अनन्त न पाप लगाया ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यमंगलाय नमः अर्घ्यं० ॥४१९॥

वीर्य महा सुखरूप निहारा, पाप बिना नितही अविकारा ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यमंगलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४२०॥

मंगल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थहिं मोक्ष लहामी ॥साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यपरममंगलाय नमः अर्घ्यं० ॥४२१॥

वीर्य स्वभाविक पूर्ण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा ॥साधु०

ॐ ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥४२२॥

तीन हि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥४२३॥

लोक सभी विधि बन्धन माहीं, तुम सम रूप धरे ते नाहीं ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥४२४॥

लोकनके गुण पाप कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा ॥साधु०॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४२५॥

लोक अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥४२६॥

लोक सभी षट्द्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया ॥साधु०॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४२७॥

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक विषैं अरु को है ॥साधु॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥४२८॥

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहै इम सारा ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४२९॥

देखनमें कुछ आड़ न आवै, लोग तनी सब उत्तम गावैं ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ॥४३०॥

देखन जानन भाव धरो हो, उत्तम लोकके हेतु गहै हो ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ॥४३१॥

जाकर लोकशिखर पद धारा, उत्तम धर्म कहो जग सारा ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥४३२॥

धर्म स्वरूप निजातम मांही, उत्तम लोक विषैं ठहराई ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४३३॥

अन्य सहाय न चाहत जाको, उत्तम लोक कहै बल ताको ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥४३४॥

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४३५॥

पूरण आतमकला परकाशी,लोक विषैं अतिशय अविनाशी ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमातिशयाय नमः अर्घ्यं० ॥४३६॥
राग-विरोध न चेतन मांही, ब्रह्म कहो जग उत्तम ताही ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥४३७॥
ज्ञान-स्वरूप अकम्म अडोला, पूरण ब्रह्म प्रकाश अटोला ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४३८॥
राग विरोध जयो शिवगामी, आतम अनातम अन्तरजामी ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥४३९॥
भेद बिना गुण-भेद धरो हो,सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हो ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं० ॥४४०॥
साधत आतम पुरुष सखाई, उत्तम पुरुष कहो जग ताई ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमपुरुषाय नमः अर्घ्यं० ॥४४१॥
साधु समान न दीनदयाला, शरण गहै सुख होत विशाला ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४४२॥
जे जन साधु शरण गही है, ते शिव आनन्द लब्धि लही है ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुरुशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४४३॥
साधुनके गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे ॥साधु०
ॐ ह्रीं साधुगुणद्रव्यशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४४४॥

लावनी

तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी,
इम शरण गहै पावै निश्चय शिवरानी।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साध सम सिद्ध अकंप विराजै ॥टेक॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमोऽर्घ्यं० ॥४४५॥
तुम अनुभव करि शुद्धोपयोग मन धारा।
यह ज्ञान शरण पायो निश्चै अविकारा ॥निजरूप०॥
ॐ ह्रीं साधुज्ञानशरणाय नमोऽर्घ्यं ॥४४६॥

निज आतमरूपमें दृढ़ सरधा तुम पाई ।
थिर रूप सदा निवसों शिववास कराई ॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरैं मुनिराजै,
मैं नमूं साध सम सिद्ध अकंप विराजै ॥
ॐ ह्रीं साधु-आत्मशरणाय नमोऽर्घ्यं० ॥४४७॥

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा ।
तुम निरावरण निरद्वंद स्वदर्श स्वरूपा ॥निजरू०॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शस्वरूपाय नमोऽर्घ्यं० ॥४४८॥

तुम परम पूज्य परमेश परमपद पाया ।
हम शरण गही पूजें नित मनवचनकाया ॥निजरूप०॥
ॐ ह्रीं साधुपरमात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं ॥४४९॥

तुम मन इन्द्री व्यापार जीत सु अभीता ।
हम शरण गही मनु आज कर्मरिप जीता ॥निजरूप०॥
ॐ ह्रीं साधुनिजात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं० ॥४५०॥

भववास दुखी जे शरण गहैं तुम मन में ।
तिनको अवलम्ब उभारो भयहर छिन में ॥निजरूप०॥
ॐ ह्रीं साधुबोधशरणाय नमोऽर्घ्यं० ॥४५१॥

दृग बोध अनन्तानन्त निरखेदा ।
तुम बल अपार शरणागति विघनविछेदा ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं० ॥४५२॥

निज ज्ञानानन्दी महा लक्षिमी सोहै ।
सुर असुरनमें नित परम मुनी मन मोहै ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीअलंकृताय नमोऽर्घ्यं० ॥४५३॥

भववास महा दुखरास ताहि विनशाया ।
अति क्षीन लीन स्वाधीन महासुख पाया ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीप्रणीताय नमोऽर्घ्यं० ॥४५४॥

त्रिभुवन का ईश्वरपना तुम्हीं में पाया।
त्रिभुवनके पातिक हरौ मनू रवि-छाया ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीरूपाय नमोऽर्घ्यं० ॥४५५॥

तुम काल अनंतानंत अबाध विराजो।
परनिमित विकार निवार सु नित्य सु छाजो ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुध्रुवाय नमोऽर्घ्यं० ॥४५६॥

तुम छायाकलब्धि प्रभाव परम गुणधारी।
निवसौ निज-आनंद मांहि अचल अविकारी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमोऽर्घ्यं० ॥४५७॥

तेरम चौदस गुणथान द्रव्य है जैसो।
रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणध्रुवाय नमः अर्घ्यं० ॥४५८॥

फिर जन्ममरण नहीं होय जन्म वो पाया।
संसार-विलक्षण निज अपूर्व पद पाया ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमोऽर्घ्यं० ॥४५९॥

सूक्षम अलब्धि पर्याप्त निगोद शरीरा।
ते तुच्छ द्रव्य करनाश भये भवतीरा ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यापिने नमोऽर्घ्यं० ॥४६०॥

रागादि परिग्रह टारि तत्त्व सरधानी।
इम साधु जीव निज साधत शिवसुखदानी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुजीवाय नमोऽर्घ्यं० ॥४६१॥

स्वसंवेदन विज्ञान परम अमलाना।
तज इष्ट-अनिष्ट विकल्प जाल दुखदाना ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुजीवगुणाय नमः अर्घ्यं ॥४६२॥

देखन जानन चेतन सु रूप अविकारी।
गुण-गुणी भेदमें अन्त भेद व्यभिचारी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुचेतनगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥४६३॥

चेतनकी परिणति रहै सदा चित माहीं ।
ज्यों सिंधु लहर ही सिंधु और कछु नाहीं ॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साध सम सिद्ध अकंप बिराजै ॥
ॐ ह्रीं साधुचेतनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४६४॥

चेतनविलास सुखरास नित्य परकाशी ।
सो साधु दिगम्बर साधु भये अविनाशी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुचेतनाय नम. अर्घ्यं० ॥४६५॥

तुम असाधारण अरु परमात्मप्रकाशी ।
नहीं अन्य जीव यह लहै गहै भवभासी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुपरमात्मप्रकाशाय नमः अर्घ्यं० ॥४६६॥

तुम मोह तिमिर बिन स्वयं सूर्य परकाशी ।
गुणद्रव्यपर्य सब भिन्न-भिन्न प्रतिभासी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुज्योतिस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४६७॥

ज्यों घटपटादि दीपक की ज्योति दिखावै ।
त्यों ज्ञानज्योति सब भिन्न-भिन्न दरशावै ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घ्यं० ॥४६८॥

सामान्यरूप अवलोकन युगपत सारा ।
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरै अंधियारा ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शनज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घ्यं० ॥४६९॥

साकार रूप सु विशेष ज्ञानद्युति माहीं ।
युगपत कर प्रतिबिंबित वस्तु प्रगटाई ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुज्ञानज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घ्यं० ॥४७०॥

जे अर्थजन्य कहैं ज्ञान वो झूठेवादी ।
है स्वपर-प्रकाशक आतम-ज्योति अनादी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधु-आत्मज्योतिषे नमः अर्घ्यं० ॥४७१॥

है तारणतरण जहाजाश्रित भवसागर ।
हम शरण गही पावैं शिववास उजागर ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४७२॥

सामान्यरूप सब साधू मुक्ति-मग साधैं ।
हम पावैं निजपद नेमरूप आराधैं ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुसर्वशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४७३॥

त्रसनाडी ही में तत्वज्ञान सरधानी ।
ताकर साधैं निश्चय पावैं शिवरानी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुलोकशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४७४॥

तिहुंलोक करन हित वरते नित उपदेशा ।
हम शरण गही मेटो भववास कलेशा ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥४७५॥

संसार विषम दुखकार असार अपारा ।
तिस छेदक वेदक सुखदायक हितकारा ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुसंसारछेदकाय नमः अर्घ्यं० ॥४७६॥

यदपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजैं ।
तदपि निज सत्ता माँहि भिन्नता साजैं ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुएकत्वाय नमः अर्घ्यं० ॥४७७॥

यदपि सामान्य-सरूप सु पूरणज्ञानी ।
तदपि निज आश्रयभाव भिन्न परनामी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुएकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥४७८॥

है असाधारण एकत्वद्रव्य तुम माहीं ।
तुम सम संसार मंझार और कोउ नाहीं ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुएकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥४७९॥

यदपि सब ही हो असंख्यात परदेशी ।
तदपि निजमें निजरूप स्वद्रव्य सुदेशी ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥४८०॥

सामान्यरूप सब ब्रह्म कहा वैज्ञानी ।
तिनमें तुम वृषभ सु परमब्रह्म परणामी ॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरें मुनिराजै,
मैं नमूं साध सम सिद्ध अलंप बिराजै ॥
ॐ ह्रीं साधुपरब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥४८१॥
सापेक्ष एक ही कहे सु नय विस्तारा ।
तुम भाव प्रकटकर कहै सुनिश्चैकारा ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुपरमस्याद्वादाय नमः अर्घ्यं० ॥४८२॥
है ज्ञाननिमित यह वचन जाल परमाणा ।
है वाचक-वाच्य संयोग ब्रह्म कहलाना ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुशुद्धब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥४८३॥
षट्द्रव्य निरूपण करें सोई आगम हो ।
तिसके तुम मूलनिधान सु परमागम हो ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुपरमागमाय नमः अर्घ्यं० ॥४८४॥
तीर्थेश कहैं सर्वज्ञ दिव्य धुनि माहीं ।
तुम गुण अपार इम कहो जिनागम ताही ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुजिनागमाय नमः अर्घ्यं० ॥४८५॥
तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थ का वाची ।
ताके प्रबोध सों हो प्रतीत मन सांची ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधु-अनेकार्थाय नमः अर्घ्यं० ॥४८६॥
लोभाविक मेंटे बिन न शौचता होई ।
है वृथा तीर्थ-स्नान करो भी कोई ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुशौचाय नमः अर्घ्यं० ॥४८७॥
है मिथ्या मोह प्रबल मल इनका खोना ।
सो शुद्धशौच गुण यही, न तनका धोना ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुशुचित्वगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥४८८॥

इकदेश कर्ममल नाशि पवित्र कहायो ।
तुम सर्व कर्ममल नाशि परम पद पायो ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुपवित्राय नमः अर्घ्यं० ॥४८९॥

तुम रहो बंधसों दूरि एकांत सुखाई ।
ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिस माहीं ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुविमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥४९०॥

सब द्रव्य-भाव-नोकर्म बंध छुटकाया ।
तुम शुद्ध निरंजन निजसरूप थिर पाया ॥निज०॥
ॐ ह्रीं साधुबन्धमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥४९१॥

अडिल्ल

भावाश्रव बिन अतिशय सहित अबंध हो ।
मेघपटल बिन ज्यों रविकिरण अमंद हो ॥
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं ।
नमत निरंतर हम हुं कर्म रिपुको दहैं ॥टेक॥
ॐ ह्रीं साधुबन्धप्रतिबन्धकाय नमः अर्घ्यं० ॥४९२॥

निज स्वरूपमें लीन परम संवर करें ।
यह कारण अनिवार कर्म आवन हरें ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुसंवरकारणाय नमः अर्घ्यं० ॥४९३॥

पुद्गलीक परिणाम आठ विधि कर्म है ।
तिनकी करत निरजरा शुद्ध सु पर्म है ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जराद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ॥४९४॥

पर्म शुद्ध उपयोग रूप वरते जहाँ ।
छिनमें नन्तानन्त कर्म खिर है तहां ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जरानिमित्ताय नमः अर्घ्यं० ॥४९५॥

सकल विभाव अभाव निर्जरा करत है ।
ज्यों रवि तेज प्रचंड सकल तम हरत है ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जरागुणाय नमः अर्घ्यं० ॥४९६॥

जे संसार निमित्त ते सब दुख रूप है।
तुम शिव कारण शुद्ध अनूप हैं॥
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय साध हैं।
नमत निरंतर हम हुं कर्म रिपुको दहैं॥

ॐ ह्रीं साधुनिमित्तमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥४९७॥

संशयरहित सुनिश्चै सम्मतिदाय हो।
मिथ्या-भ्रम-तमनाशन सहज उपाय हो॥मोक्षमार्ग०॥

ॐ ह्रीं साधुबोधधर्माय नमः अर्घ्यं० ॥४९८॥

अति विशुद्ध निजज्ञान स्वभाव सु धरत हो।
भव्यनके संशय आदिक तम हरत हो॥मोक्षमार्ग०॥

ॐ ह्रीं साधुबोधगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥४९९॥

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो।
पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो॥मोक्षमार्ग०॥

ॐ ह्रीं साधुसुगतिभावाय नमः अर्घ्यं० ॥५००॥

जासो परे न और जन्म वा मरण है।
सो उत्तम उत्कृष्ट परम गति को लहै॥मोक्षमार्ग०॥

ॐ ह्रीं साधुकरमगतिभावाय नमः अर्घ्यं० ॥५०१॥

पर निमित्त रागादिक जे परनाम हैं।
इन विभाव सों रहित साधु शुभ नाम हैं॥मोक्षमार्ग०॥

ॐ ह्रीं साधुविभावरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५०२॥

निजभाव सामर्थ सु प्रभुता पाइयो।
इन्द्र-फनेन्द्र-नरेन्द्र शीश निज नाइयो॥मोक्षमार्ग०॥

ॐ ह्रीं साधुस्वभावसहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५०३॥

कर्मबंध सों रहित सोई शिवरूप हैं।
निवसे सदा अबंध स्वशुद्ध अनूप हैं॥मोक्षमार्ग०॥

ॐ ह्रीं साधुमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥५०४॥

सकल द्रव्य पर्याय विषैं स्वज्ञान हो।
सत्यारथ निश्चल निश्चै परमाण हो ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥५०५॥

तीन लोकके पूज्य यतीजन ध्यावहीं।
कर्म-शत्रु को जीत 'अर्हं' पद पावहीं ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधु-अर्हंत्स्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥५०६॥

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो।
तीन लोक परमेष्ट परमपद पाइयो ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुसिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घ्यं० ॥५०७॥

शिव-मारग प्रकटावन कारण हो तुम्हीं।
भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुसूरिप्रकाशिने नमः अर्घ्यं० ॥५०८॥

स्वपर सुहित करि परम बुद्धि भरतार हो।
ध्यान धरत आनन्द-बोध दातार हो ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधु-उपाध्यायाय नमः अर्घ्यं० ॥५०९॥

पंच परम गुरु प्रकट तुम्हारो नाम है।
भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधु-अर्हंतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥५१०॥

लोकालोक सु व्यापक ज्ञानसुभावतैं।
तदपि निजातम लीन विहीनविभावतैं ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधुआत्मरतये नमः अर्घ्यं० ॥५११॥

रतनत्रय निज भाव विशेष अनंत है।
पंच परमगुरु भये नमें नित संत हैं ॥मोक्षमार्ग०॥
ॐ ह्रीं साधु-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरत्नत्रयात्मकानन्त-गुणेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥५१२॥

पंच परम गुरु नाम विशेषण को धरैं।
तीन लोकमें मंगलमय आनन्द करैं॥

पूरणकर थुतिनाम अन्त सुख कारणं ।
पूजूं हूं युत भाव सु अर्घ उतारणं ।।
ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकपंचशतगुणयुतसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं० ।।

अथ जयमाला

रत्नत्रय भूषित महा, पंच सुगुरु शिवकार ।
सकल सुरेन्द्र नमें नमूं, पाऊं सो गुणसार ।।१।।

पद्धड़ी

जय महा मोहबल दलन सूर,
जय निर्विकल्प आनन्दपूर ।
जय द्वैविधि कर्म विमुक्त देव,
जय निजानन्द स्वाधीन एव ।।१।।

जय संशयादि भ्रमतम निवार,
जय स्वामिभक्ति द्युतिथुति अपार ।
जय युगपत सकल प्रत्यक्ष लक्ष,
जय निरावरण निर्मल अनक्ष ।।२।।

जय जय जय सुखसागर अगाध,
निरद्वन्द्व निरामय निर–उपाधि ।
जय मनवचतन व्यापार नाश,
जय थिरसरूप निज पद प्रकाश ।।३।।

जय पर-निमित्त सुख-दुख निवार,
निरलेप निराश्रय निर्विकार ।
निजमें परको परमें न आप,
परवेश न हो नित निर-मिलाप ।।४।।

तुम परम धरम अराध्य सार,
निज सम करि कारन दुर्निवार।
तुम पंच परम आचार युक्त,
नित भक्त वर्ग दातार मुक्त ॥५॥

एकादशांग सर्वांग पूर्व,
स्वैंअनुभव पायो फल अपूर्व।
अन्तर-बाहिर परिग्रह नसाय,
परमारथ साधू पद लहाय ॥६॥

हम पूजत निज उर भक्ति ठान,
पावें निश्चय शिवपद महान।
ज्यों शशि किरणावलि सियर पाय,
मणि चन्द्रकांति द्रवता लहाय ॥७॥

घत्ता

जय भव-भयहारं, बन्धविडारं, सुखसारं शिवकरतारं।
नित 'सन्त' सु ध्यावत, पाप नसावत, पावत पद निज अविकारं॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं०।

सोरठा

तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव-भय नशै।
"सन्त" सदा चित धार, शांति करो भवतप हरो॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

यहां १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ स नमः' मंत्र की जाप करें।

अष्टम पूजा

(एक हजार चौबीस गुण सहित)

छप्पय

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै।
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै॥
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर।
अग्रभागमें मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन्! चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र-गुणसहितविराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग॥

(इति यन्त्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

अथाष्टकं

गीता

निज आत्मरूप सु तीर्थ मग नित, सरस आनन्दधार हो।
नाशे त्रिविधि मल सकल दुखमय, भव-जलधिके पार हो॥

यातैं उचित ही हैं जु तुम पद, नीरसों पूजा करूं।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मनमें धरूं ॥टेक॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुण-संयुक्ताय जन्मजरारोगविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

शीतल सुरूप सुगन्ध चन्दन, एक भव तप नासही।
सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह, नहिं और ठौर सु बास ही॥
यातें उचित ही है जु तुम पद, मलयसों पूजा करूं ॥इक सहस०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र-गुणसंयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ॥२॥

अक्षय अबाधित आदि-अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो।
ज्यों तुम बिना तंदुल दिपै त्यूं, निखिल अमल अभाव हो॥
यातें उचित ही है जु तुम पद, अक्षतं पूजा करूं ॥इक सहस०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र-गुण संयुक्ताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥३॥

गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कंठ पहिरैं भावसों।
जिनके मधुपमन रसिक लुब्धित, रमत नित-प्रति चावसों॥
यातें उचित ही है जु तुम पद, पुष्पसों पूजा करूं ॥इक सहस०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुण-संयुक्ताय कामबाणविनाशनाय पुष्पं० ॥४॥

शुद्धात्म सरस सुपाक मधुर, समान और न रस कहीं।
ताके हो आस्वादी सु, तुम सम और संतुष्टित नहीं॥
यातें उचित ही है जु तुम पद, चरुनसों पूजा करूं ॥इक सहस०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुण-संयुक्ताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥५॥

स्वपर प्रकाश स्वभावधर ज्यूं, निज-स्वरूप संभारते।
त्यूं ही त्रिकाल अनंत द्रव, पर्याय प्रकट निहारते॥

यातैं उचित ही है जु तुम पद, दीपसों पूजा करूं ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मनमें धरूं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुण-संयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं० ॥६॥

वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि, ऊर्ध्वगमन स्वभावतैं ।
राजै अचल शिव थान नित्त, तिह धर्मद्रव्य अभावतैं ।
यातैं उचित ही हैं जु तुम पद, धूपसों पूजा करूं ॥इक सहस०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुण-संयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥७॥

सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा ।
तीर्थेश पदको स्वरुचिधर, अव्यय अमर शिवफल लहा ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, फलनसों पूजा करूं ॥इक सहस०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुण-संयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥८॥

अष्टांग मूल सु विधि हरो, निज अष्ट गुण पायो सही ।
अष्टार्द्ध गति संसार मेटि सु अचल ह्वै अष्टम मही ॥
यातैं उचित ही है जु तुमपद अर्घसों पूजा करूं ॥इक सहस०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुण-अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं० ॥९।

निर्मल सलिल शुभ वास चंदन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभपुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्माष्ट नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं ।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं ॥

कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अछूत शिवकमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुं गुण-गेह द्यो हम शुभ मती ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकं सहस्रगुण-सर्वसुख प्राप्तये महार्घ्यं० ।।

अथ एक सहस्र चौबीस गुण अर्घ्य

दोहा

इन्द्रिय विषय-कषाय हैं, अन्तर शत्रु महान ।
तिनको जीतत जिन भये, नमूं सिद्ध भगवान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाय नमः अर्घ्यं० ।।१।।

रागादिक जीते सु जिन, तिनमें तुम परधान ।
तातें नाम जिनेन्द्र हैं, नमूं सदा धरि ध्यान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं० ।।२।।

रागादिक लवलेश बिन शुद्ध निरंजन देव ।
पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपूर्णताय नमः अर्घ्यं० ।।३।।

बाह्य शत्रु उपचरित को, जीतत जिन नहीं होय ।
अंतर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन है सोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ।।४।।

इन्द्रादिक पूजत चरन सेवत हैं तिहुं काल ।
गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रष्ठाय नमः अर्घ्यं० ।।५।।

गणधरादि सत-पुरुष जे, वीतराग निरग्रंथ ।
तुमको सेवत जिन भये, साधत हैं शिवपंथ ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिपाय नमः अर्घ्यं० ।।६।।

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहंत।
द्रव्यभाव सर्वातमा, नमूं सिद्ध भगवंत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीशाय नमः अर्घ्यं० ॥७॥

गणधरादि सेवत चरण, शुद्धातम लवलाय।
तीन लोक स्वामी भये, नमूं सिद्ध अधिकाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनस्वामिने नमः अर्घ्यं० ॥८॥

नमत सुरासर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान।
सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूं, पाऊं शिवसुख थान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥९॥

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात।
सिद्ध कहा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिननाथाय नमः अर्घ्यं० ॥१०॥

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज।
नित-प्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्यसमाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनपतये नमः अर्घ्यं० ॥११॥

त्रिभुवन शिखा-शिरोमणी, राजत सिद्ध अनंत।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवे नमः अर्घ्यं० ॥१२॥

जिन आज्ञा त्रिभुवन विषै, वरते सदा अखण्ड।
मिथ्यामति दुरपक्षको, देत नीतिसों दण्ड ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं० ॥१३॥

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश।
राजत है विस्तीर्ण जिन, नमूं हरो भववास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनविभवे नमः अर्घ्यं० ॥१४॥

आत्मज्ञ जिन नमत हैं, शुद्धातमके हेत।
स्वामी हो तिहुं लोकके नमूं बसे शिवखेत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनभर्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥१५॥

मिथ्यामतिको नाश करि तत्त्वज्ञान परकाश।
दीप्ति रूप रवि सम सदा, करो सदा उरवास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वप्रकाशकाय नमः अर्घ्यं० ॥१६॥

कर्मशत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार।
धर्ममार्ग प्रकटात है शुद्ध सुलभ सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनकर्मजिताय नमः अर्घ्यं० ॥१७॥

अमृतसम निज दृष्टिसों, यथाख्यात आचार।
तिन सबके स्वामी नमूं, पायो शिवपद सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्यं० ॥१८॥

समोसरण आदिक विभव, तिसके तुम परधान।
शुद्धातम शिवपद लह्यो, नमूं कर्म की हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं० ॥१९॥

सूरज सम तिहुं लोकमें, मिथ्या तिमिर निवार।
सहज दिखायो मोक्षमार्ग, मैं बंदूं हित धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिननेत्रे नमः अर्घ्यं० ॥२०॥

जन्म मरण दुख जीतिकर, जिन 'जिन' नाम धराय।
नमूं सिद्ध परमातमा, भवदुख सहज नसाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनजेत्रे नमः अर्घ्यं० ॥२१॥

अचल अबाधित पद लह्यो, निज स्वभाव दृढ़ भाय।
नमूं सिद्ध कर-जोरिकर, भाव सहित उर लाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनपरवृढाय नमः अर्घ्यं० ॥२२॥

सर्व-व्यापि परमात्मा, सर्व पूज्य विख्यात।
श्रीजिनदेव नमूं त्रिविध, सर्व पाप नशि जात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥२३॥

श्रीजिनेश जिनराज हो, निजस्वभाव अनिवार।
पर-निमित्त विनशं सकल बंदूं, शिवसुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं० ।२४॥

परम धर्म दातार हो, तीन लोक सुखदाय।
तीन लोक पालक महा, मैं बंदूं शिवराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनपालकाय नमः अर्घ्यं० ॥२५॥

गणधरादि सेवत महा, तुम आज्ञा शिर धार।
अधिक अधिक जिनपद लहो, नमूं करो भवपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं० ॥२६।

परम धर्म उपदेश करि, प्रकटायो शिवराय।
श्रीजिन निज आनंद में, वर्तैं बंदूं ताय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनेशाय नमः अर्घ्यं० ॥२७॥

पूरण पद पावत निपुण, सब देवनके देव।
मैं पूजूं नित भावसों, शिव स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥२८॥

तीन लोक विख्यात हैं, तारण-तरण जिहाज।
तुम सम देव न और हैं, तुम सबके शिरताज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाद्वितीयाय नमः अर्घ्यं० ॥२९॥

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिर नाय।
इन्द्रादिक थुति करि थके, मैं बंदूं तिस पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥३०॥

तुम समान नहिं देव है, भविजन तारन हेत।
चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावैं शिवसुख खेत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्रविबंधाय नमः अर्घ्यं० ॥३१॥

भवाताप करि तप्त हैं, तिनकी विपति निवार।
धर्मामृत कर पोषियो, वरते शशि उनहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनचन्द्राय नमः अर्घ्यं० ॥३२॥

मिथ्यातम करि अन्ध थे, तीन लोकके जीव ।
तत्त्व मार्ग प्रगटाइयो, रवि सम दीप्त अतीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनचन्द्राय नमः अर्घ्यं० ॥३३॥

बिन कारण तारण तरण, दीप्त रूप भगवान ।
इन्द्रादिक पूजत चरण, करत कर्मकी हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥३४॥

जैसे कुंजर चक्र के, जाने बलको साज ।
चार संघ नायक प्रभु, बंदूं सिद्ध समाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनकुञ्जराय नमः अर्घ्यं० ॥३५॥

दीप्त रूप तिहुं लोकमें, है परचण्ड परताप ।
भक्तनको नित देत हैं, भोगें शिवसुख आप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनार्काय नमः अर्घ्यं० ॥३६॥

रत्नत्रय मग साध कर, सिद्ध भये भगवान ।
पूरण निजसुख धरत हैं, निजमें निज परिणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनधोर्याय नमः अर्घ्यं० ॥३७॥

तीन लोकके नाथ हो, ज्यूं तारागण सूर्य ।
शिवसुख पायो परमपद, बंदों श्रीजिन धूर्य्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनधूर्याय नमः अर्घ्यं० ॥३८॥

पराधीन बिन परमपद, तुम बिन लहै न और ।
उत्तमातमा मैं ममूं, तीन लोक शिरमौर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥३९।

जहाँ न दुखको लेश है, तहाँ न परसों कार ।
तुम बिन कहूं न श्रेष्ठता, तीन लोक दुखटार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकदुःखनिवारकाय नमः अर्घ्यं० ॥४०॥

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराज ।
परमश्रेय परमातमा, बंदूं शिवसुख साज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनवराय नमः अर्घ्यं० ॥४१॥

निरभय हो निर आश्रयी, निःसंगी निर्बंध ।
निजसाधन साधक सुगुन, परसों नहिं संबंध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिननिःसंगाय नमः अर्घ्यं० ॥४२॥

अन्तराय विधि नाशके, निजानन्द भयो प्राप्त ।
'सन्त' नमैं कर जोरयुत, भव-दुख करो समाप्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोद्वाहाय नमः अर्घ्यं० ॥४३॥

शिवमारग में धरत हो, जग मारगतें काढ़ ।
धर्मधुरन्धर मैं नमूं, पाऊं भव वन बाढ़ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृषभाय नमः अर्घ्यं० ॥४४॥

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार ।
रहो सुथिर निजधर्म में, मैं वंदूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनधर्माय नमः अर्घ्यं० ।४५॥

जगत जीव विधि धूलि सों, लिप्त न लहैं प्रभाव ।
रत्नराशि सम तुम दिपो, निर्मल सहज सुभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनरत्नाय नमः अर्घ्यं० ॥४६॥

तीन लोकके शिखर पर, राजत हो विख्यात ।
तुम सम और न जगतमें, बड़ा कोई दिखलात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोरसाय नमः अर्घ्यं० ॥४७॥

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोह शत्रु को जीत ।
लहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोक के मीत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्यं० ॥४८॥

चारि घातिया कर्मको, नाश कियो जिनराय ।
घाति-अघाति विनाश जिन, अग्र भय सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नमः अर्घ्यं० ॥४९॥

निज पौरुषकर साधियो, निज पुरुषारथ सार।
अन्य सहाय नहीं चहैं, सिद्ध सुवीर्य अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनशार्दूलाय नमः अर्घ्यं० ॥५०॥
इन्द्रादिक नित ध्यावते, तुम सम और न कोय।
तीन लोक चूड़ामणि, नमूं सिद्धसुख होय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनपुंगवाय नमः अर्घ्यं० ॥५१॥
निजानन्द पदको लहो, अविरोधी मल नास।
समकित बिन तिहुंलोकमें, और नहीं सुखरास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रवेकाय नमः अर्घ्यं० ॥५२॥
जगत शत्रु को जीतिके, कल्पित जिन कहलाय।
मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनहंसाय नमः अर्घ्यं० ॥५३॥
द्रव्य-भाव दोनों नहीं, उत्तम शिवसुख लीन।
मनवचतन करि मैं नमूं, निज समभाव जु कीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमसुखधारकाय नमः अर्घ्यं० ॥५४॥
चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय।
तारण तरण जहान के, मैं बंदूं शिवराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं० ॥५५॥
स्वयंबुद्ध शिवमार्ग में, आप चले अनिवार।
भविजन अग्रेश्वर भये, बंदूं भक्ति विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रिमाय नमः अर्घ्यं० ॥५६॥
शिवमारग के चिह्न हो, सुखसागर की पाल।
शिवपुर के तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनग्रामण्यै नमः अर्घ्यं० ॥५७॥
तुम सम और न जगत में, उत्तम श्रेष्ठ कहाय।
आप तिरे पर तारते, बंदूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनसत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥५८॥

स्व-पर कल्याणक हो प्रभू, पंचकल्याणक ईश।
श्रीपति शिवशंकर नमूं, चरणाम्बुज धरि शीश॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवाय नमः अर्घ्यं० ॥५६॥

मोह महाबल दलमलो, विजय लक्ष्मीनाथ।
परमज्योति शिवपद लहो, चरण नमूं धरि माथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६०॥

चहुं गति दुःख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ।
नमूं सिद्ध कर-जोरिकैं, पाऊं मैं सर्वार्थ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनचतुर्गतिदुःखान्तकाय नमः अर्घ्यं० ॥६१॥

जीते कर्म निकृष्ट को, श्रेष्ठ भये जिनदेव।
तुम सम और न जगत में, बंदूं मैं तिन भेव॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥६२॥

आप मोक्षमग साधियो, औरन सुलभ कराय।
आदि पुरुष तुम जगत में, धर्म रीत वरताय॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥६३॥

मुख्य पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय।
मैं बंदूं तिन भक्ति करि, सिद्ध कहावे सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनमुख्याय नमः अर्घ्यं० ॥६४॥

सूरज सम अग्रेश हो, निज-पर-भासनहार।
आप तिरे भवि तारियो, बंदूं योग संभार॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नमः अर्घ्यं० ॥६५॥

रागादिक रिपु जीत तुम, श्रीजिन नाम धराय।
सिद्ध भये कर जोरिके, बंदूं तिनके पांय॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६॥

विषय कषाय न लेश है, दृष्टि ज्ञान परिपूर्ण।
उत्तम जिन शिवपद लियो, नमत कर्म को चूर्ण॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥६७॥

चहुं प्रकार के देवता, नित्य नमावत शीश ।
तुम देवन के देव हो, नमूं सिद्ध जगदीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृन्दारकाय नमः अर्घ्यं० ॥६८॥

जो निज सुख होने न दे, सो सत रिपु है जोय ।
ऐसे रिपुको जीतके, नमूं सिद्ध जो होय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अरिजिताय नमः अर्घ्यं० ॥६९॥

अविनाशी अविकार हो, अचलरूप विख्यात ।
जामें विघ्न न लेश है, नमूं सिद्ध कहलात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्विघ्नाय नमः अर्घ्यं० ॥७०॥

राग-द्वेष मद-मोह अरु, ज्ञानावरण नशाय ।
शुद्ध निरंजन सिद्ध हैं, बंदूं तिनके पाँय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विरजसे नमः अर्घ्यं० ॥७१॥

मत्सर भाव दुखी कर, निजानन्द को घात ।
सो तुम नाशो छिनक मे, शम सुखिया कहलात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तमत्सराय नमः अर्घ्यं० ॥७२॥

परकृत भाव न लेश है, भेद कह्यो नहिं जाय ।
बचन अगोचर शुद्ध हैं, सिद्ध महा सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥७३॥

रागादिक मल बिन दिपो, शुद्ध सुवर्ण समान ।
शुद्ध निरंजन पद लियो, नमूं चरण धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरंजनाय नमः अर्घ्यं० ॥७४॥

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घातिया कर्म ।
तिनको अंत खिपाइके, लियो मोक्षपद पर्म ॥
ॐ ह्रीं अर्हं घातिकर्मान्तकाय नमः अर्घ्यं० ॥७५॥

ज्ञानावरणी पटल बिन, ज्ञान दीप्त परकाश ।
शुद्ध सिद्ध परमातमा, बंदित भवदुख नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तये नमः अर्घ्यं० ॥७६॥

कर्म रुलावे आतमा, रागादिक उपजाय ।
तिनको मर्म विनाशकें, सिद्ध भये सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्ममर्मभिदे नमः अर्घ्यं० ॥७७॥

पाप कलाप न लेश है, शुद्धाशुद्ध विख्यात ।
मुनि मन मोहन रूप है, नमूं जोरि जुग हाथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनुदयाय नमः अर्घ्यं० ॥७८॥

राग नहीं थुतिकारसों, निंदकसों नहीं द्वेष ।
शम सुखिया आनन्दघन, बंदूं सिद्ध हमेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वीतरागाय नमः अर्घ्यं० ॥८०॥

क्षुधा वेदनी नाशकर, स्व-सुख भुंजनहार ।
निजानन्द संतुष्ट हैं, बंदूं भाव विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षुध य नमः अर्घ्यं० ॥८१॥

एक दृष्टि सबको लखें, इष्ट-अनिष्ट न कोय ।
द्वेश अंश व्यापै नहीं, सिद्ध कहावत सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अद्वेषाय नमः अर्घ्यं० ॥८२॥

भवसागर के तीर हैं, शिवपुरके हैं राहि ।
मिथ्यातम–हर सूर्य हैं, मैं बंदूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोहाय नमः अर्घ्यं० ॥८३॥

जगजनमें यह दोष है, सुखी-दुखी बहु भेव ।
ते सब दोष निबारियो, उत्तम हो स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्दोषाय नमः अर्घ्यं० ॥८४॥

जनम मरण यह रोग है, तिनको कठिन इलाज ।
परमौषध यह रोग को, बंदूं मेटन काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अगदाय नमः अर्घ्यं० ॥८५॥

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सो होय ।
सो निज मोह विनाशियो, नमूं सिद्ध हो सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्ममत्वाय नमः अर्घ्यं० ॥८६॥

तृष्णा दुखको मूल है, सुखी भये तिस नाश ।
मनवचतन करि मैं नमूं, है आनन्दविलास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वीततृष्णाय नमः अर्घ्यं० ॥८७॥

अन्तर बाह्य निरिच्छ है, एकी रूप अनूप ।
निस्पृह परमेश्वर नमूं, निजानंद शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं असंगाय नमः अर्घ्यं० ॥८८॥

क्षायिक समकितको धरैं, निर्भय थिरता रूप ।
निजानंदसों नहिं चिगें, मैं बन्दूं शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्भयाय नमः अर्घ्यं० । ८९॥

स्वप्न प्रमादी जीवके, अल्प-शक्ति सो होय ।
निज बल अतुल महा धरैं, सिद्ध कहावैं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अस्वप्नाय नमः अर्घ्यं० ॥९०॥

दर्श ज्ञान सुख भोगतैं, खेद न रंचक होय ।
सो अनन्त बलके धनी, सिद्ध नमामी सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निःश्रमाय नमः अर्घ्यं० ॥९१॥

युगपत सब प्रापत भये, जानत हैं सब भेद ।
संशय बिन आश्चर्य नहीं, नमूं सिद्ध स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वीतविस्मयाय नमः अर्घ्यं० ।९२॥

सिद्ध सनातन कालतें, जगमें हैं परसिद्ध ।
तथा जन्म फिर नहीं धरैं, नमूं जोर कर सिद्ध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मने नमः अर्घ्यं० ॥९३॥

भ्रम बिन, ज्ञान प्रकाश में, भासैं जीव-अजीव ।
संशय बिन निश्चल सुखी, बन्दूं सिद्ध सदीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निःसंशयाय नमः अर्घ्यं० ॥९४॥

तुम पूरण परमातमा, सदा रहो इक सार ।
जरा न व्यापै तुम विषैं, नमूं सिद्ध अविकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्जराय नमः अर्घ्यं० ॥९५॥

तुम पूरण परमातमा, अन्त कभी नहीं होय ।
मरण रहित बन्दूं सदा, देउ अमर पद सोय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अमराय नमः अर्घ्यं० ।।९६।।

निजानन्द के भोगमें, कभी न आरत आय ।
यातें तुम अरतीत हो, बन्दूं सिद्ध सुहाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अरत्यतीताय नमः अर्घ्यं० ।।९७।।

होत नहीं सोच न कभू, ज्ञान धरैं परतक्ष ।
नमूं सिद्ध परमातमा, पाऊं ज्ञान अलक्ष ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निश्चिताय नमः अर्घ्यं० ।।९८।।

जानत हैं सब ज्ञेय को, पर ज्ञेयनतैं भिन्न ।
यातें निर्विषयी कहे, लेश न भोगैं अन्य ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्विषयाय नमः अर्घ्यं० ।।९९।।

अहंकार आदिक त्रिषट्, तुम पद निवसैं नाहिं ।
सिद्ध भये परमातमा मैं, बन्दूं हूं ताहिं ।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिषष्ठिजिते नमः अर्घ्यं० ।।१००।।

जेते गुण परजाय हैं, द्रव्य अनन्त सुकाल ।
तिनको तुम जानो प्रभू, बन्दूं मैं नमि भाल ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं० ।।१०१।।

ज्ञान-आरसी तुम विषैं, झलकें ज्ञेय अनन्त ।
सिद्ध भये तिनको नमें, तीनों काल सु सन्त ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविदे नमः अर्घ्यं० ।।१०२।।

चक्षु अचक्षु न भेद हैं, समदर्शी भगवान ।
नमूं सिद्ध परमातमा, तीनों जोग प्रधान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वदर्शिने नमः अर्घ्यं० ।।१०३।।

देखन कछु बाकी नहीं, तीनों काल मंझार ।
सर्वालोकी सिद्ध हैं, नमूं त्रियोग सम्हार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वावलोकाय नमः अर्घ्यं० ।।१०४।।

तुम सम प्राक्रम और सब, जगवासी में नाहिं ।
निज बल शिवपद साधियो, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तविक्रमाय नमः अर्घ्यं० ॥१०५॥

निजसुख भोगत नहिं चिगें, वीर्य अनंत धराय ।
तुम अनन्त बलके धनी, बन्दूं मनवचकाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥१०६॥

सुखाभास जग जीवके, पर-निमित्तसें होय ।
निज आश्रय पूरण सुखो, सिद्ध कहावें सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं ० ॥१०७॥

निज-सुखमें सुख होत है, पर-सुखमें सुख नाहिं ।
सो तुम निज-सुख के धनी, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसौख्याय नमः अर्घ्यं० ॥१०८॥

तीन लोक तिहुं कालके, गुण-पर्यय कछु नाहिं ।
जाको तुम जानो नहीं, ज्ञान-भानुके माहिं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥१०९॥

द्रव्य तथा गुण पर्यंको, देखें एकीबार ।
विश्वदर्श तुम नाम है, बन्दों भक्ति विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदर्शिने नमः अर्घ्यं० ॥११०॥

सम्पूरण अवलोकतें, दर्शन धरो अपार ।
नमूं सिद्ध कर जोरिके, करो जगत से पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अखिलार्थदर्शिने नमः अर्घ्यं० ॥१११॥

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय ।
बिन इन्द्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निष्पक्षदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥११२॥

विश्व मांहि तुम अर्थ सब, देखो एकीबार ।
विश्वचक्षु तुम नाम है, बन्दूं भक्ति विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वचक्षुषे नमः अर्घ्यं० ॥११३॥

तीन लोकके अर्थ जे, बाकी रहो न शेष ।
युगपत तुम सब जानियो, गुण-पर्याय विशेष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अशेषविदे नमः अर्घ्यं० ॥११४॥

पराधीन अरु विघ्न बिन, है साँचा आनन्द ।
सो शिवगतिमें तुम लियो, मैं बन्दूं सुखकंद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आनन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥११५॥

सत प्रशंसता नित बहै, या सद्भाव सरूप ।
सो तुममें आनन्द है, बन्दत हूं शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥११६॥

उदय महा सत्‌रूप है, जामें असत न होय ।
अंतराय अरु विघन बिन, सत्य उदं है सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥११७॥

नित्यानंद महासुखी, हीनादिक नहीं होय ।
नहीं गत्यंतर रूप हो, शिवगति में है सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नित्यानंदाय नमः अर्घ्यं० ॥११८।

जासों परे न और सुख, अहमिन्द्रनमें नाहिं ।
सोई श्रेष्ठ सुख भोगते, बन्दूं हूं मैं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमानंदाय नमः अर्घ्यं० ॥११९॥

पूरण सुखकी हद धरैं, सो महान आनन्द ।
सो तुम पायो शिव-धनी, बन्दूं पद अरविन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महानंदाय नमः अर्घ्यं० ॥१२०॥

उत्तम सुख स्वाधीन है, परम नाम कहलाय ।
चारों गतिमें सो नहीं, तुम पायो सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥१२१॥

जामें विघन न लेश है, उदय तेज विज्ञान ।
जाको हम जानत नहीं, सुलभरूप विधि ठान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥१२२॥

परम शक्ति परमातमा, पर सहाय बिन आप ।
स्वयं वीर्य आनन्दके, नमत कटैं सब पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमौजसे नमः अर्घ्यं० ॥१२३॥

महातेजके पुंज हो, अविनाशी अविकार ।
झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पणवत् आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमतेजसे नमः अर्घ्यं० ॥१२४॥

परम धाम उत्कृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय ।
जासों फिर आवत नहीं, जन्म-मरण नशि जाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमधाम्ने नमः अर्घ्यं० ॥१२५॥

जगतगुरु सिद्ध परमातमा, जगत सूर्य शिव नाम ।
परमहंस योगीश हैं, लियो मोक्ष अभिराम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्यं० ॥१२६॥

दिव्यज्योति स्व-ज्ञानमें, तीन लोक प्रतिभास ।
शंका बिन विश्वास कर, निजपर कियो प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षज्ञातुः नमः अर्घ्यं० ॥१२७॥

निज विज्ञान सु ज्योतिमें, संशय आदिक नांहि ।
सो तुम सहज प्रकाशियो, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विज्ञानज्योतिषे नमः अर्घ्यं० ॥१२८॥

शुद्ध बुद्ध परमातमा, परम ब्रह्म कहलाय ।
सर्व-लोक उत्कृष्ट पद, पायो बन्दूं ताय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥१२९॥

चार ज्ञान नांहि जास में, शुद्ध सरूप अनूप ।
परको नांहि प्रवेश है, एकाकी शिवरूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमरहसे नमः अर्घ्यं० ॥१३०॥

निज गुण द्रव पर्यायमें, भिन्न-भिन्न सब रूप ।
एक क्षेत्र अवगाह करि, राजत हैं चिद्रूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१३१ ।

शुद्ध बुद्ध परमातमा, निज विज्ञान प्रकाश।
स्वे-आतमके बोधतें, कियो कर्म को नास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रबोधात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१३२॥

कर्म मैल से लिप्त हैं, जगत आतम दिन रैन।
कर्म नाश महपद लियो, वन्दूं हूं सुख देन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१३३॥

आतमको गुण ज्ञान है, वही यथारथ होय।
ज्ञानानन्द ऐश्वर्यता, उदय भयो है सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आत्ममहोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥१३४॥

दर्श ज्ञान सुख वीर्यको, पाय परम पद होय।
सो परमातम तुम भये, नमूं जोर कर दोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१३५॥

मोह कर्म के नाशतें, शान्त भये सुखदेन।
क्षोभरहित प्रशान्त हो, शांत नमूं सुख लेन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्तात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१३६॥

पूरण पद तुम पाइयो, यातैं परे न कोय।
तुम समान नहीं और हैं, वंदूं हूं पद दोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१३७॥

पुद्गल कृत तन छारकें, निज आतम में वास।
स्व-प्रदेश गृहके विषैं, नित ही करत विलास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आत्मनिकेतनाय नमः अर्घ्यं० ॥१३८॥

औरन को नित देत हैं, शिवसुख भोगें आप।
परम इष्ट तुम हो सदा, निजसम करत मिलाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं० ॥१३९॥

मोक्ष-लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत।
महा इष्ट कहलात हो, वंदूं शिवसुख हेत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महितात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१४०॥

रागादिक मल नाशिकैं, श्रेष्ठ भये जगमांहि।
सो उपासना करणको, तम सम कोई नांहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१४१॥
परमें ममत विनाशकैं, स्वै आतम थिर धार।
पर-विकल्प संकल्प बिन, तिष्ठो सुख-आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्मनिष्ठिताय नमः अर्घ्यं० ॥१४२॥
स्वै आतम में मग्न हैं, स्वं आतम लवलीन।
परमें भ्रमण करैं नहीं, 'सन्त' चरण सिर दीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मनिष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥१४३॥
तीन लोक के नाथ हो, इन्द्रादिक कर पूज।
तुम सम और महानता, नहिं धारत है दूज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥१४४॥
तीन लोक परसिद्ध हो, सिद्ध तुम्हारा नाम।
सर्व सिद्धता ईश हो, पूरहु सबके काम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरूढ़ात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१४५॥
स्वै-आतम थिरता धरैं, नहीं चलाचल होय।
निश्चल परम सुभाव में, भये प्रगतिको खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१४६॥
क्षयोपशम नानाविधैं, क्षायक एक प्रकार।
सो तुममें नहीं और में, वंदूं योग संभार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं एकविद्याय नमः अर्घ्यं० ॥१४७॥
कर्म पटलके नाशतें, निर्मल ज्ञान उदार।
तुम महान विद्या धरो, बन्दूं योग संभार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाविद्याय नमः अर्घ्यं० ॥१४८॥
परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रह्म कहाय।
पायो सहज महान पद, वन्दूं तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महापदेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥१४९॥

पंच परम-पद पाइयो, ब्रह्म नाम है एक ।
पूजूं मनवचकाय करि, नाशै विघ्न अनेक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंचब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥१५०॥

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाय ।
हीनाधिक बिन बिलसते, बन्दूं ध्यान लगाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाय नमः अर्घ्यं० ॥१५१॥

पूरण पण्डित ईश हो, बुद्ध धाम अभिराम ।
बन्दूं मनवचकाय करि, पाऊं मोक्ष सुधाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविद्येश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥१५२।

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चाल ।
शुच परिणाम धरैं सदा, बंदूं नित नमि भाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुचये नमः अर्घ्यं० ॥१५३॥

ज्ञान-दर्श आवर्ण बिन, दीपो नंतानंत ।
सकल ज्ञेय प्रतिभास है, तुम्हें नमैं नित 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतदीप्तये नमः अर्घ्यं० ॥१५४॥

इक इक गुण प्रतिछेद को, पार न पायो जाय ।
सो गुण रास अनंत हैं, बंदूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१५५॥

अर्हमिद्रन की शक्ति जो, करो अनंती रास ।
सो तुम शक्ति अनंत गुण, करै अनंत प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तशक्तये नमः अर्घ्यं० ॥१५६॥

क्षायक दर्शन जोति में, निरावरण परकास ।
सो अनंत दृग तुम धरो, नमैं चरण नित दास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतदर्शाये नमः अर्घ्यं० ॥१५७॥

जाकी शक्ति अपार है, हेत-अहेत प्रसिद्ध ।
गणधरादि जानत नहीं, मैं बंदूं नित सिद्ध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मक्षीणाय नमोऽर्घ्यं० ॥१५८॥

चेतन शक्ति अनंत है, निरावरण जो होय।
सो तुम पायी सहज, ही, कर्म पुञ्जको खोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतचिदेशाय नमः अर्घ्यं० ॥१५९॥

जो सुख है निज आश्रये, सो सुख परमें नाहिं।
निजानन्द रसलीन है, मैं बंदूं हूं ताहिं॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतसुखे नमः अर्घ्यं० ॥१६०॥

जाकैं कर्म लिपै न फिर, दिपै सदा निरधार।
सदा प्रकाशजु सहित है, बंदूं योग सम्हार॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाप्रकाशाय नमः अर्घ्यं० ॥१६१॥

निजानन्दके मांहि हैं, सर्व अर्थ परसिद्ध।
सो तुम पायो सहज हो, नमत मिले नवनिद्ध॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्थसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१६२॥

अति सूक्षम जे अर्थ हैं, काय अकाय कहाय।
साक्षात् सबको लखो, बन्दूं तिनके पांय॥
ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात्कारिणे नमः अर्घ्यं० ॥१६३॥

सकल गुणनमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश।
तुम समान नहीं दूसरो, बन्दत पूरे आस॥
ॐ ह्रीं अर्हं समग्रद्धये नमः अर्घ्यं० ॥१६४॥

सर्व कर्मको छीन करि, जरी जेवरी सार।
सो तुम धूलि उड़ाइयो, बन्दूं भक्ति विचार॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मक्षीणाय नमः अर्घ्यं० ॥१६५॥

चहुं गति जगत कहात हैं, ताको करि विध्वंस।
अमर अचल शिवपुर बसैं, भर्म न राखो अंश॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विध्वंसिने नमः अर्घ्यं० ॥१६६॥

इन्द्री मन व्यापार में, जाको नहिं अधिकार।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अलक्षात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१६७॥

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण थिर धार।
सो शिवपुरमें बसत हैं, बन्दूं भक्ति विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचलस्थानाय नमः अर्घ्यं० ॥१६८॥

पर कृत निमत बिगाड हैं, सोई दुविधा जान।
सो तुममें नहीं लेश हैं, निराबाध परणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं० ॥१६९॥

जैसे हो तुम आदिमें, सोई हो तुम अन्त।
एक भांति निवसो सदा, वंदत हैं नित 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतवर्याय नमः अर्घ्यं० ॥१७०॥

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि मानें आन।
मिथ्यामत नहीं चलत है, तुम आगे परमाण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रिणे नमः अर्घ्यं० ॥१७१॥

ज्ञान शक्ति उत्कृष्ट है, धर्म सर्व तिस मांहि।
श्रेष्ठ ज्ञानतम पुञ्ज हो, परनिमित्त कछु नांहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विदांवराय नमः अर्घ्यं० ॥१७२॥

निज अभाव से मुक्त हो, कहैं कुवादी लोग।
भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायो जोग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१७३॥

सहज सुभाव प्रकाशियो, परनिमित्त कछु नांहि।
सो तुम पायो सुलभतें, स्वसुभाव के मांहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सहजज्योतिषे नमः अर्घ्यं० ॥१७४॥

विश्व नाम तिहुं लोकमें, तिसमें करत प्रकाश।
विश्वज्योति कहलात हैं, नमत मोहतम नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्योतिषे नमः अर्घ्यं० ॥१७५॥

फरश आदि मन इन्द्रियां, द्वार ज्ञान कछु नांहि।
यातें अतिइन्द्रिय कहो, जिन-सिद्धांतके मांहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियाय नमः अर्घ्यं० ॥१७६॥

एक मान असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अंश ।
केवल तुमको धर्म है, नमें तुम्हें नित 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं केवलाय नमः अर्घ्यं० ॥१७७॥

लौकिक जन या लोकमें, तुम सारू गुण नाहिं ।
केवल तुमही में बसें, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं केवलालोकाय नमः अर्घ्यं० ॥१७८॥

लोक अनन्त कहो सही, तातें नन्तानन्त ।
है अलोक अवलोकियो, तुम्हें नमें नित 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकावलोकाय नमः अर्घ्यं । १७९॥

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैलो लोकालोक ।
भिन्न भिन्न सब जानियों, नमूं चरण सब धोक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विवृताय नमः अर्घ्यं० ॥१८०॥

बिन सहाय निज शक्ति हो, प्रकटो आपोआप ।
स्वयंबुद्ध स्वै-सिद्ध हो, नमत नसै सब पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं केवलावलोकाय नमः अर्घ्यं० ॥१८१॥

सूक्षम सुमग सुभावतें, मन इन्द्रिय नहिं ज्ञात ।
वचन अगोचर गुण धरें, नमूं चरन दिन-रात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अव्यक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥१८२॥

कर्म उदय दुख भोगवें, सर्व जीव संसार ।
तिन सबको तुमही शरण, देहो सुक्ख अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१८३ ।

चिंतवनमें आवै नहीं, पार न पावे कोय ।
महा विभवके हो धनी, नमूं जोर कर दोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्यविभवाय नमः अर्घ्यं० ॥१८४॥

छहों कायके बासको, विश्व कहें सब लोक ।
तिनके थंभनहार हो, राज काज के जोग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभृते नमः अर्घ्यं० ॥१८५॥

घट-घट में राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठौर।
विश्व रूप जीवात्म हो, तीन लोक सिरमौर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वरूपात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१८६॥

घट-घट में नित-व्याप्त हो, ज्यों घर दीपक जोति।
विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिवसुख होत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१८७॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजें आन।
यातें मुखिया हो सही, मैं पूजूं धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वतेमुखाय नमः अर्घ्यं० ॥१८८॥

ज्ञान द्वार सब जगत में, व्यापि रहे भगवान।
विश्व व्यापि मुनि कहत हैं, ज्यूं नभमें शशि भान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वव्यापिने नमः अर्घ्यं० ॥१८९॥

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात।
ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं बन्दूं दिन रात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंजोतिषे नमः अर्घ्यं० ॥१९०॥

चितवन में आवें नहीं, धारैं सुगुण अपार।
मन वच काय नमूं सदा, मिटै सकल संसार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्यात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१९१॥

नय प्रमाणको गमन नहीं, स्वयं ज्योति परकाश।
अद्भुत गुण पर्याय में, सुखसूं करै विलास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमितप्रभावाय नमः अर्घ्यं० ॥१९२॥

मतो आदि क्रमवर्त्त बिन, केवल लक्ष्मीनाथ।
महाबोध तुम नाम है, नमूं पांय धरि माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाबोधाय नमः अर्घ्यं० ॥१९३॥

कर्मयोगतें जगत में, जीव शक्ति को नाश।
स्वयं वीर्य अद्भुत धरैं, नमूं चरण सुखरास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महावीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥१९४॥

छायक लब्धि महान है, ताको लाभ लहाय।
महालाभ यातैं कहैं, बंदू तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महालाभाय नमः अर्घ्यं० ॥१९५॥

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति।
ताको नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥१९६॥

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी, भोगैं बाधाहीन।
पंचम गति में वास है, नमूं जोग पद लीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगसुगतये नमः अर्घ्यं० ॥१९७॥

पर निमित्त जामें नहीं, स्व-आनन्द अपार।
सोई परमानन्द हैं, भोगैं निज आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घ्यं० ॥१९८॥

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न बाधा होय।
अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं बंदूं हूं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥१९९।

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीड़ा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, बन्दत रिपुगण नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञार्हाय नमः अर्घ्यं० ॥२००॥

महाभाग शिवगति लहो, ता सम भाग न और।
सोई भगवत है प्रभू, नमूं पदाम्बुज ठौर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भगवते नमः अर्घ्यं० ॥२०१॥

तीन लोक के पूज्य हैं, तीन लोक के स्वामि।
कर्म-शत्रु को क्षय कियो, तातैं अरहत नाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्हते नमः अर्घ्यं० ॥२०२॥

सुरनर पूजत चरण युग, द्रव्य अर्घ जुत भाव।
महा-अर्घ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महार्घ्याय नमः अर्घ्यं० ॥२०३॥

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अर्हमिद्रन के ध्येय ।
द्रव्य-भाव करि पूज्य हो, पूजक पूज्य अभेय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मघवार्चिताय नमः अर्घ्यं० । २०४॥

छहों द्रव्य गुणपर्य को, जानत भेद अनन्त ।
महापुरुष त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञपुरुषाय नमः अर्घ्यं० ॥२०५॥

तुमसों कछु छाना नहीं, तीन लोक का भेद ।
दर्पण तल सम भास है, नमत कर्ममल छेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञाय नमः अर्घ्यं० ॥२०६॥

सकल ज्ञेय के ज्ञानतें, हो सबके सिरमौर ।
पुरुषोत्तम तुम नाम है, तुम लग सबकी दौर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थकृतपुरुषाय नमः अर्घ्यं० ॥२०७॥

स्वयंबुद्ध शिवमग चरत, स्वयं बुद्ध अविरुद्ध ।
शिवमगचारी नित जजैं, पावैं आतम शुद्ध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूज्याय नमः अर्घ्यं० ॥२०८॥

सब देवन के देव हो, तीन लोक के पूज्य ।
मिथ्या तिमिर निवारते, सूरज और न दूज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भट्टारकाय नमः अर्घ्यं० ॥२०९॥

सुर नर मुनि के पूज्य हो, तुमसे श्रेष्ठ न कोय ।
तीन लोक के स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तत्रभवते नमः अर्घ्यं० ॥२१०॥

महापूज्य महामान्य हो, स्वयं बुद्ध अविकार ।
मन-वच-तन से ध्यावते, सुरनर भक्ति विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अत्रभवते नमः अर्घ्यं० ॥२११॥

महाज्ञान केवल कहा, सो दीखे तुम माँहि ।
महा नामसों पूजिए, संसारी दुख नाँहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महते नमः अर्घ्यं० ॥२१२॥

पूज्यपणा नहीं और में, इक तुम ही में जान ।
महा अर्ह तुम गुण प्रभू, पूजत हो कल्याण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महार्हाय नमः अर्घ्यं० ॥२१३॥

अचल शिवालय के विषैं, अमित काल रहैं राज ।
चिरजीवी कहलात हो, बंदूं शिवसुख काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तत्रायुषे नमः अर्घ्यं० ॥२१४॥

मरण रहित शिवपद लसै, काल अनन्तानन्त ।
दीर्घायु तुम नाम है, बन्दत नित प्रति 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घायुषे नमः अर्घ्यं० ॥२१५॥

सकल तत्व के अर्थ कहि, निराबाध निरशंस ।
धर्म मार्ग प्रगटाइयो, नमत मिटै दुख अंश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घ्यं० ॥२१६॥

मुनिजन नितप्रति ध्यावतें, पावें निज कल्याण ।
सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊं धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सज्जनवल्लभाय नमः अर्घ्यं० ॥२१७॥

शिवसुख जाको ध्यावतें, पावैं सन्त मुनीन्द्र ।
परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमाराध्याय नमः अर्घ्यं० ॥२१८॥

पंचकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण ।
देवन करि पूजित भये, पायो शिव सुख थान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंचकल्याणपूजिताय नमः अर्घ्यं० ॥२१९॥

देखो लोकालोक को, हस्त रेख की सार ।
इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखै उदय अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनविशुद्धिगुणोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥२२०॥

छायक समकित को धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र ।
तुम पूजन परभावतें, अन्तिम होय जिनेन्द्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुरार्चिताय नमः अर्घ्यं० ॥२२१॥

निर्विकल्प शुभ चिन्ह है, वीतराग सो होय ।
सो तुम पायो सहज ही, नमूं जोर कर दोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुखदात्मने नमः अर्घ्यं० ॥२२२॥
स्वर्ग आदि सुख थान के, हो परकाशन हार ।
दीप्त रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विवोजसे नमः अर्घ्यं० ॥२२३॥
गर्भ कल्याणक के विषैं, तुम माता सुखकार ।
षट् कुमारिका सेवती, पावें भव दधि पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शचीसेवितमातृकाय नमः अर्घ्यं० ॥२२४॥
अति उत्तम तुम गर्भ हैं, भवदुख जन्म निवार ।
रत्नराशि दिवलोक तें, वर्षे मूसलधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं रत्नगर्भाय नमः अर्घ्यं० ॥२२५॥
सुर शोधन तें गर्भ में, दर्पण सम आकार ।
यों पवित्र तुम गर्भ हैं, पावै शिव सुख सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूतगर्भाय नमः अर्घ्यं० ॥२२६॥
जाके गर्भागमन तैं, पहले उतसव ठान ।
दिव्य नारि मंगल सहित, पूजत श्री भगवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गर्भोत्सवसहिताय नमः अर्घ्यं० ॥२२७॥
नित-नित आनन्द उर धरैं, सुर सुरीय हरषात ।
मंगल साज समाज सब, उपजावैं दिन-रात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नित्योपचारोपचरिताय नमः अर्घ्यं० ॥२२८॥
केवलज्ञान सु लक्ष्मी, धरत महा विस्तार ।
चरणकमल सुर मुनि जजैं, हम पूजत हितधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभवे नमः अर्घ्यं० ॥२२९॥
तिहुंविध विधिमल धोयकर, उज्ज्वल निर्मल होय ।
शिव आलय में बसत हैं, शुद्ध सिद्ध हैं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंस्वभावाय नमः र्घ्यं० ॥२३०॥

असंख्यात परदेश में, अन्य प्रदेश न होय ।
स्वयं स्वभाव स्वजात हैं, मैं प्रणमामी सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ।२३१॥

पूज्य यज्ञ आराधना, जो कुछ भक्ति प्रमाण ।
तुम ही सबके मूल हो, नमत अमंगल हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वोयजन्मने नमः अर्घ्यं० ॥२३२॥

सूर्य सुमेरु समान हो, या सुरतरु की ठौर ।
महा पुन्य की राशि हो, सिद्ध नमूं कर जोर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यांगाय नमः अर्घ्यं० ॥२३३॥

ज्यूं सूरज मध्यान्ह में, दिपै अनंत प्रभाव ।
त्यों तुम ज्ञानकला दिपैं, मिथ्या तिमिर अभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भास्वते नमः अर्घ्यं० ।२३४॥

चहुंविधि देवन में सदा, तुम सम देव न आन ।
निजानंद में केलिकर, पूजत हूँ धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अद्भुतदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥२३५॥

विश्व ज्ञात युगपत धरै, ज्यूं दर्पण आकार ।
स्वपर प्रकाशक हो सही, नमूं भक्ति उरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञातृसम्भृते नमः अर्घ्यं० ॥२३६॥

सत-स्वरूप सत-ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान ।
पूजत हैं नित विश्वजन, देव मान परमान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥२३७॥

सृष्टि को सुख करत हो, हरत दुःख भववास ।
मोक्ष लक्ष्मी देत हो, जन्म-जरा-मृत नास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टिनिवंसाय नमः अर्घ्यं० ॥२३८॥

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार ।
मोक्ष लहे सो नेमतैं, मैं पूजूं मनधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सहस्राक्षदृगुत्सवाय नमः अर्घ्यं० ॥२३९॥

संपूरण निज शक्ति के, है परताप अनन्त ।
सो तुम विस्तीरण करो, नमें चरण नित सन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशक्तये नमः अर्घ्यं० ॥२४०॥

ऐरावत पर रूढ़ हैं, देव नृत्यता मांड ।
पूजत है सो भक्ति सों, मेटि भवार्णव हांड ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवैरावतासोनाय नमः अर्घ्यं० ॥२४१॥

सुर नर चारण मुनि जजें, सुलभ गमन अकाश ।
परिपूरण हर्षात हैं, पूरें मन की आश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं हर्षाकुलामरखगाचारणर्षिमतोत्सवाय नमः अर्घ्यं० ॥२४२॥

रक्षक हो षट् काय के, शरणागति प्रतिपाल ।
सर्वव्यापि निज-ज्ञानतें, पूजत होय निहाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं० ॥२४३॥

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेर विख्यात ।
जन्माभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्नानपीठतादृसराजे नमः अर्घ्यं० ॥२४४॥

जाकरि तरिए तीर्थ सो, मानैं मुनि गण मान्य ।
तुम सम कौन जु श्रेष्ठ है, असत्यार्थ है अन्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसामान्यदुग्धाब्धये नमः अर्घ्यं० ॥२४५॥

लोकस्नान गिलानता, मेटै मैल शरीर ।
आतम प्रक्षालित कियो, तुम्हीं ज्ञान सु नीर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्नानाम्बुस्वावासवाय नमः अर्घ्यं० ॥२४६॥

तारन तरण सुभाव हैं, तीन लोक विख्यात ।
ज्यूं सुगंध चम्पाकली, गन्धमई कहलात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गन्धपवित्रितत्रिलोकाय नमः अर्घ्यं० ॥२४७॥

सूक्ष्म तथा स्थूल में, ज्ञान करै परवेश ।
जाको तुम जानों नहीं, खाली रहो न देश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वज्रसूचये नमः अर्घ्यं० ॥२४८॥

औरन प्रति आनंद करि, निर्मल शुचि आचार ।
आप पवित्र भये प्रभू, कर्म धूलि को टार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नमः अर्घ्यं० ॥२४९॥

कर्मों करि किरतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय ।
कर पर कर राजत प्रभू, बंदूं हूं युग पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थकृतहस्ताय नमः अर्घ्यं० ॥२५०॥

दर्शन इन्द्र अघात हैं, इष्ट मान उर मांहि ।
कर्म नाशि शिवपुर बसे, मैं बंदूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शक्रेष्टाय नमः अर्घ्यं० ॥२५१॥

मघवा जाके नृत्य करि, ताके तृप्ति महान ।
सो मैं उनको जजत हूं, होय कर्म की हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रनृत्यतृप्तिकाय नमः अर्घ्यं० ॥२५२॥

शची इन्द्र अरु काम ये, जिन शासन के दास ।
निश्चय मनमें नमन कर, नित वंदित पद जास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शचोविस्मापिताय नमः अर्घ्यं० ॥२५३॥

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय ।
जन्म सुफल मानैं सदा, हम पर होय कहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शक्रारब्धानंदनृत्याय नमः अर्घ्यं० ॥२५४॥

धन सुवर्ण तें लोक में, पूरण इच्छा होय ।
चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं रैवपूर्णमनोरथाय नमः अर्घ्यं० ॥२५५॥

तुम आज्ञा में हैं सदा, आप मनोरथ मान ।
इन्द्र सदा सेवन करें, पाप विनाशक जान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञार्थीन्द्रकृतसेवाय नमः अर्घ्यं० ॥२५६॥

सब देवन में श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज ।
सब देवन के इष्ट हो, वन्दत सुलभ सुकाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥२५७॥

तीन लोक में उच्च हो, तीन लोक परशंस ।
सो शिवगति पायो प्रभू, जजत कर्म विध्वंस ।।
ॐ ह्रीं अर्हं शिवोद्यमानाय नमः अर्घ्यं० ।।२५८।।

जगत्पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट ।
हित उपदेशक परमगुरू, मुनिजन माने इष्ट ।।
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्यशिवनाथाय नमः अर्घ्यं० ।।२५९।।

मति, श्रुत, अवर्ण को, नाश कियो स्वयमेव ।
केवल ज्ञान स्वतै लियो, आप स्वयंभू देव ।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभवे नमः अर्घ्यं० ।।२६०।।

समोसरण अद्भुत महा, और लहै नहीं कोय ।
धनपति रचो उछाह सों, मैं पूजूं हूँ सोय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं कुवेररचितस्थानाय नमः अर्घ्यं० ।।२६१।।

जाको अन्त न हो कभी, ज्ञान लक्षमी नाथ ।
सोई शिवपुर के धनी, नमूं भाव धरि माथ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तश्रीजुषे नमः अर्घ्यं० ।।२६२।।

गणधरादि नित ध्यावते, पावैं शिवपुर वास ।
परम ध्येय तुम नाम है, पूरै मन की आश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घ्यं० ।।२६३।।

परमब्रह्म का लाभ हो, तुम पद पायो सार ।
त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय-व्यवहार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नमः अर्घ्यं० ।।२६४।।

सर्व सत्वके आदिमें, ब्रह्म तत्व परधान ।
तिसके ज्ञाता हो प्रभु, मैं बंदूं धरि ध्यान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मतत्वाय नमः अर्घ्यं० ।।२६५।।

द्रव्य भाव द्वै विधि कही, यज्ञ यजनकी रीति ।
सो सब तुमही हेत हैं, रचत नशैं सब भीत ।।
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञपतये नमः अर्घ्यं० ।।२६६।।

महादेव शिवनाथ हो, तुमको पूजत लोक ।
मैं पूजूं हूँ भाव सों, मेटो मनको शोक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥२६७॥

कृत्य भये निज भाव में, सिद्ध भये सब काज ।
पायो निज पुरुषार्थको, बंदूं सिद्ध समाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृत्याय नमः अर्घ्यं० ॥२६८॥

यज्ञविधान के अंग हो, मुख नामी परधान ।
तुम बिन यज्ञ न हो कभी, पूजत हो कल्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञांगाय नमः अर्घ्यं० ॥२६९।

मरण रोग के हरण से, अमर भये हो आप ।
शरणागतिको अमरकर, अमृत हो निष्पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घ्यं० ॥२७०॥

पूजन विधि स्थान हो, पूजत शिवसुख होय ।
सुरनर नित पूजन करैं, मिथ्या मतिको खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञाय नमः अर्घ्यं० ॥२७१॥

जो हो सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक ।
वस्तु सुभाव यही कहो, बंदूं सिद्ध प्रत्येक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वस्तूत्पादकाय नमः अर्घ्यं० ॥२७२॥

इन्द्र सदा तुम थुति करैं, मनमें भक्ति उपाय ।
सर्वशास्त्र में तुम थुति, गणधरादि करि गाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्तुतीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥२७३॥

मगन रहो निज तत्त्वमें, द्रव्य भाव विधि नाश ।
जो है सो है विविध विध, नमूं अचल अविनाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं० ॥२७४॥

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादि करि पूज्य ।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महपतये नमः अर्घ्यं० ॥२७५॥

महाभाग सरधानतें, तुम अनुभव करि जीव ।
सो पुनि सेवत पाप तज, निजसुख लहैं सदीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महायज्ञाय नमः अर्घ्यं० ॥२७६॥

यज्ञ-विधि उपदेशमें, तुम अग्रेश्वर जान ।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अग्रयाजकाय नमः अर्घ्यं० ॥२७७॥

तीन लोकके पूज्य हो, भक्तिभाव उर धार ।
धर्म-अर्थ अरु मोक्षके, दाता तुम हो सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्याय नमः अर्घ्यं० ॥२७८॥

दया मोह पर पापतें, दूर भये स्वतंत्र ।
ब्रह्मज्ञानमें लय सदा, जपूं नाम तुम मंत्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दयापराय नमः अर्घ्यं० ॥२७९॥

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य ।
महा साधु सुख हेततें, साधे हैं निज साध्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यार्हाय नमः अर्घ्यं० ॥२८०॥

निज पुरुषारथ सघनको, तुमको अर्चत जक्त ।
मनवांछित दातार हो, शिव सुख पावें भक्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगदर्चिताय नमः अर्घ्यं० ॥२८१॥

ध्यावत हैं नितप्रति तुम्हें, देव चार परकार ।
तुम देवनके देव हो, नमूं भक्ति उर धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥२८२॥

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव ।
ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शक्रार्चिताय नमः अर्घ्यं० ॥२८३॥

तुम देवन के देव हो, सदा पूजने योग्य ।
जे पूजत हैं भावसों, भोगें शिवसुख भोग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥२८४॥

तीन लोक सिरताज हो, तुम से बड़ा न कोय ।
सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मन की खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगद्गुरवे नमः अर्घ्यं० ॥२८५॥

जो हो सो हो तुम सही, नहीं समझमें आय ।
सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणीको पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवसंघाचार्याय नमः अर्घ्यं० ॥२८६॥

ज्ञानानन्द स्वलक्षमी, ताके हो भरतार ।
स्वसुगंध वासित रहो, कमल गंध की सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥२८७॥

सब कुवादि वादी हते, वज्र शैल उनहार ।
विजयध्वजा फहरात हैं, बंदूं भक्ति विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जयध्वजाय नमः अर्घ्यं० ॥२८८॥

दशों दिशा परकाश हैं, तिनकी ज्योति अमंद ।
भविजन कुमुद विकास हो, बंदूं पूरणचन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भामण्डलिने नमः अर्घ्यं० ॥२८९॥

चमरनि करि भक्ति करें, देव चार परकार ।
यह विभूति तुम ही विषैं, बंदूं पाप निवार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुःषष्टीचामराय नमः अर्घ्यं० ॥२९०॥

देव दुंदुभी शब्द करि, सदा करें जयकार ।
तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवदुंदुभिये नमः अर्घ्यं० ॥२९१॥

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इकसार ।
अक्षरार्थ नहीं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वाङ्स्पष्टाय नमः अर्घ्यं० ॥२९२॥

धनपति रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान ।
तथा स्व-आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लब्धासनाय नमः अर्घ्यं० ॥२९३॥

तीन लोकके नाथ हो, तीन छत्र विख्यात ।
भव्य-जीव तुम छाहमें, सदा स्व-आनंद पात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं छत्रत्रयाय नमः अर्घ्यं० ।।२९४।।

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मंझार ।
तुम सुगंध वशविश रमी, भविजन भ्रमर निहार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पवृष्टये नमः अर्घ्यं० ।।२९५।।

देवन रचित अशोक है, वृक्ष महा रमणीक ।
समोसरण शोभा प्रभु, शोक निवारण ठीक ।।
ॐ ह्रीं अर्हं दिव्याशोकाय नमः अर्घ्यं० ।।२९६।।

मानस्तम्भ निहारके, कुमतिन मान गलाय ।
समोसरण प्रभुता कहै, नमूं भक्ति उर लाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं मानस्थम्भाय नमः अर्घ्यं० ।।२९७।

सुरदेवी संगीत कर, गावैं शुभ गुण गान ।
भक्ति भाव उरमें जगे, वंदत श्री भगवान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं संगीतार्हाय नमः अर्घ्यं० ।।२९८।।

मंगल सूचक चिह्न हैं, कहे अष्ट परकार ।
तुम समीप राजत सदा, नमूं अमंगल टार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अष्टमंगलाय नमः अर्घ्यं० ।।२९९।।

भविजन तरिये तीर्थ सो, तुम हो श्रीभगवान ।
कोई न भंगे आन जिन, तीर्थचक्र सौ जान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थचक्रवर्तिने नमः अर्घ्यं० ।।३००।।

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चै परमावगाढ़ ।
संशय आदिक मेटिके, नासो सकल विगाढ़ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ।।३०१।।

कर्त्ता हो शिव काजके, ब्रह्मा जगकी रीति ।
वर्णाश्रमको मापकें, प्रकटायी शुभ नीति ।।
ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं० ।।३०२।।

सत्य धर्म प्रतिपालके, पोषत हो संसार ।
यति श्रावक दो धर्मके, भये नाथ सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थभर्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥३०३॥

धर्मतीर्थ मुनिराज हैं, तिनके हो तुम स्वामि ।
धर्म नाथ तुम जानके, नितप्रति करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थेशाय नमः अर्घ्यं० ॥३०४॥

लोक तीर्थ में गिनत हैं, धर्मतीर्थ परधान ।
सो तुम राजत हो सदा, मैं बन्दूं धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थंकराय नमः अर्घ्यं० ॥३०५॥

तुम बिन धर्म न हो कभी, ढूंढो सकल जहान ।
दश-लक्षण स्वधर्मके, तीरथ हो परधान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थयुताय नमः अर्घ्यं० ॥३०६॥

धर्म तीर्थ करतार हो, श्रावक या मुनिराज ।
दोनों विधि उत्तम कहो, स्वर्ग मोक्षके काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थङ्कराय नमः अर्घ्यं० ॥३०७॥

तुमसे धर्म चले सदा, तुम्ही धर्मके मूल ।
सुरनर मुनि पूजें सदा, छिदहिं कर्मके शूल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थप्रवर्त्तकाय नमः अर्घ्यं० ॥३०८॥

धर्मनाथ जगमें प्रगट, तारण तरण जिहाज ।
तीन लोक अधिपति कहो, बन्दूं सुखके काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थवेधसे नमः अर्घ्यं० ॥३०९॥

श्रावक या मुनि धर्मके, हो दिखलावनहार ।
अन्य लिंग नहीं धर्मके, बुधजन लखो विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थविधायकाय नमः अर्घ्यं० ॥३१०॥

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्हीं मार्ग सुखदान ।
अन्य कुभेषिनमें नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यतीर्थंकराय नमः अर्घ्यं० ॥३११॥

सेवन योग्य सु जगतमें, तुम्हीं तीर्थ हो सार।
सुरनर मुनि सेवन करें, मैं बन्दूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसेव्याय नमः अर्घ्यं० ॥३१२॥

भवि समुद्र भवसे तिरैं, सो तुम तीर्थ कहाय।
हो तारण तिहुंलोक में, सेवत हूं तुम पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थतारकाय नमः अर्घ्यं० ॥३१३॥

सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम बैन।
धर्म सुमार्ग प्रवर्त्तको, तुम राजत हो ऐन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवाक्याधिपाय नमः अर्घ्यं० ॥३१४॥

धर्म मार्ग परगट करै, सो शासन कहलाय।
सो उपदेशक आप हो, तिस संकेत कहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यशासनाय नमः अर्घ्यं० ॥३१५॥

अतिशय कार सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश।
नेमरूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिशासनाय नमः अर्घ्यं० ॥३१६॥

कहैं कथञ्चित धर्मको, स्यात् वचन सुखकार।
सो प्रमाणतें साधियो, नय निश्चय-व्यवहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादिने नमः अर्घ्यं० ॥३१७॥

निर अक्षर वाणी खिरै, दिव्य मेघ की गर्ज्ज।
अक्षरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज्ज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यध्वनये नमः अर्घ्यं० ॥३१८॥

नय प्रमाण नहीं हतत हैं, तुम परकाशे अर्थ।
शिवसुखके साधन विषैं, नहीं गिनत हैं व्यर्थ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अव्याहतार्थाय नमः अर्घ्यं० ॥३१९॥

करैं पवित्र सु आत्मा, अशुभ कर्ममल खोय।
पहुंचावै ऊंची सुगति, तुम दिखलायो सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३२०॥

तत्त्वारथ तुम भासियो, सम्यक् विषैं प्रधान ।
मिथ्या जहर निवारणं, अमृत पान समान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३२१॥

देव अतिशयसों खिरत हो, अक्षरार्थ मय होय ।
दिव्यध्वनि निश्चयकरै, संशय तमको खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धमागधीयुक्तये नमः अर्घ्यं० ॥३२२॥

सब जीवनको इष्ट है, मोक्ष निजानन्द वास ।
सो तुमने दिखलाईयो, संशय मोह विनाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इष्टवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३२३॥

नय प्रमाण ही कहत हैं, द्रव पर्याय सु भेद ।
अनेकान्त साधे सही, वस्तु भेद निरखेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनेकान्तदर्शिने नमः अर्घ्यं० ॥३२४॥

दुर्नय कहत एकांतको, ताको अन्त कराय ।
सम्यक्मति प्रकटाइयो, पूजूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दुर्नयांतकाय नमः अर्घ्यं० ॥३२५॥

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार ।
स्याद्वाद सम न्याय तें, भविजन तारे पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं एकांतध्वांतभिदे नमः अर्घ्यं० । ३२६ ।

जो है सो निज भावमें, रहै सदा निरवार ।
मोक्ष साध्यमें सार है, सम्यक् विषैं अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्ववाचे नमः अर्घ्यं० ॥३२७ ।

निज गुण निज परयायमें, सदा रहो निरभेद ।
शुद्ध बुद्ध अव्यक्त हो, पूजूं हूं निरखेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पृथक्कृते नमः अर्घ्यं० ॥३२८॥

स्यात्कार उद्योतकर, वस्तु धर्म निरशंस ।
तासु ध्वजा निर्विघ्नको, भाषो विधि विध्वंस ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्यात्कारध्वजवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३२९॥

परम्परा इह धर्मको, उपदेशो श्रुत द्वार ।
भवि भव सागर-तीर लह, पायो शिवसुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वाचे नमः अर्घ्यं० ॥३३०॥

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुषकृत, है अनादि परमान ।
सो तुम भाष्यौ हैं सही, यह पर्याय सुजान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अपौरुषेयवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३३१॥

नहीं चलाचल होठ हों, जिस वाणी के होत ।
सो मैं वन्दूं हों किया—मोक्षमार्ग उद्योत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचलोष्ठवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३३२॥

तुम सन्तान अनादि है, शाश्वत नित्य स्वरूप ।
तुमको वन्दूं भावसों, पाऊं शिव-सुख कूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं० ॥३३३॥

हीनाधिक वा और विधि, नहीं विरुद्धता जान ।
एक रूप सामान्य है, सब ही सुख की खान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अविरुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥३३४॥

नय विवक्ष तें सधत है, सप्त भंग निरबाध ।
सो तुम भाष्यो नमत हूं, वस्तु रूपको साध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सप्तभंगीवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३३५॥

अक्षर बिन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त ।
भविजन निज सरधानतें, पावें जगतें मुक्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अवर्णगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३३६॥

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सब भाषा परकाश ।
तुम मुखतें खिरकैं करै, भर्म तिमिरको नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वभाषामयगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३३७॥

कहने योग्य समर्थ सब, अर्थ करै परकाश ।
तुम वाणी मुखतें खिरे, करै भरम-तम नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्तगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३३८॥

तुम वाणी नहीं व्यर्थ है, भंग कभी नहीं होय।
लगातार मुखतैं खिरे, संशय तमको खोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमोघवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३३९॥

वस्तु अनन्त पर्याय है, वचन अगोचर जान।
तुम विख्याये सहज हो, हरो कुमति मनिशान॥
ॐ ह्रीं अर्हं अवाच्यानन्तवाचे नमः अर्घ्यं० ।३४०॥

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, मुझ तारो भवपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३४१॥

तुम सम वचन न कहि सकै, असतमती छद्मस्थ।
धर्म मार्ग प्रकटाइयो, मेटी कुमति समस्त॥
ॐ ह्रीं अर्हं अद्वैतगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३४२॥

सत्य प्रिय तुम बैन हैं, हित-मित भविजन हेत।
सो मुनिराज तुम ध्यावते, पावैं शिवपुर खेत॥
ॐ ह्रीं अर्हं सूनृतगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३४३॥

नहीं सांच नहीं झूठ है, अनुभव वचन कहात।
सो तीर्थंकर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानुभयगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३४४॥

मिथ्या अर्थ प्रकाश करि, कुगिरा ताको नाम।
सत्यारथ उद्योत कर, सुगिरा ताको नाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३४५॥

योजन एक चहूं दिशा, हो वाणी विस्तार।
श्रवण सुनत भविजन लहैं, आनन्द हिये अपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं योजनव्यापगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३४६॥

निर्मल क्षीर समान हैं, गौर श्वेत तुम बैन।
पाप मलिनता रहित हैं, सत्य प्रकाशक ऐन॥
ॐ ह्रीं अर्हं क्षीरगौरगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३४७॥

तीर्थं तत्व जो नहीं तजैं, तारण भविजन वान ।
यातें तीर्थंकर प्रभू, नमत पाप मल हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थंतत्वगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३४८॥

उत्तमार्थ पर्याय करि, आत्मतत्व को जान ।
सो तुम सत्यारथ कहो, मुनि जन उत्तम मान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परार्थगवे नमः अर्घ्यं० ॥३४९॥

भव्यनिको श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन ।
मैं बंदूं हूं भाव सों, धर्म बतायो ऐन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भव्यैकश्रवणगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३५०॥

संशय विभ्रम मोह को, नाश करो निर्मूल ।
सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सद्गवे नमः अर्घ्यं० ॥३५१॥

तुम वाणी में प्रकट है, सब सामान्य विशेष ।
नानाविधि सुन तर्क मैं, संशय रहै न शेष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगवे नमः अर्घ्यं० ॥३५२॥

परम कहै उतकृष्टको, अर्थ होय गम्भीर ।
सो तुम वाणी में खिरै, बन्दत भवदधि तीर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नमः अर्घ्यं० ॥३५३॥

मोह क्षोभ परशान्त हो, तुम वाणी उरधार ।
भविजन को संतुष्ट कर, भव आताप निवार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रशांतगवे नमः अर्घ्यं० ॥३५४॥

बारह सभासु प्रश्न कर, समाधान करतार ।
मिथ्यामति विध्वंस करि, बन्दूं मनमें धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्राश्निकगिरे नमः अर्घ्यं० ॥३५५॥

महापुरुष महादेव हो, सुर नर पूजन योग ।
वाणी सुन मिथ्यात तज, पावैं शिवसुख भोग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं याज्युश्रुतये नमः अर्घ्यं० ॥३५६॥

शिव मग उपदेशक सुश्रुत, मन में अर्थ विचार ।
साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुश्रुतये नमः अर्घ्यं ॥३५७॥

तुम समान तिहुं लोक में, नहीं अर्थ परकाश ।
भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यामति को नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाश्रुतये नमः अर्घ्यं० ॥३५८॥

जो निजात्म-कल्याण में, बरतै सो उपदेश ।
धर्म नाम तिस जानियो, बन्दूं चरण हमेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मश्रुतये नमः अर्घ्यं० ॥३५९॥

जिन शासन के अधिपति, शिवमारग बतलाय ।
वा भविजन संतुष्ट करि, बन्दूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपतये नमः अर्घ्यं० ॥३६०॥

धारण हो उपदेश के, केवल ज्ञान संयुक्त ।
शिव मारग दिखलात हो, तुमको बन्दन युक्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतधृताय नमः अर्घ्यं० ॥३६१॥

जैसो है तैसो कहो, परम्पराय सु रीत ।
सत्यारथ उपदेश तैं, धर्म मार्ग की रीत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ध्रुवश्रुतये नमः अर्घ्यं० ॥३६२॥

मोक्ष मार्ग को देखियो, औरन को दिखलाय ।
तुम सम हितकारक नहीं, बन्दूं हूं तिन पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणमार्गोपदेशकाय नमः अर्घ्यं० ॥३६३॥

स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावक को धर्म ।
तुमको बन्दत सुख महा, लहै ब्रह्म पद धर्म ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यतिश्रावकमार्गदेशकाय नमः अर्घ्यं ॥३६४॥

तत्व अतत्वसु जानियो, तुम सब ही परतक्ष ।
निज-आतम सन्तुष्ट हो, देखो लक्ष्य अलक्ष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तत्वमार्गदृशे नमः अर्घ्यं० ॥३६५॥

सार तत्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश ।
स्वपर-प्रकाशक हो महा, बन्दे तिनको दास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सारतत्व-यथार्थाय नमः अर्घ्यं० ॥३६६॥

आप तीर्थ औरन प्रति, सर्व तीर्थ करतार ।
उत्तम शिवपुर पहुंचना, यही विशेषण सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्तमतीर्थकृताय नमः अर्घ्यं० ॥३६७॥

दृष्टा लोकालोक के, रेखा हस्त समान ।
युगपत सबको देखिये, कियो भर्म तम हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दृष्टाय नमः अर्घ्यं० ॥३६८ ।

जिनवाणी के रसिक हो, तामें रति दिन रैन ।
भोगोपभोग करो सदा, बन्दत ह्वै सुख चैन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वाग्मीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥३६६॥

जो संसार समुद्र से, पार करत सो धर्म ।
तुम उपदेश्या धर्म कूं, नमत मिटै भव भर्म ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मशासनाय नमः अर्घ्यं० ॥३७०॥

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार ।
मैं बन्दूं तिनको सदा, करो भवार्णव पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेशकाय नमः अर्घ्यं० ॥३७१॥

सब विद्या के ईश हो, पूरन ज्ञान सुजान ।
तिनको बन्दूं भाव से, पाऊं ज्ञान महान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वागीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥३७२॥

सुमति नार भरतार को, कुमति कुसील विडार ।
मैं पूजूं हूं भाव सो, पाऊं सुमती सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रयीनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥३७३॥

धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, हो दाता भगवान ।
मैं नित-प्रति पायन परूं, देहु परम कल्याण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभंगीशाय नमः अर्घ्यं० ॥३७४॥

गिरा कहै जिन वचन को, तिसका अन्त सु धर्म ।
मोक्ष करै भवि-जनन को, नाशै मिथ्या मर्म ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गिरांपतये नमः अर्घ्यं० ॥३७५॥

जाको सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान ।
शरणागत को सिद्ध है, नमूं सिद्ध धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हंसिद्धांगाय नमः अर्घ्यं० ॥३७६॥

नय-प्रमाणसों सिद्ध है, तुम वाणी रवि सार ।
मिथ्या तिमिर निवार कें, करै भव्य जन पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाङ्मयाय नमः अर्घ्यं० ॥३७७॥

निज पुरुषारथ साधकें, सिद्ध भये सुखकार ।
मन वच तन करि मैं नमूं, करो जगतसें पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥३७८॥

सिद्ध करै निज अर्थ को, तुम शासन हितकार ।
भवि जन मानै सरदहै, करै कर्म रज छार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धशासनाय नमः अर्घ्यं० ॥३७९॥

तीन लोक में सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त ।
अनेकांत परकाश कर, नाशै मिथ्या ध्वांत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रसिद्धसिद्धांताय नमः अर्घ्यं० ॥३८०॥

ओंकार यह मन्त्र है, तीन लोक परसिद्ध ।
तुम साधक कहलात हो, जपत मिलै नवनिद्ध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धमन्त्राय नमः अर्घ्यं० ॥३८१॥

सिद्ध यज्ञ को कहत है, संशय विभ्रम नाश ।
मोक्षमार्ग में ले धरै, निजानन्द परकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३८२॥

कोहरूप मलसों बुरी, वाणी कही पवित्र ।
भव्य स्वच्छता धारिकै, लहै मोक्ष पद तत्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुचिवाचे नमः अर्घ्यं० ॥३८३॥

कर्ण विषय में होत ही, करै आत्म-कल्याण ।
तुम वाणी शुचिता धरै, नमें 'सन्त' धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नमः अर्घ्यं० ॥३८४॥

वचन अगोचर पद धरो, कहते पंडित लोग ।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, सदा वन्दने योग्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरुक्तोक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥३८५॥

सुर नर मानें आन सब, तुम आज्ञा सिर धार ।
मानों तन्त्र विधान करि, बांधे एक लगार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तन्त्रकृते नमः अर्घ्यं० ॥३८६॥

जाकरि निश्चय कीजिए, वस्तु प्रमेय अपार ।
सो तुमसे परगट भयो, न्याय-शास्त्र रुचि धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं न्यायशास्त्रकृते नमः अर्घ्यं० ॥३८७॥

गुण अनन्त पर्याय युत, द्रव्य अनन्तानन्त ।
युगपत जानो श्रेष्ठ युत, धरो महा सुखवन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥३८८॥

तुम पद पावै सो महा, तुम गुण पार लहाय ।
शिव लक्ष्मी के नाथ हो, पूजूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥३८९॥

तुम सम कविवर जगत में, और न दूजो कोय ।
गणधर से श्रुतकार भी, अर्थ लहैं नहीं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कवीन्द्राय नमः अर्घ्यं० ॥३९०॥

हित करता षट् काय के, महा इष्ट तुम वैन ।
तुमको वन्दूं भावसों, मोक्ष महासुख दैन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महेष्टाय नमः अर्घ्यं० ॥३९१॥

मोक्ष दान दातार हो, तुम सम कौन महान ।
तीन लोक तुमको जजैं, मनमें आनन्द ठान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महानन्ददात्रे नमः अर्घ्यं० ॥३९२॥

द्वादशांग श्रुतको रचैं, गणधर से कविराज।
तुम आज्ञा शिर धारके, नमूं निजातम काज॥
ॐ ह्रीं अर्हं कवीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥३९३॥

देव महा ध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूंजूं युत चाव॥
ॐ ह्रीं अर्हं दुंदुभीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥३९४॥

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाय।
त्रिभुवन नाथ कहात हो, हम पूजत नित पांय॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवननाथाय नमः अर्घ्यं० ॥३९५॥

गणी मुनीश फणीशपति, कल्पेन्द्रनके नाथ।
अहमिन्द्रन के नाथ हो, तुमहिं नमूं धरि माथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महानाथाय नमः अर्घ्यं० ॥३९६॥

भिन्न-भिन्न देख्यो सकल, लोकालोक अनन्त।
तुम सम दृष्टि न औरकी, तुमैं नमें नित 'सन्त॥
ॐ ह्रीं अर्हं परदृष्टे नमः अर्घ्यं० ॥३९७॥

सब जगके भरतार हो, मुनिगणमें परधान।
तुमको पूजें भावसों, होत सदा कल्याण॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पतये नमः अर्घ्यं० ॥३९८॥

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार।
वरतैं धर्म पुरुषार्थ में, पूजत हूं सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वामिने नमः अर्घ्यं० ॥३९९॥

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ।
मालिक हो तिहुं लोकके, पूजनीक सत्यार्थ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥४००॥

तीन लोकके नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल।
चार संघके अधिपती, पूजूं हूं नमि भाल॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विधसंघाधिपतये नमः अर्घ्यं० ॥४०१॥

तुम सम और विभव नहीं, धरो चतुष्ट अनन्त ।
क्यों न करो उद्धार अब, दास कहावे 'सन्त' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयविभवधारकाय नमः अर्घ्यं० ॥४०२॥

जामें विघन न हो कभी, ऐसो श्रेष्ठ विभूत ।
पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजन शुभ करतूत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रभवे नमः अर्घ्यं० ॥४०३॥

तुम सम शक्ति न औरकी, शिवलक्ष्मी को पाय ।
भोगै सुख स्वाधीन कर, बन्दूं जिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयशक्तिधारकाय नमः अर्घ्यं० ॥४०४॥

तुमसे अधिक न औरमें, पुरुषारथ कहुं पाय ।
हो अधीश सब जगतके, बन्दूं जिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४०५॥

अधीश्वर चउ संघ के शिवनायक शिरमौर ।
पूजत हूं नित भावसों, शीश दोऊ कर जोर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधीशा नमः अर्घ्यं० ॥४०६॥

सहज सुभाव प्रयत्न बिन, तीन लोक आधीश ।
शुद्ध सुभाव विराजते, बन्दूं पद धर शीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाधीशाय नमः अर्घ्यं० ॥४०७॥

छायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान ।
तुमसें शिवमारग चलै, मैं बन्दूं धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधीशिश्रेय नमः अर्घ्यं० ॥४०८॥

स्वयंबुद्ध शिवनाथ हो, धर्मतीर्थ करतार ।
तम सम सुमति न को धरै, मैं बन्दूं निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थकर्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥४०९॥

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूजत ब्रह्म प्रकाश ।
पूरण पद पायो प्रभू, पूजत पाप विनाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णपदप्राप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥४१०॥

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय ।
तीन लोक अत्यन्त सुख, पायो बन्दूं ताय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपतये नमः अर्घ्यं० ॥४११॥

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान ।
मैं पूजों हों भावसों, सबसे बड़े महान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ईशाय नमः अर्घ्यं० ॥४१२॥

सूरज सम परकाश कर, मिथ्यातम परिहार ।
भविजन कमल प्रबोधको, पायो निज हितकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ईशानाय नमः अर्घ्यं० ॥४१३॥

क्रीड़ा करि शिवमार्ग में, पाय परमपद आप ।
आज्ञा भंग न हो कभी, बन्दत नाशे पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्राय नमः अर्घ्यं० ॥४१४॥

उत्तम हो तिहुं लोकमें, सबके हो सिरताज ।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूं आतम काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥४१५॥

अधिक भूतिके हो धनी, सुखी सर्व निरधार ।
सुरनर तुम पदको लहैं, पूजत हूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधिभुवे नमः अर्घ्यं० ॥४१६॥

तीन लोक कल्याणकर, धर्म मार्ग बतलाय ।
सब देवनके देव हो, महादेव सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४१७॥

महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय ।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महेशाय नमः अर्घ्यं० ॥४१८॥

परम कहो उत्कृष्टको, धर्म तीर्थ बरताय ।
परमेश्वर यातें भये, बन्दूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४१९॥

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ।
महा विभव ऐश्वर्य को, धरो नमूं निज माथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महेशित्रे नमः अर्घ्यं० ॥४२०॥

चार प्रकारनके सदा, देव तुम्हें शिर नाय।
सब देवनमें श्रेष्ठ हो, नमूं युगल तुम पांय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधिदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥४२१॥

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवनके देव।
यों महान पदवी धरो, तुम पूजत हूं एव॥
ॐ ह्रीं अर्हं महादेवाय नमः अर्घ्यं० ॥४२२॥

शिवमारग तुममें सही, देव पूजने योग।
सहचारी तुम सुगुण हैं, और कुदेव अयोग॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवाय नमः अर्घ्यं० ॥४२३॥

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार।
त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूं निरधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४२४॥

विश्वपती तुमको नमैं, निज कल्याण विचार।
सर्व विश्व के तुम पती, मैं पूजूं उर धार॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नमः अर्घ्यं० ॥४२५॥

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द॥
षट्कायिक आह्लादकर, जिम कुमोदनी चन्द॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं० ॥४२६॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमको पूजत आन।
यातें तुम विश्वेश सो, सांच नमूं धर ध्यान॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नमः अर्घ्यं० ॥४२७॥

विश्व बन्ध दृढ़ तोड़के, विश्व शिखर ठहराय।
चरण कमल तल जगत है, यूं सब पूजत पांय॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४२८॥

शिवमारगकी रीति तुम, बरतायो शुभ योग।
तिहूं काल तिहुं लोकमें, और कुनीति अयोग॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधिराजे नमः अर्घ्यं० ॥४२६॥

लोक तिमिर हर सूर्य हो, तारण लोक जिहाज।
लोकशिखर राजत प्रभू, मैं बन्दूं हित काज॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४३०॥

तीन लोक प्रतिपाल हो, तीन लोक हितकार।
तीन लोक तारण तरण, तीन लोक सरदार॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकपतये नमः अर्घ्यं० ॥४३१॥

लोक-पूज्य सुखकार हो, पूजत हैं हित धार।
मैं पूजों नित भाव सों, करो भवार्णव पार॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥४३२॥

पूजनीक जगमें सही, तुम्हें कहैं सब लोग।
धर्म मार्ग प्रगटित कियो, यातें पूजन योग॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगपूज्याय नमः अर्घ्यं० ॥४३३॥

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोक।
तिनमें तुम उत्कृष्ट हो, तम्हैं देत नित धोक॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥४३४॥

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोकमें और।
स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमौर॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकेशाय नमः अर्घ्यं० ॥४३५॥

जगत नाथ जग ईश हो, जगपति पूजें पांय।
मैं पूजूं नित भाव युत, तारण तरण सहाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नाथाय नमः अर्घ्यं० ॥४३६॥

महा भूति इस जगतमें, धारत हो निरभंग।
सब विभूति जग जीतिकें, पायो सुख सरबंग॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रभवे नमः अर्घ्यं० ॥४३७॥

मुनि मन करण पवित्र हो, सब विभावको नाश।
तुम को अंजुलि जोरकर, नमूं होत अघ नाश॥
ॐ ह्रीं अर्हं पवित्राय नमः अर्घ्यं० ॥४३८॥

मोक्ष रूप परधान हो, ब्रह्मज्ञान परवीन।
बन्ध रहित शिव सुख सहित, नमैं सन्त आधीन॥
ॐ ह्रीं अर्हं पराक्रमाय नमः अर्घ्यं० ॥४३९॥

जामें जन्म-मरण नहीं, लोकोत्तर कियो वास।
अचल सुथिर राजै सदा, निजानन्द परकाश॥
ॐ ह्रीं अर्हं परत्राय नमः अर्घ्यं० ॥४४०॥

मोहादिक रिपु जीत के, विजयवन्त कहलाय।
जैत्र नाम परसिद्ध है, बन्दूं तिनके पाय।
ॐ ह्रीं अर्हं जैत्रे नमः अर्घ्यं० ॥४४१॥

रक्षक हो षट् कायके, कर्म शत्रु क्षयकार।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजूं सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिष्णवे नमः अर्घ्यं० ॥४४२॥

करता हो विधि कर्म के, हरता पाप विशेष।
पुन्यपाप सु विभाग कर, भ्रम नहीं राखो लेश॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥४४३॥

स्वानन्द-ज्ञान विनाश बिन, अचल सुथिर रहै राज।
अविनाशी अविकार हो, बन्दूं निजहित काज॥
ॐ ह्रीं अर्हं विस्मरणीय नमः अर्घ्यं० ॥४४४॥

इन्द्रादिक पूजित चरन, महा भक्ति उर धार।
तुम महान ऐश्वर्य को, धारत हो अधिकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रभाविष्णवे नमः अर्घ्यं० ॥४४५॥

गुण समूह गुरुता धरैं, महा भाग सुख रूप।
तीन लोक कल्याण कर, पूजूं हूं शिव भूप॥
ॐ ह्रीं अर्हं भारजिष्णवे नमः अर्घ्यं० ॥४४६॥

महाविभव को धरत हैं, हितकारण मितकार ।
धर्म-नाथ परमेश हो, पूजत हूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रभूष्णवे नमः अर्घ्यं० ॥४४७॥

बिन कारण असहाय हो, स्वयं प्रभा अविरुद्ध ।
तुमको बन्दूं भावसों, निज आतम कर शुद्ध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्यं० ॥४४८॥

लोकवासको नाश कर, लोक सम्बन्ध निवार ।
अचल विराजें शिवपुरी, पूजत हूं उर धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकजिते नमः अर्घ्यं० ॥४४९॥

विश्व नाम संसार है, जन्म मरण सो होय ।
सोई व्याधि विनासियो, जजूं जोड़कर दोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजिते नमः अर्घ्यं० ॥४५०॥

विश्व कषाय निवार के, जग सम्बन्ध विनाश ।
जनम-मरण बिन ध्रुव लसे, नमूं ज्ञान परकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजेत्रे नमः अर्घ्यं० ।४५१॥

विश्व-वास तुम जीतियो, विश्व नमावें शीश ।
पूजत हैं हम भक्तिसों, जयवन्तो जगदीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजिते नमः अर्घ्यं० ॥४५२॥

इन्द्रादिक जिनको नमें, ते तुम शीश नवाय ।
विश्वजीत तुम नाम है, शरणागत सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजित्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४५३॥

तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणांबुज ठौर ।
यातें सब जग जीति के, राजत हो शिरमौर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जेत्रे नमः अर्घ्यं० ॥४५४॥

तीन लोक कल्याण कर, कर्म शत्रु को जीत ।
भव्यन प्रति आनंद कर, मेटत तिनकी भीति ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जिष्णवे नमः अर्घ्यं० ॥४५५॥

जग जीवन को अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर।
धर्म मार्ग प्रकटाय कर, पहुंचायो शिव ठौर॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नेत्राय नमः अर्घ्यं०॥४५६॥

मोहादिक जिन जीतियो, सोई जग में नाम।
सो तुम पद पायो महा, तुम पद करूं प्रणाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगजयिने नमः अर्घ्यं०॥४५७॥

जो तुम धर्म प्रकट करि, जिय आनन्दित होय।
अग्र भये कल्यान कर, तुम पद प्रणमूं सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अग्रण्ये नमः अर्घ्यं०॥४५८॥

रक्षा करि षट् काय की, विषय-कषाय न लेश।
त्रास हरो जमराज को, जयवन्तो गुण शेष॥
ॐ ह्रीं अर्हं दयामूर्तये नमः अर्घ्यं०॥४५९॥

सत्य असत्य लखन करै, सोई नेत्र कहाय।
पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, सांचे नेत्र सुखाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यनेत्राय नमः अर्घ्यं०॥४६०॥

सुर नर मुनि तुम ज्ञानतैं, जानैं निज कल्याण।
ईश्वर हो सब जगत के, आनंद संपति खान॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं०॥४६१॥

धर्माभास मनोक्त के, मूल नाश कर दीन।
सत्य मार्ग बतलाइयो, कियो भव्य सुख लीन॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनायकाय नमः अर्घ्यं०॥४६२॥

ऋद्धिन में परसिद्ध है, केवल ऋद्धि महान।
सो तुम पायो सहज ही, योगीश्वर मुनि मान॥
ॐ ह्रीं अर्हं ऋद्धीशाय नमः अर्घ्यं०॥४६३॥

जो प्राणी संसार में, तिन सबके हितकार।
आनंद सों सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतनाथाय नमः अर्घ्यं०॥४६४॥

प्राणिन के भरतार हो, दुख टारन सुखकार।
तुम आश्रय करि जीव सब, आनंद लहैं अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतभर्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥४६५॥

सत्य धर्म के मार्ग हो, ज्ञान मात्र निरशंश।
तुम ही आश्रय पाय के, रहै न अघ को अंश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पात्रे नमः अर्घ्यं० ॥४६६॥

अतुल वीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार।
तुम सम बल नहीं और में, होउ सहाय अबार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतुलबलाय नमः अर्घ्यं० ॥४६७॥

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ बरताय।
स्वसुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वृषाय नमः अर्घ्यं० ॥४६८।

हिंसा को वर्जित कियो, जे अपराध महान।
परिग्रह अर आरम्भ के, त्यागी श्री भगवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परिग्रहत्यागीजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥४६९॥

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पायो स्वयं उपाय।
सांचे हो वश करण को, जग में मंत्र कराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्रकृते नमः अर्घ्यं० ॥४७०॥

जितने कछु शुभ चिन्ह हैं, दीप्त अशेष स्वरूप।
शुभ लक्षण सोहत अति, सहजे तुम शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुभलक्षणाय नमः अर्घ्यं० ॥४७१॥

लोक विषैं तुम मार्ग को, मानत हैं बुधवन्त।
तर्क हेतु करुणा लिए, यातें माने 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकाध्यक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥४७२॥

काहू के वश में नहीं, काहू नमत न शीश।
कठिन रीति धारैं प्रभू, नमूं सदा जगदीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दुरोध्रष्टाय नमः अर्घ्यं० ॥४७३॥

वासनि के प्रतिपाल कर, शरणागति हितकार।
भवि दुखियन को पोष कर, दियो अर्थ पवसार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भव्यबन्धवे नमः अर्घ्यं० ॥४७४॥

निराकरण करि कर्म को, सरल सिद्धगति धार।
शिवथल जाय सु वास लहि, धर्मद्रव्य सहकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तकर्माय नमः अर्घ्यं० ॥४७५॥

मुनि ध्यावें पावें सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान।
पावे निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमध्येयजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥४७६॥

रक्षक हो जग के सदा, धर्म दान दातार।
पोषित हो सब जीव के, बन्धू भाव लगार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्तापहराय नमः अर्घ्यं० ॥४७७॥

मोह प्रचंड बली जयो, अतुल वीर्य भगवान।
शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूं हेत कल्याण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मोहारिजिताय नमः अर्घ्यं० ॥४७८॥

तीन लोक शिरमौर तुम, सब पूजत हरषाय।
परमेश्वर हो जगत के, बंदत हूं तिन पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४७९।

लोक शिखर पर अचल नित, राजत हैं तिहुं काल।
सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वासिने नमः अर्घ्यं० ॥४८०॥

विश्वभूति प्राणीन के, ईश्वर हैं भगवान।
सबके शिर पर पग धरैं, सर्व आन तिन मान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं० ॥४८१॥

मोक्ष संपदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य।
कौन मूढ़ कौड़ी लहै, सर्वोत्तम धनवर्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विभवाय नमः अर्घ्यं० ॥४८२॥

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रंक।
तुम तज चाहै और को, ऐसो को बुध बंक॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥४८३॥

उत्तरोत्तर तिहुं लोक में, दुर्लभ लब्धि कराय।
तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भाग सो पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगदुर्लभाय नमः अर्घ्यं० ॥४८४॥

बढ़वारी परणामसों, पूर्ण अभ्युदय पाय।
भई अनंत विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अभ्युदयाय नमः अर्घ्यं० ॥४८५॥

तीन लोक मंगलकरण, दुखहारण सुखकार।
हमको मंगल द्यो महा, पूजों बारम्बार॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगन्मंगलोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥४८६॥

आप धर्म के सामने, और धर्म लुप जायें।
धर्मचक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तव पायें॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घ्यं० ॥४८७॥

सत्य शक्ति तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर।
है प्रसिद्ध इस जगत में, कर्म शत्रु शिरमौर॥
ॐ ह्रीं अर्हं सद्योजाताय नमः अर्घ्यं० ॥४८८॥

मंगलमय मंगलकरण, तीन लोक विख्यात।
सुमरण ध्यानसु करतही, सकल पाप नशि जात॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमंगलाय नमः अर्घ्यं० ॥४८९॥

द्रव्य-भाव बऊ वेद बिन, स्वातम रति सुख मान।
पर-आलिंगन रतिकरण, निरइच्छुक भगवान॥
ॐ ह्रीं अर्हं अवेदाय नमः अर्घ्यं० ॥४९०॥

घातिरहित स्व-पर दया, निजानन्द रसलीन।
सुखसों अवगाहन करें, 'संत' चरण आधीन॥
ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिघाताय नमः अर्घ्यं० ॥४९१॥

निजानन्द स्व-देशमें, खंड खंड नहीं होय ।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूं भ्रम खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्याय नमः अर्घ्यं० ॥४९२॥

सिद्ध समान सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात ।
कभूं न जगमें जन्म फिर, सोई वृद्ध कहलात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वृद्धीयसे नमः अर्घ्यं० ॥४९३॥

जन्म मरण के कष्ट से, सर्व लोक भयवंत ।
ताको नाश अभय करण, तुम्हें नमें जिय 'संत' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अभयंकराय नमः अर्घ्यं० ॥४९४॥

ज्ञानानन्द स्व-लक्ष्मी, भोगत हो निरखेद ।
महा भोग यातें भये, हैं स्वाधीन अवेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घ्यं० ॥४९५॥

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उत्कृष्ट ।
परसों भिन्न अखिन्न हो, पायो पद अविनष्ट ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरोपम्याय नमः अर्घ्यं० ॥४९६॥

दश लक्षण शुभ धर्म के, राजसम्पदा भोग ।
नायक हो निज धर्म के, पूजि नमैं तिहुं योग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसाम्राज्यनायकाय नमः अर्घ्यं० ॥४९७॥

अधिपति स्वामि स्वभाव निज, परकृत भाव विडार ।
तिहूं वेद रति मान बिन, सम्पूरन सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वेदप्रवृत्ताय नमः अर्घ्यं० ॥४९८॥

यथायोग्य पद पाइयो, यथायोग्य सम्पूर्ण ।
नमूं त्रियोग संभारिके, करूं पाप मल चूर्ण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सम्पूर्णयोगिने नमः अर्घ्यं० ॥४९९॥

सब इन्द्रिय मन रोकके, आरोहण तिस भाव ।
श्रेणी उच्च चढ़ावमें, तत्पर अन्त सु पाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं समारोहणतत्पराय नमः अर्घ्यं० ॥५००॥

एकाश्रय निज धर्ममें, परसों भिन्न सदीव ।
सहज स्वभाव बिराजते, सिद्धराज सब जीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सहजसिद्धरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥५०१॥

राग द्वेष बिन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव ।
तन विकल्प नहीं भावमें, पूजत हों धरि चाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सामायिकाय नमः अर्घ्यं० ॥५०२॥

निजानन्द निज-लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय ।
अतुल वीर्य स्वभावतें, परमादी नहीं होय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निष्प्रमादाय नमः अर्घ्यं० ॥५०३॥

है अनादि संतान करि, कभी भयो नहीं आदि ।
नित्य शिवालय पूर्णता, बसै जगत अघवादि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अकृताय नमः अर्घ्यं० ॥५०४॥

पर-पदार्थ नहीं इष्ट हैं, जिनपद में लवलीन ।
विघ्नहरण मंगलकरण, तुम पद मस्तक दीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमभावाय नमः अर्घ्यं० ॥५०५॥

नित्य शौच संतोष मय, पर-पदार्थसों रोक ।
निश्चय सम्यक् भाव मय, है प्रधान त्रूं धोक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रधानाय नमः अर्घ्यं० ॥५०६॥

ज्ञान ज्योति निज धरत हो, निश्चल परम सुठाम ।
लोकालोक प्रकाश कर, मैं बन्दूं सुखधाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वभासपरभासनाय नमः अर्घ्यं० ॥५०७॥

एक स्थान सु थिर सदा, निश्चय चारित भूप ।
शुध उपयोग प्रभावतें, कर्म खिपावन रूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्राणायामचरणाय नमः अर्घ्यं० ॥५०८॥

विषय स्वादसों हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय ।
निज आतम लवलीन हैं, शुद्ध कहावैं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रत्याहाराय नमः अर्घ्यं० ॥५०९॥

इन्द्री विषय न वश रहे, निज आतम लवलाय।
सो जिनेन्द्र स्वाधीन हैं, वन्दूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जितेन्द्रियाय नमः अर्घ्यं० ॥५१०॥

ध्यान विषैं सो धारणा, निज आतम थिर धार।
ताके अधिपति हो महा, भये भवार्णव पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धारणाधीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥५११॥

रागादिक मल नाशिके, ध्यान सु धर्म लहाय।
अचल रूप राजै सदा, वन्दूं मन वच काय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मध्याननिष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥५१२॥

निजानन्दमें मगन हैं, परपद राग निवार।
समदृष्टी राजत सदा, हमें करो भव पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं समाधिराजे नमः अर्घ्यं० ॥५१३॥

वीतराग निर्विकल्प है, ज्ञान उदय निरशंस।
समरसभाव परम सुखी, नमत मिटैं दुख अंश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरितसमरसीभावाय नमः अर्घ्यं० ॥५१४॥

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठौर।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं एकीभावनयरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥५१५॥

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ।
ध्यावैं पावैं परम पद, नमूं जोर जुग हाथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्ग्रन्थनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥५१६॥

योग साधि योगी भये, तिनको इन्द्र महान।
ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं योगीन्द्राय नमः अर्घ्यं० ॥५१७॥

शिवमारग सिद्धांत के, पार भये मुनि ईश।
तारण-तरण जिहाज हो, तुम्हें नमूं नित शीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ऋषये नमः अर्घ्यं० ॥५१८॥

निज स्वरूपको साधिकर, साध भये जग माहि।
निजपर हितकर गुण धरें, तीन लोक नमि ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं साधवे नमः अर्घ्यं० ॥५१९॥

रागादिक रिपु जीतके, भये यती शुभ नाम।
धर्म धुरंधर परम गुरु, जुगपद करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यतये नमः अर्घ्यं० ॥५२०॥

पर सम्पतिसूं विमुख हो, निजपद रुचि करि नेम।
मुनि मन रंजन पद महा, तुम धारत हो ऐम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मुनये नमः अर्घ्यं० ॥५२१॥

महाश्रेष्ठ मुनिराज हो, निजपद पायौ सार।
महा परम निरग्रन्थ हो, पूजत हूँ मन धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महर्षिये नमः अर्घ्यं० ॥५२२॥

साधु भार दुरगमन है, ताहि उठावन हार।
शिव-मन्दिर पहुंचात हो, महाबली सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं साधुधोरेयाय नमः अर्घ्यं० ॥५२३॥

इन्द्री मन जित जे जती, तिनके हो तुम नाथ।
परम्परा मरजाद धर, देहु हमें निज साथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यतीनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥५२४॥

चार संघ मुनिराजके, ईश्वर हो परधान।
परहितकर सामर्थ्य हो, निज सम करि भगवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मुनीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥५२५॥

गणधरादि सेवक महा, तिन आज्ञा शिरधार।
समकित ज्ञान सु लक्षमी, पावत हैं निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महामुनये नमः अर्घ्यं० ॥५२६॥

महामुनि सर्वस्व हो, धर्म मूर्ति सरवांग।
तिनको बन्दूं भाव युत, पाऊं मैं धर्मांग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महामौनिने नमः अर्घ्यं ॥५२७॥

इष्टानिष्ट विभाव बिन, समदृष्टि स्वध्यान।
मगन रहैं निजपद विषैं, ध्यान रूप भगवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाध्यानिने नमः अर्घ्यं० ॥५२८॥
स्व सुभाव नहीं त्याग है, नहीं ग्रहण पर माहिं।
पाप कलाप न आपमें, परम शुद्ध नमूं ताहिं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाव्रतिने नमः अर्घ्यं० ॥५२९॥
क्रोध प्रकृति विनाश के, धरैं क्षमा निज भाव।
समरस स्वाद सु लहत हैं, बन्दूं शुद्ध स्वभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं० ॥५३०॥
मोह रूप सन्ताप बिन, शीतल महा स्वभाव।
पूरण सुख आकुल नहीं, बन्दूं मन धर चाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाशीतलाय नमः अर्घ्यं० ॥५३१॥
मन इन्द्रिय के क्षोभ बिन, महा शांति सुख रूप।
निजपद रमण स्वभाव नित, मैं बन्दूं शिव भूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाशांताय नमः अर्घ्यं० ॥५३२॥
मन इन्द्रिय को दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र।
स्वाभाविक स्वशक्ति कर, बन्दूं भये जीतेन्द्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥५३३॥
पर पदार्थ को क्लेश तजि, व्यापैं निजपद माहिं।
स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूँ नित ताहिं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं० ॥५३४॥
संशयादि दृष्टि नहीं, सम्यग्ज्ञान मंझार।
सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महा तुष्ट सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्भ्रांताय नमः अर्घ्यं ॥५३५॥
शांतिरूप निज शांति गुण, सो तुमही में पाय।
निज मन शांति सुभाव धर, पूजत हूँ युग पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥५३६॥

मुनि श्रावक द्वै धर्म के, तुम अधिपति शिवनाथ ।
भविजन को श्रानन्द करि, तुम्हें नवाऊं माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥५३७॥

दया नीति बरताइयो, सुखी किये जगजीव ।
कल्पित राग ग्रसित नहीं, जानत मार्ग [illegible] ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दयाध्वजाय नमः अर्घ्यं० ॥५३८॥

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर-बा[illegible]
ज्ञानज्योतिघन नमत हूं, मनवचतन धरि [illegible] ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मयोनये नमः अर्घ्यं० ॥५३९॥

स्वयं बुद्ध अविरुद्ध हो, स्वयं ज्ञान परकाश ।
निजपर भाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥५४०॥

रागादिक मल नाशियो, महा पवित्र सुखाय ।
शुद्ध स्वभाव धरैं करैं, सुरनर थुति न अघाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घ्यं० ॥५४१॥

वीतराग श्रद्धानता, सम्पूरण वैराग ।
द्वेष रहित शुभ गुण सहित, रहूं सदा पगलाग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं० ॥५४२॥

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खान ।
निर्मल भाव थकी जजूं, होत पाप की हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमदभावाय नमः अर्घ्यं० ॥५४३॥

अतुल वीर्य जा ज्ञानमें, सूर्य समान प्रकाश ।
मोक्षनाथ निज धर्म जुत, स्व-ऐश्वर्य विलास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमैश्वर्याय नमः अर्घ्यं० ॥५४४॥

मत्सर क्रोध जु ईर्ष्या, पर में द्वेष कुभाव ।
सो तुम नाशो सहज ही, निवित कुषित विभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं० ॥५४५॥

धरम भार सिर धारकर, समाधान परकाज।
तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारणतरण जिहाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मवृषाय नमः अर्घ्यं० ॥५४६॥

क्रोध कर्म जड़सैं नसो, भयो क्षोभ सब दूर।
महा शांति सुखरूप हो, पूजत अघ सब चूर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं० ॥५४७॥

इष्टमिष्ट बादरझरी, विद्युत विधि कर खण्ड।
जिष्णु महाकल्याणकर, शिवमग भाग प्रचण्ड ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाविधिखण्डाय नमः अर्घ्यं० ॥५४८॥

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार।
जन्म कल्याणक इन्द्र कर, क्षीरनीर करधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमृतोद्भवाय नमः अर्घ्यं० ॥५४९॥

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार।
मूर्तीक शुभ मन्त्र हो, देव जजैं हित धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्रमूर्तये नमः अर्घ्यं० ॥५५०॥

सौम्य दशा प्रकटी घनी, जाति विरोधी जीव।
वैर छांड समभाव धर, सेवत चरण सदीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वैरसौम्यभावाय नमः अर्घ्यं० ॥५५१॥

पराधीन इन्द्री बिना, राग विरोध निवार।
हो स्वाधीन न करण पर, स्वयं सिद्ध सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वतन्त्राय नमः अर्घ्यं० ॥५५२॥

ब्रह्म रूप, नहीं बाह्य तन, सम्भव ज्ञान स्वरूप।
स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मसम्भवाय नमः अर्घ्यं० ॥५५३॥

आनन्दधार सु मगन है, सब विकल्प दुख टार।
पर आश्रित नहीं भाव हैं, पूजूं आनन्द धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्नाय नमः अर्घ्यं० ॥५५४॥

परिपूरण गुण सीम है, सर्व शक्ति भण्डार ।
तुमसे सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गुणांबुधये नमः अर्घ्यं० ॥५५५॥

ग्रहण-त्याग को भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेव ।
व्याधिकार है वस्तु में तुम्हें नमूं निरखेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपापनिरोधकाय नमः अर्घ्यं० ॥५५६॥

सूक्षम रूप अलक्ष हैं, गणधर आदि अगम्य ।
आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अगम्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महागम्यसूक्ष्मरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥५५७॥

अन्तरगुप्त स्व-आत्मरस, ताको पान करात ।
पर प्रवेश नहीं रंच है, केवल मग्न सुजात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं० ॥५५८॥

निजकारक निज कर्णकर, निजपद निज आधार ।
सिद्ध कियो निज रस लियो, पूजत हूँ हितकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मने नमः अर्घ्यं० ॥५५९॥

नित्य उदै बिन अस्त हो, पूरण द्युति घन आप ।
ग्रहै न राहू जास शशि, सो हो हर सन्ताप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरुपल्लवाय नमः अर्घ्यं० ॥५६०॥

लियो अपूरव लाभ को, अचल भये सुखधाम ।
पूज रचैं जे भावसों, पूर्ण होइ सब काम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोदर्काय नमः अर्घ्यं० ॥५६१॥

है प्रशंस तिहुं लोक में, तुम पुरुषार्थ उपाय ।
पायो धर्म सुधाम को, पूजों तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोपायाय नमः अर्घ्यं० ॥५६२॥

गणधरादि जे जगतपति, तथा सुरेन्द्र सुरीश ।
तुमको पूजत भक्ति करि, चरण धरें निजशीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पितामहाय नमः अर्घ्यं० ॥५६३॥

तुम ही सों भवि सुख लहै, तुम बिन दुख ही पाय ।
नेमरूप यही है तुम्हें, महानाम हम गाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाकारुणिकाय नमः अर्घ्यं० ॥५६४॥

महासुगुण की रास हो, राजत हो गुण रूप ।
लौकिकगुण औगुण सही, सब ही द्वेष सरूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥५६५॥

जन्म-मरण आदिक महा, क्लेश ताहि निरवार ।
परमसुखी तुमको नमूं, पाऊं भवदधि पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाक्लेशनिवारणाय नमः अर्घ्यं० ॥५६६॥

रागादिक नहीं भाव है, द्रव्य देह नहीं धार ।
दोऊ मलिनता छांड़िके, स्वच्छ भये निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाशुचये नमः अर्घ्यं० ॥५६७॥

आधि व्याधि नहीं रोग है, नित प्रसन्न निज भाव ।
आकुलता बिन शांति-सुख, धारत सहज सुभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अरुजे नमः अर्घ्यं० ॥५६८॥

यथायोग्य पद थिर सदा, यथायोग्य निज लीन ।
अविनाशी अविकार हैं, नमैं 'सन्त' चित दीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदायोगाय नमः अर्घ्यं० ॥५६९॥

स्वामृत रसको पान करि, भोगत हैं निज स्वाद ।
पर-निमित्ति चाहें नहीं, करैं न तिनको याद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाभोगाय नमः अर्घ्यं० ॥५७०॥

निर-उपाधि निज धर्म में, सदा रहैं सुखकार ।
रत्नत्रय की मूरती, अनागार आगार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाधृतये नमः अर्घ्यं० ॥५७१॥

रागद्वेष नहीं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव ।
ज्ञाता दृष्टा जगतके, परसों नहीं लगाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमोदासीनाय नमः अर्घ्यं० ॥५७२॥

आदि अन्त बिन वहत है, परम धाम निरधार ।
अन्तर परत न एक छिन, निज सुख परमाधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं० ॥५७३॥

मूल देह आकृति रहै, हो नहिं अन्य प्रकार ।
सत्याशन इम नाम है, पूजूं भक्ति लगार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्याशने नमः अर्घ्यं० ॥५७४॥

परम शांति सुखमय सदा, क्षोभ रहित तिस स्वामि ।
तीनलोक प्रति शांतिकर, तुम पद करूं प्रणामि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शांतिनायकाय नमः अर्घ्यं० ॥५७५॥

काल अनन्तानन्त करि, रुल्यो जीव जग माहिं ।
आत्मज्ञान नहीं पाइयो, तुम पायो है ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वविद्याय नमः अर्घ्यं० ॥५७६॥

यथाख्यात चारित्र को, जानो मानो भेद ।
आत्मज्ञान केवल थकी, पायो पद निरभेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं योगज्ञायकाय नमः अर्घ्यं० ॥५७७।

धर्ममूर्ति सर्वस्व हो, राजत शुद्ध स्वभाव ।
धर्ममूर्ति तुमको नमूं, पाऊँ मोक्ष उपाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममूर्तये नमः अर्घ्यं० ॥५७८॥

स्व-आतम परदेस में, अन्य मिलाप न होय ।
आकृति है निजधर्म की, निज विभाव को खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेहाय नमः अर्घ्यं० ॥५७९॥

स्वामी हो निज-आतम के, अन्य सहाय न पाय ।
स्वर्ग-सिद्ध परमातमा, हम पर होउ सहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मेशाय नमः अर्घ्यं० ॥५८०॥

निज पुरुषारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार ।
करना था सो करि चुके, तिष्ठें सुख आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृताय नमः अर्घ्यं० ॥५८१॥

असाधारण तुम गुण धरत, इन्द्रादिक नहीं पाय ।
लोकोत्तम बहु मान्य हो, बंदूं हूं युग पांय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं गुणात्मकाय नमः अर्घ्यं० ।।५८२।।

तुम गुण परम प्रकाशकर, तीन लोक विख्यात ।
सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उधरात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणगुणप्रकाशाय नमः अर्घ्यं० ।।५८३।।

समय मात्र नहीं आदि है, वहैं अनादि अनंत ।
तुम प्रवाह इस जगत में, तुम्हें नमैं नित 'संत' ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्निमेषाय नमः अर्घ्यं० ।।५८४।।

योग-द्वार बिन करम रज, चढ़ै न निज परदेश ।
ज्यों बिन छिद्र न जल गहै, नवका शुद्ध हमेश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घ्यं० ।।५८५।।

परम ब्रह्म पद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश ।
तीन लोक के जीव सब, पूजें चरण निवास ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाब्रह्मपतये नमः अर्घ्यं० ।।५८६।।

द्रव्य पर्यायार्थिक दोऊ नय, साधत वस्तु स्वरूप ।
गुण अनंत अवरोधकर, कहत सरूप अनूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुनयतत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं० ।।५८७।।

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूर ।
शरण गही तुम चरण की, करो ज्ञान द्युति पूरि ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सूरये नमः अर्घ्यं० ।।५८८।।

तुम सम और न जगत में, सत्यारथ तत्त्वज्ञ ।
सम्यग्ज्ञान प्रभावतैं, हो अदोष सर्वज्ञ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं० ।।५८९।।

तीन लोक हितकार, हो, शरणागति प्रतिपाल ।
भव्यनि मन आनंद करि, बंदूं दीनदयाल ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महामित्राय नमः अर्घ्यं० ।।५९०।।

समता सुख में मगन हैं, राग द्वेष संक्लेश।
ताको नाशि सुखी भये, युग-युग जिम्रो जिनेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं साम्यभावधारकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥५६१॥
निरावरण निज ज्ञान में, संशय विभ्रम नाहिं।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशतें, वस्तु प्रमाण दिखाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रक्षीणबन्धाय नमः अर्घ्यं० ॥५६२॥
एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय।
पर-निमित्त लवलेश नहीं, बंदूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं० ॥५६३॥
मुनि विशेष स्नातक कहैं, परमातम परमेश।
तुम ध्यावत निर्वाण पद, पावें भविक हमेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं० ॥५६४॥
पंच प्रकार शरीर बिन, दीप्त रूप निज रूप।
सुर मुनि मन रमणीय हैं, पूजत हूं शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंगाय नमः अर्घ्यं० ॥५६५॥
द्वय प्रकार बन्धन रहित, नित हो मोक्ष सरूप।
भविजन बंध विनाशकर, देहो मोक्ष अनूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणाय नमः अर्घ्यं० ॥५६६॥
सगुण रत्नकी राशके, आप महा भण्डार।
अगम अथाह विराजते, बन्दूं भाव विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सागराय नमः अर्घ्यं० ॥५६७॥
मुनिजन ध्यावें भावयुत, महा मोक्षप्रद साध।
सिद्ध भये मैं नमत हूं, चहूं संघ आराध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महासाधवे नमः अर्घ्यं० ॥५६८॥
ज्ञान ज्योति प्रतिभास में, रागादिक मल नाहिं।
विशद अनूपम लसत हो, दीप्तज्योति शिवराह ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलाभाय नमः अर्घ्यं० ॥५६९॥

द्रव्य-भाव मल नाशकर, शुद्ध निरंजन देव ।
निज-आतममें रमत हो, आश्रय बिन स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मने नमः अर्घ्यं० ॥६००॥

शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ ।
श्रीधर नाम कहात हो, हरिहर नावत माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधराय नमः अर्घ्यं० ॥६०१॥

मरणादिक भयसे सदा, रक्षित हैं भगवान ।
स्वयं प्रकाश विलास में, राजत सुख की खान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मरणभयनिवारणाय नमः अर्घ्यं० ॥६०२॥

राग-द्वेष नहीं भावमें, शुद्ध निरंजन आप ।
ज्यों के त्यों तुम थिर रहो, तनक न व्यापै पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमलभावाय नमः अर्घ्यं० ॥६०३॥

भवसागर से पार हो, पहुंचे शिवपद तीर ।
भाव सहित तिन नमत हूं, लहूं न पुनि भव पीर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उद्धरणाय नमः अर्घ्यं० ॥६०४॥

अग्निदेव या अग्नि दिश, ताके देव विशेष ।
ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अग्निदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥६०५॥

विषय-कषाय न रंच हैं, निरावरण निरमोह ।
इन्द्री मनको दमन कर, वन्दूं सुन्दर सोह ॥
ॐ ह्रीं अर्हं संयमाय नमः अर्घ्यं० ॥६०६॥

मोक्षरूप कल्याण कर, सुख-सागर के पार ।
महादेव स्वशक्ति धर, विद्या तिय भरतार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवाय नमः अर्घ्यं० ॥६०७॥

पुष्प भेंट धर जजत सुर, निज कर अंजलि जोड़ ।
कमलापति कर-कमल में, धरै लक्ष्मी होड़ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पांजलये नमः अर्घ्यं० ॥६०८॥

पूरण ज्ञानानंदमय, अजर अमर अमलान।
अविनाशी ध्रुव अखिलपद, अविकारी सब मान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥६०९॥
रोग शोक भय आदि बिन, राजत नित आनन्द।
खेद रहित रति-अरति बिन, विकसत पूरणचंद्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्साहजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६१०॥
जो गुण शक्ति अनंत है, ते सब ज्ञान मंझार।
एकनिष्ठ आकृति विविध, सोहत हैं अविकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥६११॥
परम पूज्य परधान हैं, परम शक्ति आधार।
परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥६१२॥
दोष अपोष अरोष हो, सम सन्तोष अलोष।
पंच परम पद धारियत, भविजन को परिपोष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं० ॥६१३॥
पंचकल्याणक युक्त हैं, समोसरण ले आदि।
इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुणगण अनुवाद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यशोधराय नमः अर्घ्यं० ॥६१४॥
कृष्ण नाम तीर्थेश हैं, भावी काल कहाय।
सुमति गोपियन संग रमत, निजलीला दर्शाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णाय नमः अर्घ्यं० ॥६१५॥
सम्यग्ज्ञान जु सुमतिधर, मिथ्या मोह निवार।
परहितकर उपदेश है, निश्चय वा व्यवहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानमतये नमः अर्घ्यं० ॥६१६॥
वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार।
सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमतये नमः अर्घ्यं० ॥६१७॥

मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम ।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत हैं अभिराम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भद्राय नमः अर्घ्यं० ॥६१८॥

शील स्वभाव सुजन्म लै, अन्त समय निरवाण ।
भविजन आनन्दकार है, सर्व कलुषता हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शांतिजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६१९।

धरम रूप अवतार हो, लोक पाप को भार ।
मृतक स्थल पहुंचाइयो, सुलभ कियो सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वृषभाय नमः अर्घ्यं० ॥६२०॥

अन्तर-बाहिर शत्रु को, निमिष परै नहिं जोर ।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, पूजूं द्वय कर जोर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अजिताय नमः अर्घ्यं० ॥६२१॥

तीन लोक आनन्द हो, श्रेष्ठ जन्म तम होत ।
स्वर्ग-मोक्ष दातार हो, पावत नहीं कुमौत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं संभवाय नमः अर्घ्यं० ॥६२२॥

परम सुखी तुम आप हो, पर आनन्द कराय ।
तुमको पूजत भावसों, मोक्ष लक्ष्मी पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अभिनन्दनाय नमः अर्घ्यं० ॥६२३॥

सब कुवादि एकांतको, नाश कियो छिन मांहि ।
भविजन मन संशयहरण, और लोक में नाहिं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुमतये नमः अर्घ्यं० ॥६२४॥

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार ।
तीन लोक में विस्तरी, सुयश नाम को धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभाय नमः अर्घ्यं० ॥६२५॥

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बन्ध निवार ।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुपार्श्वाय नमः अर्घ्यं० ॥६२६॥

तीन लोक आताप हर, मुनि-मन-मोदन चन्द ।
लोक प्रिय अवतार हो, पाऊं सुख तुम वन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घ्यं० ॥६२७॥

मन मोहन सोहन महा, धारें रूप अनूप ।
दरशत मन आनन्द हो, पायो निज रस कूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पदन्ताय नमः अर्घ्यं० ॥६२८॥

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश ।
मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शीतलनाथाय नमः र्घ्यं० ॥६२९॥

तीर्थङ्कर श्रेयांस हम, देहो श्री शुभ भाग ।
श्रीसु अनन्त चतुष्ट हो, हरो सकल दुरभाग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयांसनाथाय नमः र्घ्यं० ॥६३०॥

त्रस नाड़ी या लोक में, तुम ही पूज्य प्रधान ।
तुमको पूजत भावसों, पाऊं सुख निरवाण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं० ॥६३१॥

द्रव्य भाव मल रहित हैं, महामुनिन के नाथ ।
इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूं पदांबुज माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६३२॥

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश ।
थकित रहैं असमर्थ करि प्रणमें 'सन्त' हमेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतनाथाय नमः र्घ्यं० ॥६३३॥

अनागार आगारके, उद्धारक जिनराज ।
धर्मनाथ प्रणमूं सदा, पाऊं शिवसुख साज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६३४॥

शांतिरूप पर शांतिकर, कर्म दाह विनिवार ।
शांति हेतु वन्दूं सदा, पाऊं भवदधि पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शांतिनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६३५॥

क्षुद्र वीर्य सब जीव के, रक्षक हैं तीर्थेश ।
शरणागत प्रतिपालकर, ध्यावें सदा सुरेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६३६॥
पूजनीक सब जगतके, मंगलकारक देव ।
पूजत हैं हम भावसों, विनशै अघ स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अरनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६३७॥
मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक ।
लोकोत्तम जिनराज के, नमूं चरण दे धोक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६३८॥
पंच पापको त्यागकरि, भव्य जीव आनन्द ।
भये जासु उपदेशतें, पूजत हूं पद वृन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मुनिसुव्रताय नमः अर्घ्यं० ॥६३९॥
सुरनर मुनि नित नमन करि, ज्ञान धरम अवतार ।
तिनको पूजूं भावयुत, लहूं भवार्णव पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमिनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६४०॥
नेम धर्म में नित रमें, धर्मधुरा भगवान ।
धर्मचक्र जग में फिरे, पहुंचावे शिव थान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६४१॥
शरणागति निज पास दो, पाप फांस दुख नाश ।
तिसको छेदो मूलसों, देह मुक्त गति नास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६४२॥
वृद्ध भावतें उच्चपद, लोक शिखर आरूढ़ ।
केवल लक्ष्मी वर्द्धता, भई सु अन्तर गूढ़ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वर्द्धमानाय नमः अर्घ्यं० ॥६४३॥
अतुल वीर्य तन धरत है, अतुल वीर्य मन बीच ।
कामिन वश नहिं रंचभी, जैसे जल बिच मीच ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महावीराय नमः अर्घ्यं० ॥६४४॥

मोह सुभटकूं पटकियो, तीन लोक परशंस।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगत में, कियो कर्म विध्वंस ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुवीराय नमः अर्घ्यं० ॥६४५॥

मिथ्या-मोह निवार करि, महा सुमति भण्डार।
शुभ मारग दरशाइयो, शुभ अरु अशुभ विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सन्मतये नमः अर्घ्यं० ॥६४६॥

निज आश्रय निर्विघ्न नित, निज लक्ष्मी भण्डार।
चरणाम्बुज नित नमत हम, पुष्पांजलि शुभ धार ॥
ॐ ह्रीं ह्ं महापद्माय नमः अर्घ्यं० ॥६४७॥

हो देवाधीदेव तुम, नमत देव चउ भेव।
धरो अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव ॥
ॐ ह्रीं ह्ं सुरदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥६४८॥

निरावरण आभास है, ज्यों बिन पटल दिनेश।
लोकालोक प्रकाश करि, सुन्दर प्रभा जिनेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभाय नमः अर्घ्यं० ॥६४९॥

आतमीक जिन गुण लिए, दीप्ति सरूप अनूप।
स्वयं ज्योति परकाशमय, बन्दत हूं शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्यं० ।६५०॥

निजशक्ती निज करण हैं, साधन बाह्य अनेक।
मोहसुभट क्षयकरन को, आयुध राशि विवेक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वायुधाय नमः अर्घ्यं० ॥६५१॥

जय-जय सुरधुनि करत हैं, तथा विजय निधिदेव।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावै सुख स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जयदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥६५२॥

तुम सम प्रभा न औरमें, धरो ज्ञान परकाश।
नाथ प्रभा जग में भये, नमत मोहतम नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रभादेवाय नमः अर्घ्यं० ॥६५३॥

रक्षक हो षट्काय के, दया सिन्धु भगवान।
शशिसमजिय आह्लाद करि, पूजनीक धरि ध्यान॥
ॐ ह्रीं अर्हं उदंकाय नमः अर्घ्यं० ॥६५४॥

समाधान सबके करें, द्वादश सभा मंझार।
सर्व अर्थ परकाशकर, दिव्य ध्वनि सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रश्नकीर्तये नमः अर्घ्यं० ॥६५५॥

काहू विधि बाधा नहीं, कबहूं नहीं व्यय होय।
उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं जयाय नमः अर्घ्यं० ॥६५६॥

केवलज्ञान स्वभाव में, लोकत्रय इक भाग।
पूरणता को पाइयो, छांडि सकल अनुराग॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णबुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥६५७॥

पर आलिंगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार।
निज संतोष सुखी सदा, पर सम्बन्ध निवार॥
ॐ ह्रीं अर्हं निजानन्दसन्तुष्टजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६५८॥

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान।
विमल जिनेश्वर मैं नमूं, तीन लोक परधान॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलप्रभाय नमः अर्घ्यं० ॥६५९॥

स्वपद में नित रमत हैं, कभी न आरति होय।
अतुलवीर्य विधि जीतियो, नमूं जोर कर दोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाबलाय नमः अर्घ्यं० ॥६६०॥

द्रव्य भाव मल कर्म हैं, ताको नाश करान।
शुद्ध निरंजन हो रहे, ज्यों बादल बिन भान॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्मलाय नमः अर्घ्यं० ॥६६१॥

तुम चित्राम अरूप है, सुर नर साधु अगम्य।
निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य॥
ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगुप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥६६२॥

मग्न भये निज आत्म में, पर पद में नांहि वास ।
लक्ष अलक्ष विराजते, पूरो मन की आश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं समाधिगुप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥६६३॥

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नहीं चाह ।
स्वयं भाव परकाशियो, नमत मिटै भव दाह ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं० ॥६६४॥

मन मोहन सोहन महा, मुनि मन रमण अनन्द ।
महातेज परताप हैं, पूरण ज्योति अमन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कन्दर्पाय नमः अर्घ्यं० ॥६६५॥

विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान ।
तिनको पूजै सर्व जग, मैं पूजों धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विजयनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥६६६॥

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार ।
तिनके स्वामी हो प्रभू, राग द्वेष मल जार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं० ॥६६७॥

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरैं, सर्व अर्थ गुणधार ।
भविजन मन संशय हरन, शुद्ध बोध आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यवादाय नमः अर्घ्यं० ॥६६८॥

नहीं पार जा वीर्य को, स्वभाविक निरधार ।
सो सहजैं गुण धरत हो, नमूं लहूं भवपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं० ॥६६९॥

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानन्द धाम ।
चक्रपती हरिबल नमें, मैं पूजूं निष्काम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महापुरुषदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥६७०॥

शुभ विधि सब आचारण हैं, सर्व जीव हितकार ।
श्रेष्ठ बुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूं करो भवपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुविधये नमः अर्घ्यं० ॥६७१॥

हैं प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण।
सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तमको भान॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्ञापरिमाणाय नमः अर्घ्यं० ॥६७२॥

समय प्रमाण निमित तनो, कभी अन्त नहीं होय।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूं हूं सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अव्ययाय नमः अर्घ्यं० ॥६७३॥

प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्वमान परमान।
अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत नित कल्याण॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुराणपुरुषाय नमः अर्घ्यं० ॥६७४॥

धर्म सहायक हो प्रभू, धर्म मार्ग की लीक।
शुभ मर्यादा बन्ध प्रति, करण चलावन ठीक॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसारथये नमः अर्घ्यं० ॥६७५॥

शिवमारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार।
धर्म सुयश विस्तार कर, बतलायो शुभ सार॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवकीर्तिजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६७६॥

मोह अन्ध हन सूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ।
मोक्षमार्ग परकाश कर, नमूं जोर जुग हाथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मोहांधकारविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६७७॥

मन इन्द्री व्यापार बिन, भाव रूप विध्वंश।
ज्ञान अतीन्द्रिय धरत हो, नमत नशै अघवंश॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियज्ञानरूपजिनायनमः अर्घ्यं० ॥६७८॥

पर उपदेश परोक्ष बिन, साक्षात् परतक्ष।
जानत लोकालोक सब, धारैं ज्ञान अलक्ष॥
ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६७९॥

व्यापक हो तिहुं लोक में, ज्ञान ज्योति सब ठौर।
तुमको पूजत भावसों, पाऊं भवदधि ओर॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतये नमः अर्घ्यं० ॥६८०॥

इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय ।
तीन लोक नायक प्रभू, हम पर होउ सहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वनायकाय नमः अर्घ्यं० ॥६८१॥

तुम देवन के देव हो, महादेव है नाम ।
बिन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिगम्बराय नमः अर्घ्यं० ॥६८२॥

सर्व व्यापि कुमती कहैं, करो भिन्न विश्राम ।
जगसों तजी समीपता, राजत हो शिवधाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरन्तरजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६८३॥

हितकारी अति मिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर ।
प्रियवाणी कर पोखते, द्वादश सभासु तीर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मिष्टदिव्यध्वनिजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६८४॥

भवसागर के पार हो, सुखसागर गलतान ।
भव्य जीव पूजत चरन, पावें पद निरवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भवांतकाय नमः अर्घ्यं० ॥६८५॥

नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश ॥
दृढ़ परिणत निज आत्मरति, पूजूं श्री मुक्तेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़व्रताय नमः अर्घ्यं० ॥६८६॥

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वच द्वार ।
तिन सबको जानो सुविध, महा निपुण मति धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नयोत्तुंगाय नमः अर्घ्यं० ॥६८७॥

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आतम विभाव कराय ।
तिनको त्याग विशुद्ध पद, पायो पूजूं पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलंकाय नमः अर्घ्यं० ॥६८८॥

ज्यों शशि-किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश ।
कलाधार सोहैं सु इम, पूजत अघ-तम नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णकलाधराय नमः अर्घ्यं० ॥६८९॥

जन्म-मरण को आदि ले, जग में क्लेश महान ।
तिनके हंता हो प्रभू, भोगत सुख निर्वाण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वक्लेशहराय नमः अर्घ्यं० ॥६६०॥

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहीं होय ।
अव्याबाध विराजते, पर सहाय को खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ध्रौव्यरूपजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६१॥

व्यय उत्पाद सुभाव हैं, ताको गौण कराय ।
अचल अनन्त स्वभाव में, तीन लोक सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचलानन्तस्वभावात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६२॥

स्व ज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदय माहि विकसाय ।
सोहत हैं शुभ चिन्ह करि, भवि आनन्द कराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलांछनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६३॥

धर्म रीति परकट कियो, युग की आदि मंझार ।
भविजन पोषे सुख सहित, आदि धर्मअवतार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आदिब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥६६४॥

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होय चहुं ओर ।
चउ अनुयोग बखानते, सब दुख नासो मोर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखाय नमः अर्घ्यं० ॥६६५॥

जगत जीव कल्याण कर, धर्म मर्याद बखान ।
ब्रह्म ब्रह्म भगवान हो, महामुनी सब मान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥६६६॥

प्रजापति प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार ।
मन्मथ इन्द्री वश करन, वन्दूं सुख आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विधात्रे नमः अर्घ्यं० ॥६६७॥

तीन लोक की लक्षमी, तुम चरणाम्बुज वास ।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कमलासनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६८॥

बहुरि न जग में भ्रमण है, पंचम गति में वास ।
नित्य अमरता पाइयो, जरा-मृत्यु को नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मिने नमः अर्घ्यं० ॥६९९॥

पांच काय पुद्गलमई, तामें एक न होय ।
केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत हैं बुध लोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आत्मभुवे नमः अर्घ्यं० ॥७००॥

लोक शिखर सुखसों रहैं, ये ही प्रभुता जान ।
धारत हैं तिहु लोकमें, अधिक प्रभा परधान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरनिवासिने नमः अर्घ्यं० ॥७०१॥

अधिक प्रताप प्रकाश है, मोह तिमिर को नाश ।
शिवमग दिखलावत सही, सूरज सम प्रतिभास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुरज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥७०२॥

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग बतलाय ।
सत्यारथ ब्रह्मा कहैं, तुमरे बन्दूं पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रजापतये नमः अर्घ्यं० ॥७०३॥

गर्भ समय षड्मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय ।
रत्नवृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घ्यं० ॥७०४॥

तुम हि चार अनुयोग के, अंग कहैं मुनिराज ।
तुमसों पूरण श्रुत सही, नान्तर मंगल काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वेदांगाय नमः अर्घ्यं० ॥७०५॥

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशांग गणराज ।
पूरण ज्ञाता हो तुम्हीं, प्रणमूं मैं शिवकाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णवेदज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥७०६॥

पार भये भवसिंधु के, तथा सुवर्ण समान ।
उत्तम निर्मल द्युति धरें, नमत कर्ममल हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भवसिंधुपारंगाय नमः अर्घ्यं० ॥७०७॥

सुखाभास पर-निमित्ततें, पर-उपाधितें होत ।
स्वतः सुभाव धरो सही, सत्यानन्द उद्योत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानन्दाय नमः अर्घ्यं० ।७०८॥

मोहादिक परबल महा, सो इसको तुम जीत ।
औरन की गिनती कहां, तिष्ठो सदा अभीत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अजयाय नमः अर्घ्यं० ॥७०९॥

दिव्य रत्नमय ज्योति हो, अमित अकंप अडोल ।
मनवांछित फलदाय हो, राजत अक्षय अमोल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मनवांछितफलदायकाय नमः अर्घ्यं० ॥७१०॥

देह धार जीवन मुकत, परमातम भगवान ।
सूर्य समान सुदीप्त धर, महा ऋषीश्वर जान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जीवनमुक्तजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७११॥

स्व-भय आदिकसे परे, पर-भय आदि निवार ।
पर उपाधि बिन नित सुखी, बन्दूं भाव सम्हार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शतानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥७१२॥

ईश्वर हो तिहुं लोक के, परम पुरुष परधान ।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं० ।७१३॥

रत्नत्रय पुरुषार्थ करि, हो प्रसिद्ध जयवन्त ।
कर्मशत्रु को क्षय कियो, शीश नमें नित 'सन्त' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिविक्रमाय नमः अर्घ्यं० ॥७१४॥

सूरज हो शिवराह के, कर्म दलन बल सूर ।
संशय केतुनि ग्रहण सम, महा सहज सुखपूर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षमार्गप्रकाशकादित्यरूपजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७१५॥

सुभग अनन्त चतुष्टयद, सोई लक्ष्मी भोग ।
स्वामी हो शिवनारिके, नमूं जोरि तिहुं योग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपतये नमः अर्घ्य ० ॥७१६॥

इन्द्रादिक जत जिन्हें, पंचकल्याणक थाप ।
अद्भुत पराक्रमको धरैं, नमत नसैं भव पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ॥७१७॥

निज प्रदेश में बसत हैं, परमातम को वास ।
आप मोक्ष के नाथ हो, आप हि मोक्ष निवास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वैकुण्ठाधिपतये नमः अर्घ्यं० ॥७१८॥

सर्व लोक कल्याणकर, विष्णु नाम भगवान ।
श्री अरहन्त स्व लक्ष्मी, ताके भरता जान ।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वलोकश्रेयस्करजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७१९॥

मुनिमन कुमुदनि मोदकर, भव सन्ताप विनाश ।
पूरण चन्द्र त्रिलोक में, पूरण प्रभा प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं हृषीकेशाय नमः अर्घ्यं० ॥७२०॥

दिनकर सम परकाशकर, हो देवन के देव ।
ब्रह्मा विष्णु कहात हो, शशि सम दुति स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं हरये नमः अर्घ्यं० ॥७२१॥

स्वयं विभवके हो धनी, स्वयं ज्योति परकाश ।
स्वयं ज्ञान दृग वीर्य सुख, स्वयं सुभाव विलास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं० ॥७२२॥

धर्म-भारधर धारिणी, हो जिनेन्द्र भगवान ।
तुमको पूजों भावसों, पाऊं पद निर्वाण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वम्भराय नमः अर्घ्यं० ॥७२३॥

असुर काम अर हास्य इन, आदि कियो विध्वंश ।
महाश्रेष्ठ तुमको नमूं, रहै न अघ को अंश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं असुरध्वंसिने नमः अर्घ्यं० ॥७२४॥

सुधाधार हो अमरपद, धर्म फूल की बेल ।
शुभ मति गोपिन संग में, हमें राख निज गेल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं माधवाय नमः अर्घ्यं० ॥७२५॥

विषय कषाय स्ववश करी, बलि वश कियो जु काम।
महा बली परसिद्ध हो, तुम पद करूं प्रणाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं बलिबन्धनाय नमः अर्घ्यं० ॥७२६॥

तीन लोक भगवान हो, निजपर के हितकार।
सुरनर पशु पूजत सदा, भक्ति भाव उर धार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधोक्षजाय नमः अर्घ्यं० ॥७२७॥

हितमित मिष्ट प्रिय वचन, अमृत सम सुखदाय।
धर्म मोक्ष परगट करन, बन्दूं तिनके पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं हितमितप्रियवचनजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७२८॥

निज लीला में मगन हैं, सांचा कृष्ण सु नाम।
तीन खण्ड तिहुं लोक के, नाथ करूं परणाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं केशवाय नमः अर्घ्यं० ॥७२९॥

सूखे तृण सम जगत की, विभव जान करवास।
धरें सरलता जोग में, करें पाप को नाश॥
ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रवसे नमः अर्घ्यं० ॥७३०॥

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक।
सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जनचित रमणीक॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलांछनाय नमः अर्घ्यं० ॥७३१॥

सर्वोत्तम अति श्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति थुति योग।
धर्म मोक्षमारग कहैं, पूजत सज्जन लोग॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमतये नमः अर्घ्यं० ॥७३२॥

अविनाशी अविकार हैं, नहीं चिगें निज भाव।
स्वयं सु आश्रय रहत हैं, मैं पूजूं धर चाव॥
ॐ ह्रीं अर्हं अच्युताय नमः अर्घ्यं० ॥७३३॥

नाशी लौकिक कामना, निर-इच्छुक योगीश।
नार श्रृंगार न मन बसै, बन्दत हूं लोकीश॥
ॐ ह्रीं अर्हं नरकान्तकाय नमः अर्घ्यं० ॥७३४॥

व्यापक लोकालोक में, विष्णु रूप भगवान ।
धर्मरूप तरु लहिलहै, पूजत हूं धरि ध्यान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वसेनाय नमः अर्घ्यं० ।।७३५।।

धर्मचक्र सन्मुख चलै, मिथ्यामति रिपु घात ।
तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूं दिनरात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं चक्रपाणये नमः अर्घ्यं० ।।७३६।।

सुभग सुरूपी श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार ।
तीन लोक की लक्षमी, है एकत्र उधार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनाभाय नमः अर्घ्यं० ।।७३७।।

मुनिजन आदर जोग हो, लोक सराहन योग ।
सुर नर पशु आनन्दकर, सुभग निजातम भोग ।।
ॐ ह्रीं अर्हं जनार्दनाय नमः अर्घ्यं० ।।७३८।।

सब देवन के देव हो, महादेव विख्यात ।
ज्ञानामृत सुखसों खिरै, पीवत भवि सुख पात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकण्ठाय नमः अर्घ्यं० ।।७३९।।

पाप-पुञ्ज का नाश करि, धर्म रीत प्रगटाय ।
तीन लोक के अधिपती, हम पर दया कराय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपशंकराय नमः अर्घ्यं० ।।७४० ।

स्वयं व्यापि निज ज्ञान करि, स्वयं प्रकाश अनूप ।
स्वयं भाव परमातमा, बन्दूं स्वयं सरूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभवे नमः अर्घ्यं० ।।७४१।।

सब देवन के देव हो महादेव है नाम ।
स्व पर सुगन्धित रूप-हो, तुम पद करूं प्रणाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नमः अर्घ्यं० ।।७४२।।

धर्मध्वजा जग फरहरै, सब जग माने आन ।
सब जग शीश नमें चरण, सब जगको सुखदान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं वृषभकेतवे नमः अर्घ्यं० ।।७४३।।

जन्म-जरा-मृत जीतिकैं, निश्चल अव्य रूप ।
सुखसों राजत नित्य हो, बन्दूं हूं शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युञ्जयाय नमः अर्घ्यं० ॥७४४॥

सब इन्द्री-मन जीति के, करि दीनो तुम व्यर्थ ।
स्वयं ज्ञान इन्द्री जग्यो, नमूं सदा शिव अर्थ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥७४५॥

सुन्दररूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार ।
असाधारण शुभ अणु लगे, केवलज्ञान मंझार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कामदेवाय नमः अर्घ्यं० ॥७४६॥

सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप ।
धर्म मार्ग दरशात हैं, लोकत रूप अनूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोचनाय नमः अर्घ्यं० ॥७४७॥

निजानन्द स्व-लक्ष्मी, ताके हो भरतार ।
शिवकामिनि नित भोगते, परमरूप सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नमः अर्घ्यं० ॥७४८॥

जे अज्ञानी जीव हैं, तिन प्रति बोध करान ।
रक्षक हो षट्काय के, तुम सम कौन महान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पशुपतये नमः अर्घ्यं० ॥७४९॥

रमण भाव निज शक्ति सो, धरें तथा दुति काम ।
कामदेव तुम नाम है, महाशक्ति बल धाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शम्बरारये नमः अर्घ्यं० ॥७५०॥

कामदाह को दम कियो, ज्यों अगनी जलधार ।
निजआतम आचरण नित, महाशील श्रियसार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिपुरान्तकाय नमः अर्घ्यं० ॥७५१॥

निज सन्मति शुभ नारसों, मिले रले अरधांग ।
ईश्वर हो परमातमा, तुम्हें नमूं सर्वांग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धनारीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥७५२॥

नहीं चिगे उपयोग से, महा कठिन परिणाम।
महावीर्य धारक नमूं, तुमको आठों जाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं रुद्राय नमः अर्घ्यं० ॥७५३॥

गुण-पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश।
स्वयं काल स्व क्षेत्र हो, स्वयं सुभाव विशेष॥
ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं० ॥७५४॥

सूक्षम गुप्त स्वगुण धरें, महा शुद्धता धार।
चार ज्ञानधर नहीं रखें, मैं पूजूं सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं गर्भकल्याणकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७५५॥

शिव तिय संग सदा रमें, काल अनन्त न और।
अविनाशी अविकार हो, महादेव शिरमौर॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाशिवाय नमः अर्घ्यं० ॥७५६॥

जगत कार्य तुमसों सरें, सब तुमरे आधीन।
सबके तुम सरदार हो, आप धनी जगदीन॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्कर्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥७५७॥

महा घोर अंधियार है, मिथ्या मोह कहाय।
जग में शिवमग लुप्त था, ताको तुम दरशाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकारांतकाय नमः अर्घ्यं० ॥७५८॥

सन्तति पक्ष जुदी नहीं, नहीं आदि नाहिं अन्त।
सदा काल बिन काल तुम, राजत हो जयवन्त॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनादिनिधनाय नमः अर्घ्यं० ॥७५९॥

तीन लोक आराध्य हो, महा यज्ञ को ठाम।
तुमको पूजत पाइये, महा मोक्ष सुखधाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं हराय नमः अर्घ्यं० ॥७६०॥

महा सुभट गुणरास हो, सेवत हैं तिहुं लोक।
शरणागत प्रतिपालकर, चरणांबुज दूं धोक॥
ॐ ह्रीं अर्हं महासेनाय नमः अर्घ्यं० ॥७६१॥

गणधरादि सेवें चरण, महा गणपती नाम ।
पार करो भव-सिंधुतें, मंगलकर सुखधाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महागणपतिजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।७६२।।

चारसंघ के नाथ हो, तुम आज्ञा शिर धार ।
धर्म मार्ग प्रवर्त्त कर, बन्दूं पाप निवार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं गणनाथाय नमः अर्घ्यं० ।।७६३।।

मोह-सर्प के दमन को, गरुड़ समान कहाय ।
सबके आदरकार हो, तुम गणपति सुखदाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाविनायकाय नमः अर्घ्यं० ।।७६४।।

जे मोही अल्पज्ञ हैं, तिनसों हो प्रतिकूल ।
धर्माधर्म विरोध कर, धरूं शीश पग धूल ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विरोधविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।७६५।।

जितने दुख संसार में, तिनको वार न पार ।
इक तुम ही जानो सही, ताहि तजो दुखभार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विपद्विनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।७६६।।

सब विद्या के बीज हो, तुम वाणी परकाश ।
सकल अविद्या मूल तें, इक छिन में हो नाश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशात्मने नमः अर्घ्यं० ।।७६७।।

पर-निमित्त से जीव को, रागदिक परिणाम ।
तिनको त्याग सुभाव में, राजत हैं सुखधाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विभावरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।७६८।।

अन्तर-बाहिर प्रबल रिपु, जीत सके नहीं कोय ।
निर्भय अचल सुथिर रहैं, कोटि शिवालय सोय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं दुर्जयाय नमः अर्घ्यं० ।।७६९।।

घन सम गर्जत वचन हैं, भागे कुनय कुवादि ।
प्रबल प्रचण्ड सुवीर्य है, धरैं सुगुण इत्यादि ।।
ॐ ह्रीं अर्हं बृहद्भावाय नमः अर्घ्यं० ।।७७०।।

पाप सघन वन, दाह दव, महादेव शिव नाम ।
अतुल प्रभा धार महा, तुम पद करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चित्रभानवे नमः अर्घ्यं० ॥७७१॥

तुम अजन्म बिन मृत्यु हो, सदा रहो अविकार ।
ज्यों के त्यों मणि दीप सम, पूजत हूं मनधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अजरामरजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७७२॥

संस्कारादि स्वगुण सहित, तिन करि हो आराध्य ।
तुमको बन्दों भाव सों, मिटे सकल दुख व्याध्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं द्विजाराध्याध्याय नमः अर्घ्यं० ॥७७३॥

निज आतम निज ज्ञान है, तामें रुचि परतीत ।
पर पद सौं हैं अरुचिता, पाई अक्षय जीत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुधाशोचिषे नमः अर्घ्यं० ॥७७४॥

जन्म-मरण को आदि लं, सकल रोग को नाश ।
दिव्य औषधि तुम धरौ, अमर करन सुखरास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं औषधीशाय नमः अर्घ्यं० ॥७७५॥

पूरण गुण परकाश कर ज्यों शशि करण उद्योत ।
मिथ्यातप निरवारतें, वर्शित आनन्द होत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कमलानिधये नमः अर्घ्यं० ॥७७६॥

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय ।
चार संघ नायक प्रभू, बन्दूं तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्रनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥७७७॥

भव-तप-हर हो चन्द्रमा, शीतलकार कपूर ।
तुमको जो नर सेवते, पाप कर्म हो दूर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुभ्रांशवे नमः अर्घ्यं० ॥७७८॥

स्वर्गादिक की लक्षमी, तासों भी जु ग्लान ।
स्वै-पद में आनन्द है, तीन लोक भगवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सौम्यभावरताय नमः अर्घ्यं ॥७७९॥

पर-पदार्थ को इष्ट लखि, होत नहीं अभिमान।
हो अबन्ध इस कर्मतें, स्व-आनन्द निधान॥
ॐ ह्रीं अर्हं कुमुदबांधवाय नमः अर्घ्यं० ॥७८०॥

सब विभाव को त्याग करि, हैं स्वधर्म में लीन।
तातें प्रभुता पाइयो, हैं नहिं बन्धाधीन॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरतये नमः अर्घ्यं० ॥७८१।

आकुलता नहीं लेश है, नहीं रहै चित भंग।
सदा सुखी तिहुं लोक में, चरन नमूं सब अंग॥
ॐ ह्रीं अर्हं आकुलतारहितजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७८२॥

शुभ-परिणति प्रकटाय के, दियो स्वर्गको दान।
धर्म-ध्यान तुमसे चले, सुमरत हो शुभ ध्यान॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७८३॥

भविजन करत पवित्र अति, पाप मैल प्रक्षाल।
ईश्वर हो परमातमा, नमूं चरन निज भाल॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजिनेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥७८४॥

श्रावक या मुनिराज हो, धर्म आपसे होय।
धर्मराज शुभ नीति करि, उन्मार्ग न को खोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मराजाय नमः अर्घ्यं० ॥७८५॥

स्वयं स्व-आतम रस लहो, ताही कहिये भोग।
अन्य कुपरिणति त्यागयो, नमूं पदाम्बुज योग॥
ॐ ह्रीं अर्हं भोगराजायनमः अर्घ्यं० ॥७८६॥

दर्शन ज्ञान सुभाव धरि, ताही के हो स्वामि।
सब मलीनता त्यागियो, भये शुद्ध परिणामि॥
ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनज्ञानचारित्रात्मजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७८७॥

सत्य उचित शुभ न्याय में, है आनन्द विशेख।
सब कुनीति को नाशकर, सर्व जीव सुख देख॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥७८८॥

पर-पदार्थ के संग से, दुखित होत सब जीव।
ताके भयसों भय रहित, भोगें मोक्ष सदीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिकान्तजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७८६॥

जाको कभी न अन्त हो, सो पायो आनन्द।
अचलमरूप निज आत्मय, भाव अभावो द्वन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥७९०॥

शिवमारग परकट कियो, दोष रहित वरताय।
दिव्यध्वनि करि गर्ज सम, सर्व अर्थ दिखलाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वृहतांपतये नमः अर्घ्यं० ॥७९१॥

चौपाई

हितकारक अपूर्व उपदेश, तुम सम और नहीं देवेश।
सिद्धसमूह जजूं मनलाय, भव-भवमें सुखसंपतिदाय ॥टेक॥
ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वदेवोपदेष्ट्रे नमः अर्घ्यं० ॥७९२॥

कर्मविषैं संस्कार विधान, तीनलोकमें विस्तारजान ॥सिद्धसमूह०॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसमूहेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥७९३॥

धर्म उपदेश देते सुखकार, महाबुद्ध तुम हो अवतार ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥७९४॥

तीन लोकमेंहो शशिसूर, निजकिरणावलि करितमचूर ॥सिद्ध०
ॐ ह्रीं अर्हं तमोभेदने नमः अर्घ्यं० ॥७९५॥

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवादकी कर हो हान ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममार्गदर्शकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७९६॥

सर्व शास्त्रमिथ्या वा सांच, तुम निज दृष्टि लियो हैं जांच ॥सिद्ध०
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रनिर्णायिकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७९७॥

पंचमगति बिनश्रेष्ठ न और, सोतुम पायत्रिगजशिरमौर॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंमचगतिजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥७९८॥

श्रेष्ठ सुमित्त तुमही हो एक, शिवमारग को जानो टेक।
सिद्धसमूह जजूं मनलाय, भव-भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठसुमतिदात्रिजिताय नमः अर्घ्यं० ॥७६६॥
वृष मर्जाद भली विधि थाप, भविजन मेंटे सब संताप ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुगतये नमः अर्घ्यं० ॥८००॥
श्रेष्ठ करै कल्याण सु ज्ञान, सम्पूरण संकल्प निशान ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठकल्याणकारकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८०१॥
निज ऐश्वर्य धरो संपूर्ण,पर विभूति बिन हो अघ चूर्ण ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वरीयसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं० ॥८०२॥
श्रेष्ठ शुद्ध निजब्रह्म रमाय, मंगलमय पर मंगलदाय ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं परब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥८०३॥
श्री जिनराज कर्मरिपु जीति, पूजनीक हैं सबके मीत ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मारिजिताय नमः अर्घ्यं० ॥८०४॥
षट् पदार्थ नवतत्त्व कहाय, धर्म-अधर्म भलीविधि गाय ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रज्ञजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८०५॥
है शुभ लक्षण मय परिणाम, पर उपाधिको नहिं कछु काम ॥सिद्ध०
ॐ ह्रीं अर्हं सुलक्षणजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८०६॥
सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायो सोध ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वबोधसत्वाय नमः अर्घ्यं० ॥८०७॥
इष्टानिष्ट न राग न द्वेष, ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकल्पाय नमः अर्घ्यं० ॥८०८॥
दूजो तुम सम नहिं भगवान, धर्माधर्म रीति बतलान ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयबोधजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८०९॥
महादुखी संसारी जान, तिनके पालक हो भगवान ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नमः अर्घ्यं० ॥८१०॥
जगविभूति निरइच्छुक होय,मानरहित आतमरत सोय ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरसरतजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८११॥

ज्यों शशि तापहरै अनिवार, अतिशय सहित शांति करतार ॥सिद्ध॥
ॐ ह्रीं अर्हं शांतिदात्रे नमः अर्घ्यं० ॥८१२॥

हो निरभेव अछेव अशेष, सब इकसार स्वयं परदेश ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं अभेद्याछेद्य—जिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८१३॥

मायाकृत सम पांचों काय, निजसों भिन्न लखो मत भाय ॥सिद्ध०
ॐ ह्रीं अर्हं पंचस्कंधमयात्मदृशे नमः अर्घ्यं० ॥८१४॥

बीती बात देख संसार, भव-तन-भोग विरक्त उदार ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थभावनासिद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥८१५॥

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायो लीक ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुराननजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८१६॥

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवक्त्रे नमः अर्घ्यं० ॥८१७॥

मन-वच-काय योग परिहार, कर्मवर्गणा नाहिं लगार ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं निराश्रवाय नमः अर्घ्यं० ॥८१८॥

चार अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखिकशासनाय नमः अर्घ्यं० ॥८१९॥

काहू पबसों मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं अन्वयाय नमः अर्घ्यं० ॥८२०॥

हो समाधिमें नित लवलीन, बिन आश्रय नित ही स्वाधीन॥सिद्ध०
ॐ ह्रीं अर्हं समाधि—निमग्नजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८२१॥

लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेष स्वरूप ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकभालतिलकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८२२॥

अक्षाधीन हीन हैं शक्त, तिसको नाश करी निज व्यक्त ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं तुच्छभावभिदे नमः अर्घ्यं० ॥८२३॥

जीवादिक षट् द्रव्य सुजान, तिनको भलीभांति है ज्ञान ॥सिद्ध०॥
ॐ ह्रीं अर्हं षड्द्रव्यदृशे नमः अर्घ्यं० ॥८२४॥

विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव-भवमें सुख-संपतिदाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सकलवस्तुविज्ञात्रे नमः अर्घ्यं० ।।८२५।।

सब पदार्थ दर्शन तुम बैन, संशयहरण करण सुख चैन ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं षोडशपदार्थवादिने नमः र्घ्यं० ।।८२६।।

वर्णन करि पंचासतिकाय, भव्य जीव संशय विनशाय ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचास्तिकायबोधकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८२७।।

प्रतिबिंबित हो आरसि मांहि, ज्ञानाध्यक्ष जान हो ताहि ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाध्यक्षजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८२८।।

जामें ज्ञान जीव को एक, सो परकाशो शुद्ध विवेक ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवायसार्थकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८२९।।

भक्तिके हो साध्य सु कर्म, अन्तिम पौरुष साधन धर्म ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं भक्तैकसाधनधर्माय नमः अर्घ्यं० ।।८३०।।

बाकी रहो न गुण शुभ एक, ताको स्वाद न हो प्रत्येक ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरवशेषगुणामृताय नमः अर्घ्यं० ।।८३१।।

नय सुपक्ष करि सांख्य कुवाद, तुम निरवाद पक्षकर वाद ।।सिद्ध०

ॐ ह्रीं अर्हं सांख्यादिपक्षविध्वंसकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८३२।।

सम्यग्दर्शन है तुम बैन, वस्तु परीक्षा भाखों ऐन ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं समीक्षकाय नमः अर्घ्यं० ।।८३३।।

धर्मशास्त्र के हो कर्तार, आदि पुरुष धारो अवतार ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं आदिपुरुषजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८३४।।

नय साधत नैयायक नाम, सो तुम पक्ष धरो अभिराम ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचविंशतितत्त्ववेदकाय नमः अर्घ्यं० ।।८३५।।

स्वपर चतुष्क वस्तु को भेद, व्यक्ताव्यक्त करो निरखेद ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्ताव्यक्तज्ञानविदे नमः अर्घ्यं० ।।८३६।।

दर्शन ज्ञान भेद उपयोग, चेतनामय है शुभ योग ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानचैतन्यभेददृशे नमः अर्घ्यं० ।।८३७।।

स्वसंवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वसंवेदनज्ञानवादिने नमः अर्घ्यं० ।।८३८।।
द्वादश सभा करै सतकार, आदर योग बैन सुखकार ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं समवसरण—द्वादशसभापतये नमः अर्घ्यं० ।।८३९।।
आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहचान ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिप्रमाणाय नमः अर्घ्यं० ।।८४०।।
विशद शुद्ध मति हो साकार,तुमको जानत हैं सु बिचार ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं अध्यक्षप्रमाणाय नमः अर्घ्यं० ।।८४१।।
नयसापेक्षक हैं शुभ बैन, हैं अशंस सत्यारथ ऐन ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादवादिने नमः अर्घ्यं० ।।८४२।।
लोकालोक क्षेत्रके माँहि, आप ज्ञान है सब दरशाँहि ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं क्षेत्रज्ञाय नमः अर्घ्यं० ।।८४३।।
अन्तर-बाह्य लेश नहीं और, केवल आतम मई अघोर ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८४४।।
अन्तिम पौरुष साध्यो सार, पुरुष नाम पायो सुखकार ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषात्मजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८४५।।
चहुंगतिमें नरदेह मझार, मोक्ष होत तुम नर आकार ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं नराधिपाय नमः अर्घ्यं० ।।८४६।।
दर्श ज्ञान चेतन की लार, निरावर्ण तुम हो अविकार ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणचेतनाय नमः अर्घ्यं० ।।८४७।।
भावन वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नाँहि सन्देह ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षरूपजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।८४८।।
सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजो शुभ नीक ।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमजिनाय नमः र्घ्यं० ।।८४९।।

दोहा

जाकरि तुमको जानिये, सो है अगम अलक्ष ।
निर्गुण यातैं कहत हैं, भव-भयतैं हम रक्ष ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्गुणाय नमः अर्घ्यं० ।।८५०।।

चेतनमय हैं अष्टगुण, सो तुम में इक नाम ॥
शुद्ध अमूरत देव हो, स्व-प्रदेश चिदराम ।
ॐ ह्रीं अर्हं अमूर्ताय नमः अर्घ्यं० ॥८५१॥

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत सू भरतार ।
निजानन्द को आदि ले, महा तुष्ट निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नमः अर्घ्यं० ॥८५२॥

व्यापक लोकालोक में, ज्ञान-ज्योति के द्वार ।
लोकशिखर तिष्ठत अचल, करो भवत उद्धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वगताय नमः अर्घ्यं० ॥८५३॥

योग प्रबन्ध निवारियो, राग द्वेष निरवार ।
देहरहित निष्कम्प हो, भये अक्रिया सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्रियाय नमः अर्घ्यं० ॥८५४॥

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहां रहो स्वयमेव ।
देव वास है मोक्ष थल, हो देवन के देव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवेष्टजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८५५॥

भवसागर के तीर हो, अचलरूप अस्थान ।
फिर नहीं जगमें जन्म है, अचलरूप सुखथान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तटस्थाय नमः अर्घ्यं० ॥८५६॥

ज्यों के त्यों नित थिर रहो, अचलरूप अविनाश ।
निजपदमय राजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कूटस्थाय नमः अर्घ्यं० ॥८५७॥

तत्त्व-अतत्त्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास ।
ज्ञानमूर्ति हो ज्ञानघन, ज्ञान ज्योति अविनाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञात्रे नमः अर्घ्यं० ॥८५८॥

पर-निमित्त के योगतैं, व्यापै नहीं विकार ।
निज स्वरूप में थिर सदा, हो अबाध निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं० ॥८५९॥

चारवाक वा सांख्यमत, झूठी पक्ष धरात।
अल्प मोक्ष नहीं होत है, राजत हो विख्यात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निराभावाय नमः अर्घ्यं० ॥८६०॥

तारण तरण जिहाज हो, अतुल शक्तिके नाथ।
भव वारिधि से पारकर, राखो अपने साथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भववारिधिपारकाय नमः अर्घ्यं० ॥८६१॥

बन्ध-मोक्ष की कहन है, सो भी है व्यवहार।
तुम विवहार अतीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं बन्धमोक्षरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥८६२॥

चारों पुरुषारथ विषैं, मोक्ष पदारथ सार।
तुम साधो परधान हो, सब में सुख आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षसाधनप्रधानजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६३॥

कर्म-मैल प्रक्षाल कैं, निज आतम लवलाय।
हो प्रसन्न शिवथल विषैं, अन्तरमल विनशाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मव्याधिविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६४॥

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभाव में लीन।
बन्दूं शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निजस्वभावस्थितजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६५॥

निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यों सूर।
तुमको पूजत भावसों, मोह कर्म को चूर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणसूर्यजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६६॥

निज भावनतें मोक्ष हो, ते ही भाव रहात।
स्वगुण स्वपरजाय में, थिरता भाव धरात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वरूपरूढजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६७॥

सब कुभाव को जीतियो, शुद्ध भये निरमूल।
शुद्धातम कहलात हो, नमत नशे अघ शूल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृतिप्रियाय नमः अर्घ्यं० ॥८६८॥

निज सन्मति के सन्मती, निज बुध के बुधवान।
शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हो, पूजत मिथ्या हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्धसन्मतिजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६९॥

कर्म प्रकृति को अंश बिन, उत्तर हो या मूल।
शुद्धरूप अति तेज घन, ज्यों रवि बिम्ब अधूल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धरूपजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८७०॥

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार।
आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आद्यवेदसे नमः अर्घ्यं० ॥८७१॥

नहिं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप।
रोग शोक व्यापै नहीं, निवसैं सदा अनूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकृतये नमः अर्घ्यं० ॥८७२॥

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरी तिमिर मिथ्यात।
तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यातिमिरविनाशकाय नमः अर्घ्यं० ॥८७३॥

वस्तु परीक्षा तुम बिना, और झूठ कर खेद।
अन्ध कूप में आप सर, डारत हैं निरभेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मीमांसकाय नमः अर्घ्यं० ॥८७४॥

होनहार या हो लई, या पइये इस काल।
अस्तिरूप सब वस्तु हैं, तुम जानो यह हाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिसर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं०। ८७५॥

जिनवाणी जिनसरस्वती, तुम गुणसों परिपूर।
पूज्य योग तुमको कहैं, करैं मोह मद चूर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपूज्याय नमः अर्घ्यं० ॥८७६॥

स्वयं स्वरूप आनन्द हो, निजपद रमन सुभाव।
सदा विकासित ही रहैं, बन्दूं सहज सुभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदोत्सवाय नमः अर्घ्यं० ॥८७७॥

मन इन्द्री जानत नहीं, जाको शुद्ध स्वरूप ।
वचनातीत स्वगुणसहित, अमल अकाय अरूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परोक्षज्ञानागम्याय नमः अर्घ्यं० ॥८७८॥

जो श्रुतज्ञान कला धरें, तिनको हो तुम इष्ट ।
तुमको नित प्रति ध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इष्टपाठकाय नमः अर्घ्यं० ॥८७९॥

निज समरथ कर साधियो, निज पुरषारथ सार ।
सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धकर्मक्षयाय नमः अर्घ्यं० ॥८८०॥

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद ।
गुण अनन्त पर्याय सब, सो विभाग परिछेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यामतनिवारकाय नमः अर्घ्यं० ॥८८१॥

निज संवेदन ज्ञान में, देखत होय प्रत्यक्ष ।
रक्षक हो तिहुं लोक के, हम शरणागत पक्ष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नमः अर्घ्यं० ॥८८२॥

विद्यमान शिवलोक में, स्वगुण पर्य समेत ।
कहैं अभाव कुमती मती, निजपर धोका देत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिमुक्ताय नमः अर्घ्यं० ॥८८३॥

तुम आगम के मूल हो, अपर गुरू है नाम ।
तुम वानी अनुराग ही, भये शास्त्र अभिराम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गुरुश्रुतये नमः अर्घ्यं० ॥८८४॥

तीन लोक के नाथ हो, ज्यों सुरगण में इन्द्र ।
निजपद रमन स्वभाव धर, नमें तुम्हें देवेन्द्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घ्यं० ॥८८५॥

सब स्वभाव अविरुद्ध हैं, निजपर घातक नाहिं ।
सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्वभावाविरुद्धजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८८६॥

ब्रह्म ज्ञान को वेद कर, भये शुद्ध अविकार।
पूरण ज्ञानी हो नमूं, लहो वेद को सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नमः अर्घ्यं० ॥८८७॥

शब्द ब्रह्म के ज्ञानतें, आतम तत्त्व विचार।
शुक्लध्यान में लय भए, हो अतर्क अविचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शब्दाद्वैतब्रह्मणे नमः अर्घ्यं० ॥८८८॥

सूक्ष्म तत्त्व परकाशकर, सूक्षम कर्म अच्छेद।
मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मतत्त्वप्रकाशजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८८९॥

तीन शतक त्रेसठ जु हैं, सब मानै पाखण्ड।
धर्म यथारथ तुम कहो, तिन सबको करि खण्ड ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पाखण्डखण्डकाय नमः अर्घ्यं० ॥८९०॥

कर्णरूप करतार हो, कोइक नयके द्वार।
सुरमुनि करि पूजत भए, माननीक सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नयाधीनजे नमः अर्घ्यं० ॥८९१॥

केवलज्ञान उपाइकें, तदनन्तर हो मोक्ष।
साक्षात् बड़भाग मैं, पूजूं इहां परोक्ष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अन्तकृते नमः अर्घ्यं० ॥८९२॥

शरणागतको पार कर, देत मोक्ष अभिराम।
तारण-तरण सु नाम है, तुम पद करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पारकृते नमः अर्घ्यं० ॥८९३॥

भव-समुद्र गम्भीर है, कठिन जासको पार।
निज पुरुषारथ करि तिरे, गहो किनारो सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीरप्राप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥८९४॥

एक बार जो शरण गहि, ताके हो हितकार।
यातें सब जग जीव के, हो आनन्द दातार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परहितस्थिताय नमः अर्घ्यं० ॥८९५॥

रत्नत्रय निज नेत्र सों, मोक्षपुरी पहुंचात।
महादेव हो जगत पितु, तीन लोक विख्यात॥
ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रयनेत्रजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६६॥

तीन लोक के नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार।
सरल भाव, बिन कपट हो, शुद्ध-बुद्ध अविकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६७॥

निश्चै वा व्यवहार के, हो तुम जाननहार।
वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूं निरधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानकर्मसमुच्चयिने नमः अर्घ्यं० ॥८६८॥

सुर-नर-पशु न अघावते, सभी ध्यावते ध्यान।
तुमको नितही ध्यावते, पावें सुख निर्वाण॥
ॐ ह्रीं अर्हं नित्यतृप्तजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥८६९॥

कर्म-मैल प्रक्षाल करि, तीनों योग सम्हार।
पाप-शैल चकचूर कर, भये अयोग सुखार॥
ॐ ह्रीं अर्हं पापमलनिवारकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९००॥

सूरज हो निज ज्ञानघन, ग्रहण उपद्रव नाहिं।
बेखटके शिवपंथ सब, दीखत है जिस माहिं॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानघनजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९०१॥

जोग योग संकल्प सब, हरो देह को साथ।
रहो अकंपित थिर सदा, मैं नाऊं निज माथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्नयोगाय नमः अर्घ्यं० ॥९०२॥

जोग सुथिरता को हरैं, करैं आगमन कर्म।
तुम तासों निर्लेप हो, नशो मोह पद शर्म॥
ॐ ह्रीं अर्हं योगकृतनिर्लेपाय नमः अर्घ्यं० ॥९०३॥

निज आतममें स्वस्थ हैं, स्वपद योग रमाय।
निर्भय तुम निर-इच्छु हो, नमूं जोर कर पांय॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्थलयोगरतजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९०४॥

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिम सूर ।
योग किरण विकसात हो, शोक तिमिर कर दूर ।।
ॐ ह्रीं अर्हं गिरिसयोगजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।६०५।।

सूक्षम निज परदेश तन, सूक्ष्म क्रिया परिणाम ।
चितवत मन नहिं वच चलै, राजत हो शिवधाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मीकृतवपुःक्रियाय नमः अर्घ्यं० ।।६०६।।

सूक्ष्म तत्त्व परकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार ।
भविजन को आनन्दकरि, तीन जगत गुरुसार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मवाक्मितयोगाय नमः अर्घ्यं० ।।६०७।

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया रहात ।
स्वप्रदेश मय थिर सदा, कृत्याकृत्य सुख पात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निष्कर्मशुद्धात्मजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।६०८।।

विद्यमान प्रत्यक्ष है, चेतनराय प्रकाश ।
कर्म-कालिमासों रहित, पूजत हो अघ नाश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं भूताभिव्यक्तचेतनाय नमः अर्घ्यं० ।।६०९।।

गृहस्थाचरण सुभेद करि, धर्मरूप रसराश ।
एक तुम्हीं हो धर्म करि, पायो शिवपुर वास ।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरासजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।६१०।।

सूर्य प्रकाशन मोह तम, हरता हो शुभ पन्थ ।
पाप क्रिया बिन राजते, महायती निरग्रन्थ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्यं० ।।६११।।

बन्ध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हो निर्लेप ।
शुद्ध सुवर्ण दिपै सदा, नहीं मोह मल लेप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमसंवराय नमः अर्घ्यं० ।।६१२।।

मेघ पटल बिन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप ।
निरावरण तुम शुद्ध हो, पूजत मिटि है पाप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं० ।।६१३।।

कर्म अंश सब झर गिरे, रह्यो न एक लगार ।
परम शुद्धता धारकें, तिष्ठो हो अविकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमनिर्जराय नमः अर्घ्यं० ॥६१४॥
तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप ।
अन्य कुदेव कुआगिया, जुग जुग धरत कलाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलितप्रभावाय नमः अर्घ्यं० ॥६१५॥
भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन ।
तिनको जीते छिनक में, भये सुखी स्वाधीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं समस्तकर्मक्षयजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६१६॥
कर्म प्रकृतिक रोग सम, जानो हो क्षयकार ।
निजस्वरूप आनन्द में, कह्यो विगार निहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं० ॥६१७॥
हीन शक्ति परमाद को, आप कियो हैं अन्त ।
निज पुरुषार्थ सुवीर्य यों, सुखी भए सु अनन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६१८॥
एकरूप रस स्वाद में, निर आकुलित रहाय ।
विविधरूप रस पर निमित, ताको त्याग कराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं एकाकाररसास्वादाय नमः अर्घ्यं० ॥६१९॥
इन्द्री मन के सब विषय, त्याग दिये इक लार ।
निजानन्दमें मगन हैं, छांडो जग व्यापार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वाकाररताकुलिताय नमः अर्घ्यं० ॥६२०॥
पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणनि आधार ।
सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्यु को टार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाजीविताय नमः अर्घ्यं० ॥६२१॥
निजरस के सागर धनी, महा प्रिय स्वाविष्ट ।
अमर रूप राजें सदा, सुर मुनि के हो इष्ट ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घ्यं० ॥६२२॥

पूरण निज आनन्द में, सदा जागते आप।
नहिं प्रमाद में लिप्त हैं, पूजत विनसे पाप॥
ॐ ह्रीं अर्हं जाग्रते नमः अर्घ्यं० ॥६२३॥

क्षीण ज्ञान नानावरण, करै जीवको नित्य।
सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुवित्य॥
ॐ ह्रीं अर्हं असुप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥६२४॥

स्व-प्रमाण में थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य।
निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वप्रमाणस्थिताय नमः अर्घ्यं० ॥६२५॥

श्रमकरि नहिं आकुलित हो, सदा रहो निरखेद।
स्वस्थरूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद॥
ॐ ह्रीं अर्हं निराकुलितजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६२६॥

मन वच तन व्यापार था, तावत रहो शरीर।
ताको नाश अकम्प हो, वन्दूं मन धर धीर॥
ॐ ह्रीं अर्हं अयोगिने नमः अर्घ्यं० ॥६२७॥

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममें हैं एकत्र।
तुमको बन्दूं भाव सों, हरो पाप सर्वत्र॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुरशीतिलक्षणाय नमः अर्घ्यं० ॥६२८॥

तुम लक्षण सूक्षम महा, इन्द्रिय विषय अतीत।
वचन अगोचर गुण धरो, निर्गुण कहत सुनीत॥
ॐ ह्रीं अर्हं अगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥६२९॥

अगुरुलघू पर्याय के, भेद अनन्तानन्त।
गुण अनन्त परिणामकरि, नित्य नमें तुम 'सन्त'॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तपर्याय नमः अर्घ्यं० ॥६३०॥

राग द्वेष के नाशतें, नहीं पूर्व संस्कार।
निज सुभाव में थिर रहैं, अन्य वासना टार॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वसंस्कारनाशकाय नमः अर्घ्यं० ॥६३१॥

गुण चतुष्ट में वृद्धता, भई अनन्तानन्त।
तुम सम और न जगत में, सदा रहो जयवन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तचतुष्टवृद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥९३२॥

आर्ष कथित उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त।
सो सब नाम कहो तुम्हीं, शिवमारग के सन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रियवचनाय नमः अर्घ्यं० ॥९३३॥

महाबुद्धि के धाम हो, सूक्षम शुद्ध अवाच्य।
चार ज्ञान नहिं गम्य हो, वस्तुरूप सो सांच्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरवचनीयाय नमः अर्घ्यं० ॥९३४॥

सूक्षम तें सूक्षम विषें, तुमको है परवेश।
आपै सूक्षम रूप हो, राजत निज परदेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनीशाय नमः अर्घ्यं० ॥९३५॥

कर्म प्रबन्ध सुवन पटल, ताको छांय निवार।
रविघन ज्योति प्रकट भई, पूरणता विधि धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनगणपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ॥९३६॥

निज प्रदेश में थिर सदा, योग निमित्त निवार।
अचल शिवालय के विषें, तिष्ठें सिद्ध अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्थेयसे नमः अर्घ्यं० ॥९३७॥

सन्त नमन प्रिय हो अति, सज्जन वल्लभ जान।
मुनि जन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥९३८॥

काल अनन्तानन्त लौं, करें शिवालय वास।
अव्यय अविनाशी सुथिर स्वयं ज्योति परकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्थिरजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९३९॥

स्व-आतम में वास है, वसत नहीं संसार।
ज्यों के त्यों निश्चल सदा, बन्दत भवदधि पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निजात्मतरनिष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥९४०॥

सुभग सराहन योग्य हैं, उत्तम भाव धराय।
तीन लोक में सार है, मुनिजन वन्दित पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठभवधारकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६४१॥

सब के अग्रेसर भये, सब के हो सिरताज।
तुमसे बड़ा न और है, सबके कर हो काज॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥६४२॥

स्व-प्रदेश निष्कम्प हैं, द्रव्य-भाव विधि नाश।
इष्टानिष्ट निमित धरें, निज आनन्द विलास॥
ॐ ह्रीं अर्हं निष्कम्पप्रदेशजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६४३॥

उचित क्षमादिक अर्थ सब, सत्य सुन्याय सुलब्ध।
तिन सबके स्वामी नमूं, पूरण सुखी सुअब्ध॥
ॐ ह्रीं अर्हं उत्तमक्षमादिगुणाब्धिजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६४४॥

महा कठिन दुःशक्य है, यह संसार निकास।
तुम पायो पुरुषार्थ करि, लहो स्वलब्धि अवास॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यपादजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६४५॥

परमारथ निज गुण कहें, मोक्ष प्राप्ति में होय।
स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनको खोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगुणनिधानाय नमः अर्घ्यं० ॥६४६॥

पर-निमित्त या भेद करि, या उपचरित कहाय।
सो तुम में सब लय भये, मानों सुप्त कराय॥
ॐ ह्रीं अर्हं व्यवहारसुप्ताय नमः घ्यं० ॥६४७॥

स्व-पद में नित रमत हैं, अप्रमाद अधिकाय।
निज गुण सदा प्रकाश है, अतुल बली नमूं पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतिजागरूकाय नमः अर्घ्यं० ॥६४८॥

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे परकी साथ।
निर्भय सदा सुखी भये, बन्दूं नमि निजमाथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतिसुस्थिताय नमः अर्घ्यं० ॥६४९॥

कहे हुवे हो नेमसें, परमाराध्य अनादि ।
तुम महातमा जगत के, और कुदेव कुवादि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उदितोदितमाहात्म्याय नमः अर्घ्यं० ॥६५०॥
तत्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार ।
तिसके तुम अध्याय हो, अर्थ प्रकाशन हार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञानानुकूलजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६५१॥
ना काहू सों जन्म हो, ना काहू सों नाश ।
स्वयंसिद्ध बिन पर-निमित्त, स्व-स्वरूप परकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमाय नमः अर्घ्यं० ॥६५२॥
अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश ।
तेजरूप उत्सव मई, पाप तिमिर को नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमेयमहिम्ने नमः अर्घ्यं० ॥६५३॥
रागादिक मल को हरें, तनक नहीं आवास ।
महा विशुद्ध अत्यन्त हैं, हरो पाप-अहि-डांस ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तशुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥६५४॥
स्वयंसिद्ध भरतार हो, शिवकामनि के संग ।
रमण भाव निज योग में, मानों अति आनन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिस्वयंवराय नमः अर्घ्यं ॥६५५॥
विविध प्रकार न धरत हैं, हैं अजन्म अव्यक्त ।
सूक्षम सिद्ध समान हैं, स्वयं स्वभाव सव्यक्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धानुजाय नमः अर्घ्यं० ॥६५६॥
मोक्षरूप शुभ वास के, आप मार्ग निरखेद ।
भविजन सुलभ गमन करें, जगत वास को छेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवपुरोपन्थाय नमः अर्घ्यं० ॥६५७॥
गुण समूह अत्यन्त हैं, कोई न पावै पार ।
थकित रहे श्रुतकेवली, निज बल कथन अगार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणसमूहजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६५८॥

इक अवगाह प्रदेश में, हो अवगाह अनन्त।
पर उपाधि निग्रह कियो, मुख्य प्रधान अनन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पर-उपाधिनिग्रहकारकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६५६॥

स्वयंसिद्ध निज वस्तु हो, आगम इन्द्रिय ज्ञान।
कर्त्तादिक लक्षण नहीं, स्वयं स्वभाव प्रमान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंसिद्धजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६०॥

हो प्रछन्न इन्द्रिय अगम, प्रकट न जाने कोय।
सकल अगुण को लय कियो, निज आतम में खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रियागम्यजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६१॥

निज गुण करि निज पोषियो, सकल क्षुद्रता त्याग।
पूरण निज पद पाय करि, तिष्ठत हो बड़भाग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्टाय नमः अर्घ्यं० ॥६६२॥

ब्रह्मचर्य पूरण धरें, निजपद रमता धार।
सहस अठारह भेद करि, शील सुभाव सु सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादशसहस्रशीलेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥६६३॥

महा पुन्य शिवपद कमल, ताके दल विकसान।
मुनि मन भ्रमर रमण सुथल, गंधानन्द महान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यसंकुलाय नमः अर्घ्यं० ॥६६४॥

मति श्रुत अवधि त्रिज्ञान युत, स्वयंबुद्ध भगवान।
कृतयुग में मुनि व्रत धरो, शिव साधक परधान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं व्रताग्रयुग्याय नमः अर्घ्यं० ॥६६५॥

परम शुक्ल शुभ ध्यान में, तुम सेवन हितकार।
'सन्त' उपासक आपके, कर्म-बन्ध छुटकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमशुक्लध्यानिने नमः अर्घ्यं० ॥६६६॥

क्षारवार इस जलधि को, शीघ्र कियो तुम अन्त।
गोखुरकार उलंघियो, धरो स्व भुज बलवन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं संसारसमुद्रतारकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥६६७॥

एक समय में गमन कर, कियो शिवालय वास।
काल अनन्त अचल रहो, मेटो जग भ्रम त्रास॥
ॐ ह्रीं अर्हं क्षेपिष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥९६८॥

पंचाक्षर लघु जाप में, जितना लागे काल।
अन्तिम पाया शुक्ल का, ध्याय बसे जग भाल॥
ॐ ह्रीं हूं पञ्चलघ्वक्षरस्थितये नमः अर्घ्यं० । ९६९॥

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं, जब तक मोक्ष न होय।
सर्वं प्रकृति थिति मेटकें, पहुंचे शिवपुर सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशप्रकृतिस्थितिविनाशकाय नमः र्घ्यं० ॥९७०॥

तेरह विधि चारित्र के, तुम हो पूरण शूर।
निज पुरुषारथ करि लियो, शिवपुर आनन्द पूर॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशचारित्रपूर्णताय नमः अर्घ्यं० ॥९७१॥

निज सुख में अन्तर नहीं, परसों हानि न होय।
स्वस्थरूप परदेश जिन, तिन पूजत हूं सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्यजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९७२॥

निज पूजनतें देत हो, शिव सम्पति अधिकाय।
यातें पूजन योग्य हो, पूजूं मन-वच-काय॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवदात्रीजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९७३॥

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमको जीत।
नमूं तुम्हें जयवन्त हो, धार सु उर में प्रीत॥
ॐ ह्रीं अर्हं अजयजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९७४॥

यग विधान में जजत हो, आप मिले निधि रूप।
तुम समान नहीं और धन, हरत दरिद दुखकूप॥
ॐ ह्रीं अर्हं याज्याय नमः अर्घ्यं० ॥९७५॥

लोकोत्तर सम्पद विभव, है सरवस्व अधाय।
तुमसे अधिक न और है, सुख विभूति शिवराय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यपरिग्रहाय नमः अर्घ्यं० ॥९७६॥

तुमरो आह्वानन यजन, प्रासुक विधि से योग।
त्रिजग अमोलिक निधि सही, देत पर्म सुखभोग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यहेतवे नमः अर्घ्यं० ॥९७७॥

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज।
भव-तन-भोग विरक्तता, निर्ममत्व सुख साज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परतनिष्पृहाय नमः अर्घ्यं० ॥९७८॥

परदुख में दुख हो हो जहां, मोह प्रकृति के द्वार।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तनिर्मोहाय नमः अर्घ्यं० ॥९७९॥

स्वयंबुद्ध भगवान हो, सुर मुनि पूजन योग।
बिन शिक्षा शिवमार्ग को, साधो हो धरि योग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्याय नमः अर्घ्यं० ॥९८०॥

तुम एकत्व अन्यत्व हो, परसों नहीं सम्बन्ध।
स्वयंसिद्ध अविरुद्ध हो, नाशो जगत प्रबन्ध ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परसम्बन्धविनाशकाय नमः अर्घ्यं० ॥९८१॥

काहू को नहिं यजन करि, गुरु का नहिं उपदेश।
स्वयंबुद्ध स्व-शक्ति हो, राजो शुद्ध हमेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षाय नमः अर्घ्यं० ॥९८२॥

तुम त्रिभुवन के पूज्य हो, यजो न काहू और।
निजहित में रत हो सदा, पर-निमित्त को छोर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनपूज्याय नमः अर्घ्यं० ॥९८३॥

अरहन्तादि उपासना, मोह उदयसों होय।
स्वयं ज्ञानमें लय भए, मोह कर्म को खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षकाय नमः अर्घ्यं० ॥९८४॥

गौण रूप परिणाम है, मुख ध्रुवता गुण धार।
अक्षय अविनश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयाय नमः अर्घ्यं० ॥९८५॥

सूक्षम शुद्ध स्वभाव है, लहै न गणधर पार।
इन्द्र तथा अहमिन्द्र सब, अभिलाषित उरधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अगमकाय नमः अर्घ्यं० ॥९८६॥

अचल शिवालय के विषैं, टंकोत्कीर्ण समान।
सदा विराजो सुखसहित, जगत भ्रमणको हान॥
ॐ ह्रीं अर्हं अगम्याय नमः अर्घ्यं० ॥९८७॥

रमण योग छद्मस्थ के, नहिं अलिंग सरूप।
पर प्रवेश बिन शुद्धता, धारत सहज अनूप॥
ॐ ह्रीं अर्हं अरम्याय नमः अर्घ्यं० ॥९८८॥

पर-पदार्थ इच्छुक नहीं, इष्टानिष्ट निवार।
सुथिर रहो निज आतम में, बन्दत हूं हितधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं निजात्मसुस्थिराय नमः अर्घ्यं० ॥९८९॥

जाको पार न पाइयो, अवधि रहित अत्यन्त।
सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखे 'सन्त'॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञाननिर्भराय नमः अर्घ्यं० ॥९९०॥

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावैं निजपद सार।
महा शुद्ध उपयोग मय, वरतत हैं सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं महायोगीश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥९९१॥

भाव शुद्ध सो देह में, द्रव्य शुद्ध बिन देह।
कर्म वर्गणा बिन लिये, पूजत हूं धरि नेह॥
ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्यशुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥९९२॥

पंच प्रकार शरीर को, मूल कियो विध्वंश।
स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नहीं अंश॥
ॐ ह्रीं अर्हं अदेहाय नमः अर्घ्यं० ॥९९३।

जाको फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार।
सो पंचमगति शिवमई, पायो तुम निरधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अपुनर्भवाय नमः अर्घ्यं० ॥९९४॥

सकल इन्द्रियाँ व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय।
सब द्रव्यनि को ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानैकविदे नमः अर्घ्यं० ॥९९५॥

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान।
अन्य विभाव विभव नहीं, महा शुद्ध अविकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं जीवधनाय नमः अर्घ्यं० ॥९९६॥

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध।
महा शुद्ध निज आतमय, सदा रहे निरबाध॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥९९७॥

लोकशिखर पर थिर भए, ज्यों मन्दिर मणि कुम्भ।
निजशरीर अवगाह में, अचल सुथान अलुम्भ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घ्यं० ॥९९८॥

सहज निरामय भेद बिन, निराबाध निस्संग।
एक रूप सामान्य हो, निज विशेष मई अंग॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं० ॥९९९॥

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुण के सु अनन्त।
तुम में पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥१०००॥

पर मिलाप नहीं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप।
क्षयोपशम ज्ञानी तुम्हें, जानत नहीं स्वरूप॥
ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरूपाय नमः अर्घ्यं० ॥१००१॥

क्षमा आतमको भाव है, क्रोध कर्मसों घात।
सो तुम कर्म खिपाइयो, क्षमा सुभाव धरात॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं० ॥१००२॥

शील सुभाव सु आतमको, क्षोभ रहित सुखदाय।
निर आकुलता धार है, बन्दूं तिनके पांय॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाशीलाय नमः अर्घ्यं० ॥१००३॥

शशि स्वभाव ज्यों शांतिधर, और न शांति धराय।
आप शांति पर-शांतिकर, भवदुख दाह मिटाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाशांताय नमः अर्घ्यं० ॥१००४॥

तुम सम को बलवान है, जीत्यो मोह प्रचण्ड।
धरो अनन्त स्व-वीर्यको, निजपद सुथिर अखण्ड ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यात्मकाय नमः अर्घ्यं० ॥१००५॥

लोकालोक विलोकियो, संशय बिन इकबार।
खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकज्ञाय नमः अर्घ्यं० ॥१००६॥

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रस भोग।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं० ॥१००७॥

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावैं निजपद सार।
ज्यों रविबिम्ब प्रकाशकर, घट-पट सहज निहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ध्येयगुणाय नमः अर्घ्यं० ॥१००८॥

कवलाहारी कहत है, महा मूढ़ मति मन्द।
अशन असाता पीर बिन, आप भये सुखकन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अशनदग्धाय नमः अर्घ्यं० ॥१००९॥

लोक शीश छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप।
बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमणये नमः अर्घ्यं० ॥१०१०॥

महा गुणन की रास हो, लोकालोक अनन्त ॥
सुर मुनि पार न पावते, तुम्हें नमैं नित 'सन्त' ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणप्राप्ताय नमः अर्घ्यं० ॥१०११॥

परम सुगुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहीं लेश।
जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१०१२॥

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार।
सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण वन्दनहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाऋषये नमः अर्घ्यं० ॥१०१३॥

भूत भविष्यत् कालको, कभी न होवे अन्त।
नितप्रति शिवपद पाय-कर, होत अनन्तानन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥१०१४॥

निर्भय निर-आकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निरखेद।
काहू विधि घबाहट नहीं, निज आनन्द अभेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं ॥१०१५॥

जो गुण-गुणी सुभेद करि, सो जड़ मती अजान।
निज गुण-गुणी सु एकता स्वयंबुद्ध भगवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं० ॥१०१६॥

निरावरण निज ज्ञान में, सर्व स्पष्ट दिखाय।
संशयविन नहिं भरम है, सुथिर रहो सुखपाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण ज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥१०१७॥

राग द्वेष के अन्त में, मत्सर भाव कहात।
सो तुम नासो मूल ही, रहै कहाँ सो पात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं० ॥१०१८॥

अणुवत् लोकालोक है, जाके ज्ञान मंझार।
सो तुम ज्ञान अथाह हैं, बन्दूं मैं चित धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ॥१०१९॥

हस्तरेख सम देख हो, लोकालोक सरूप।
सो अनन्त दर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम कूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनतानन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ॥१०२०॥

तीन लोक का पूज्यपन, प्रकट कहैं दिखलाय।
तीन लोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरवासिने नमः अर्घ्यं० ॥१०२१॥

निजपद में लवलीन हैं, निज रस स्वाद अघाय।
परसों इह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहीं पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१०२२॥

कर्म प्रकृति को मूल नहीं, द्रव्य रूप यह भाव।
महा स्वच्छ निर्मल विषै, ज्यों रवि मेघ अभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घ्यं० ॥१०२३॥

हीन अभाव न शक्ति है, कर्मबन्ध को नाश।
उदय भये तुम गुणसकल, महा विभव को राश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥१०२४॥

पाप रूप दुख नाशियो, मोक्ष रूप सुख रास।
दासन प्रति मंगलकरण, स्वयं 'सन्त' है दास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महामंगलात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥१०२५॥

दोहा

कहैं कहाँलों तम सुगुण, अंशमात्र नहीं अन्त।
मंगलीक तुम नाम ही, जानि भजै नित 'संत' ॥
ॐ ह्रीं पूर्णस्वगुणजिनाय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाल

दोहा

होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहीं होय।
काष्ठ पांवसैं अनिल थल, नाप सकै नहीं कोय ॥१॥
सूक्षम शुद्ध-स्वरूप का, कहना है व्यवहार।
सो व्यवहारातीत हैं, यातें हम लाचार ॥२॥
पै जो हम कछु कहत हैं, शान्ति हेत भगवन्त।
बार बार थुति करन में, नहिं पुनरुक्त भनन्त ॥३॥

पद्धड़ी

जय स्वयं शक्ति आधार योग, जय स्वयं स्वस्थ आनन्द भोग।
जय स्वयं विकास आभास भास,जयस्वयंसिद्ध निजपद निवास ॥४
जय स्वयंबुद्ध संकल्प टार, जय स्वयं शुद्ध रागादि जार।
जय स्वयं स्वगुण आचार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार ॥५
जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान।
जय स्वयं स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग ॥६
जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु वज्र चूर।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान ॥७
जय सन्तनि मन आनन्दकार, जय सज्जन चित वल्लभ अपार।
जय सुरगण गावत हर्ष पाय,जय कवि यशकथन न करि अघाय॥८
तुम महातीर्थ भवि तरण हेत, तुम महाधर्म उद्धार देत।
तुम महामंत्र विष विघ्न जार, अघ रोग रसायन कहो सार ॥९
तुम महाशास्त्र का मूल ज्ञेय, तुम महा तत्व हो उपादेय।
तिहुं लोक महामंगल सु रूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप ॥१०
तिहुं लोक शरण अघ-हर महान, भवि देत परमपद सुख निधान।
संसार महासागर अथाह, नित जन्म मरण धारा प्रवाह ॥११॥
सो काल अनन्त दियो बिताय, तामें झकोर दुख रूप खाय।
मो दुखी देख उर दया आन, इम पार करो कर ग्रहण पान ॥१२
तुम ही हो इस पुरुषार्थ जोग, अरु है अशक्त करि विषय रोग।
सुर नर पशु दास कहे अनन्त, इनमें से भी इक जान 'सन्त' ॥१३

घत्ता—कवित्त।

जय विघन जलधि जलहनन पवनबल सकल पाप मल जारन हो।
जय मोह उपल हन वज्र असल दुख अनिल ताप जल कारन हो ॥

ज्यूं पंगु चढ़े गिर, गूंग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरे ।
त्यों तुम थुति काम महा लज ठाम, सु अंत 'संत' परणाम करे ॥

ॐ ह्रीं अर्ह चतुर्विंशत्यधिकसहस्रगुणयुक्त सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा ।

इति पूर्णार्घ्यम् ।

दोहा

तीन लोक चूड़ामणि, सदा रहो जयवन्त ।
विघ्नहरण मंगलकरन, तुम्हें नमें नित 'सन्त' ॥१॥

इत्याशीर्वादः ।

यहां पर १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः' मन्त्र का जाप करें ।

अडिल्ल

पूरण मंगलरूप महा यह पाठ है;
सरस सुरुचि सुखकार भक्ति को ठाठ है ।
शब्द-अर्थ में चूक होय तो हो कहीं;
थुतिवाचक सब शब्द-अर्थ यामें सही ।१।
जिनगुणकरण आरम्भ हास्य को धाम है;
वायस का नहिं सिंधु उतीरण काम है ।
पै भक्तनि की रीति सनातन है यही;
क्षमा करो भगवन्त शान्ति पूरणमही ।२।

परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

इति श्री सिद्धचक्रपाठ भाषा—कवि श्री सन्तलालजी कृत समाप्त ।

इसके पश्चात् चौबीस तीर्थंकर पूजा, सरस्वती व गुरु पूजा, व फिर हवन करना चाहिए ।

□ □

हवन विधि

हवन के लिए किसी काफी लंबे चौड़े स्थान में तीन कुण्ड बनावे वे कुण्ड इस प्रकार हों–प्रथम तीर्थंकरकुण्ड एक अरत्नि (मुष्टि बंधे हाथ को अरत्नि कहते हैं) लंबा इतना ही चौड़ा चौकोर हो और इतना ही गहरा हो इसकी तीन कटनो हों पहली ५ अंगुल की ऊंची, चौड़ी, दूसरी ४ अंगुल की, तीसरी ३ अंगुल की हो। इस कुण्ड के दक्षिण की ओर त्रिकोण कुण्ड उसी प्रमाण से लंबा चौड़ा गहरा हो तथा उत्तर की ओर गोल कुण्ड उतनी ही लम्बाई चौड़ाई गहराई वाला हो प्रत्येक कुण्ड का एक दूसरे से अन्तर चार चार अंगुल का होना चाहिए। इन कुण्डों के चारों ओर कटनियों पर ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं लिखना चाहिए।

ये कुण्ड कच्ची ईंटो से एकदिन पहले तैयार करा लेने चाहिए और इन्हें अच्छे सुन्दर रंगों से रङ्ग देना चाहिए भीतर का भाग पीली या सफेद मिट्टी से पोत देना चाहिए। कुंडों की तीनों कटनियों पर चार २ पतली खूंटी गाढ़े या छोटे छोटे गिलास रक्खे जिनमें कलावा लपेटा जा सके; कलावा लपेटते समय यह मन्त्र बोलना चाहिए।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचवर्णसूत्रेण त्रीन् वारान् वेष्टयामि।

इस प्रकार एक खूंटी से दूसरी खूंटी और दूसरी से तीसरी चौथी खूंटी तक कलावा लपेटे।

कुण्डों के पास दक्षिण या पश्चिम में एक वेदी लगावे जैसे पाठ के मांडले के पास लगाई थी उसमें सिद्धयंत्र विराजमान करे। वेदी के पास एक चौकी रक्खे जिस पर मङ्गल कलश

पाठ के पश्चात् हवन करते हुए।

पाठ के पश्चात् हवन करते हुए।

रक्खा जाय। तथा एक बड़ी संदली पर एक बड़ा और कुछ छोटे कलश (गिलास) जल से भरे रखकर मंत्र द्वारा जल शुद्ध करे।

हवन सामग्री

बादाम, पिश्ता, छुवारा, नारियल का खोपरा, दाख, लौंग, कपूर, सफेद चंदन, लाल चंदन तथा चिरौंजी, सुगन्ध वाला, देवदारु, अगर, तगर, बालछड़, पानड़ी, कपूरकचरी, नागरमोथा, छार छबीला, इत्यादि सुगन्धित द्रव्यों का चूर्ण तथा धान, तिल, मूंग, उड़द, गेहूं, जौ, चना इन्हें भी खरल में कूटकर घी तथा बूरा मिला कर ठीक कर लेना चाहिए तथा आहुति के लिए अलग वर्तन में घी व लकड़ी का चम्मच चाहिए।

"मंत्र जितने जपे हों उनके दशांश आहुतियां उसी मंत्र की होती हैं उनके सिवाय पीठिका आदि मंत्रों की आहुतियां होती हैं।" इन सब आहुतियों के अनुसार हवन सामग्री तैयार करनी चाहिए। तथा आक, ढाक, आम, पीपल, बड़, सफेद चन्दन तथा लाल चंदन की सूखी छोटी पतली लकड़ियां भी रखनी चाहिए।

जल शुद्धि मंत्र

हाथ में चंदन लेकर कलशों पर छिड़के।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमो ऽर्हते भगवते पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरिपुण्डरीकमहापुण्डरीकगंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदापयोधिशुद्धजलसुवर्णघटप्रक्षालितनवरत्नगंधाक्षतपुष्पार्चितमामो-

वक्रं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झ्रौं झ्रौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा ।

इस मंत्र से जल शुद्धि करे ।

वेदी के पास जो चौकी है उस पर अक्षत बिछाकर बड़ा मङ्गल कलश स्थापन करे तब यह श्लोक और मंत्र पढ़े ।

वेद्या मूले पंचरत्नोपशोभं, कंठे लंबान् माल्यमादर्शयुक्तं ।
माणिक्याभं कांचनं पूगदर्भस्रक्वासोभं सद्घटं स्थापयेद् वै ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मङ्गलकलशस्थापनं करोमि स्वाहा ।

अब चार छोटे कलश कुण्डों पर स्थापन करे तब यह मंत्र पढ़े ।

ॐ ह्रीं स्वस्तये चतुःकलशान् संस्थापयामि स्वाहा ।

फिर कुण्डों पर चार चार दीपक जलाकर धरे तब यह मंत्र पढ़े ।

ॐ ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं संस्थापयामि ।

फिर पूजा की सामग्री तथा हवन सामग्री शुद्ध करे तब यह मंत्र पढ़े ।

ॐ ह्रीं पवित्रतरजलेन शुद्धि करोमि स्वाहा ।

फिर डाभ के फूल से हवन की भूमि को झाड़े तब यह मंत्र पढ़े ।

ॐ ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्नविनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा ।

फिर डाभ का पूला जल में भिगोकर पृथ्वी पर छिड़के तब यह मन्त्र पढ़े ।

ॐ ह्रीं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं तं पं स्वं झं झं यं क्षः फट् स्वाहा ।

फिर यन्त्र का प्रक्षाल करे तब यह मंत्र पढ़े ।

ॐ भूर्भुवः स्वरिह एतद्विघ्नौघवारकं यन्त्रमहं परिषिञ्चयामि ।

फिर यन्त्र की पूजा करे । इसके बाद अग्निकुण्ड में सांथिये बनावे या ॐ लिखे । पीछे कुण्ड में कपूर और डाभ के पूले से अग्नि स्थापित करे तब यह मंत्र पढ़े ।

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं अग्निं संस्थापयामि स्वाहा ।

फिर कुण्डों में एक एक अर्घ दे । प्रथम चतुष्कोण की पूजा ।

श्रीतीर्थनाथपरिनिर्वृ तिपूज्यकाले,
आगत्य वह्निसुरपा मुकुटोल्लसद्भिः ।
वह्निव्रजैर्जिनपदेऽहमुदारभक्त्या,
देहुस्तदग्निमहमर्चयितुं दधामि ॥

ॐ ह्रीं प्रथमेचतुरेस्रतीर्थंकरण्डे गार्हपत्याग्नयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तदनन्तर—

गणाधिपानां शिवयातिकालेऽग्नीन्द्रोत्तमाङ्गस्फुरदग्निरेषः ।
संस्थाप्य पूज्यश्च समयाह्वनीयो, विघ्नौघशान्त्यै विधिना हुताशः॥१

ॐ ह्रीं श्रीं वृत्ते द्वितीयगणधरकुण्डे आह्वनीयाग्नयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा, यह पढ़कर अर्घ चढ़ावे ।

श्रीदक्षिणाग्निः परकेवलिस्व–, शरीरनिर्वाणनुताग्निदेव– ।
किरीटसंस्फुर्यदसौ मयापि, संस्थाप्य पूज्यो हि विधानशान्त्यै ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं त्रिकोणे तृतीयसामान्यकेवलिकुण्डे दक्षिणाग्नयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा, यह पढ़कर अर्घ चढ़ावें ।

तदनन्तर–निम्नलिखित मंत्रों को पढ़ते हुए पुष्पों का क्षेपण करें ।

ओं ह्रीं अर्हद्भ्यः स्वाहा । ओं ह्रीं सिद्धेभ्यः नमः । ओं ह्रीं सूरिभ्यः स्वाहा । ओं ह्रीं पाठकेभ्यः स्वाहा । ओं ह्रीं साधुभ्यः

स्वाहा। ओं ह्रीं जिनधर्मेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनागमेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनबिम्बेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं सम्यक्चारित्राय स्वाहा।

(साकल्यसे आहुतियां देवें। मंत्र के बाद स्वाहा शब्द का उच्चारण स्पष्ट करें।

पीठिकामंत्राः

ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा। ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा। ॐ परमजाताय नमः स्वाहा। ओं अनुपमजाताय नमः स्वाहा। ओं स्वप्रधानाय नमः स्वाहा। ओं अचलाय नमः स्वाहा। ओं अक्षयाय नमः स्वाहा। ओं अव्याबाधाय नमः स्वाहा। ओं अनन्तज्ञानाय नमः स्वाहा। ओं अनन्तदर्शनाय नमः स्वाहा। ओं अनन्तवीर्याय नमः स्वाहा। ओं अनन्तसुखाय नमः स्वाहा। ओं नीरजसे नमः स्वाहा। ओं निर्मलाय नमः स्वाहा। ओं अच्छेद्याय नमः स्वाहा। ओं अभेद्याय नमः स्वाहा। ओं अजराय नमः स्वाहा। ओं अमराय नमः स्वाहा। ओं अप्रमेयाय नमः स्वाहा। ओं अगर्भवासाय नमः स्वाहा। ओं अक्षोभाय नमः स्वाहा। ओं अविलीनाय नमः स्वाहा। ओं परमधनाय नमः स्वाहा। ओं परमकाष्ठायोगरूपाय नमः स्वाहा। ओं लोकाग्रनिवासिने नमो नमः स्वाहा। ओं परमसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं केवलिसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं अन्तःकृतसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं परम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं अनादिपरम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्यनिर्वाणपूजार्हअग्नीन्द्राय स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

जातिमंत्राः

ओं सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ओं अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ओं अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ओं अर्हत्-सुतस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ओं अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ओं अनुपमजन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ओं रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा । ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञान-मूर्ते सरस्वति सरस्वति स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समा-धिमरणं भवतु स्वाहा ।

निस्तारकमंत्राः

ओं सत्यजाताय स्वाहा । ओं अर्हज्जाताय स्वाहा । ओं षट्-कर्मणे स्वाहा । ओं ग्रामपतये स्वाहा । ओं अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा । ओं स्नातकाय स्वाहा । ओं श्रावकाय स्वाहा । ओं देव-ब्राह्मणाय स्वाहा । ओं सुब्राह्मणाय स्वाहा । ओं अनुपमाय स्वाहा । ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे निधिपते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समा-धिमरणं भवतु स्वाहा ।

ऋषिमन्त्राः

ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा । ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा । ओं निर्ग्रन्थाय नमः स्वाहा । ओं वीतरागाय नमः स्वाहा । ओं महाव्रताय नमः स्वाहा । ओं त्रिगुप्ताय नमः

स्वाहा । ओं महायोगाय नमः स्वाहा । ओं विविधयोगाय नमः स्वाहा । ओं विवर्द्धये नमः स्वाहा । ओं अङ्गधराय नमः स्वाहा । ओं पूर्वधराय नमः स्वाहा । ओं गणधराय नमः स्वाहा । ओं परमर्षिभ्यो नमो नमः स्वाहा । ओं अनुपमजाताय नमो नमः स्वाहा । ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे भूपते नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

सुरेन्द्रमन्त्राः

ओं सत्यजाताय स्वाहा । ओं अर्हज्जाताय स्वाहा । ओं दिव्यजाताय स्वाहा । ओं दिव्यार्चिजाताय स्वाहा । ओं नेमिनाथाय स्वाहा । ओं सौधर्माय स्वाहा । ओं कल्पाधिपतये स्वाहा । ओं अनुचराय स्वाहा । ओं परम्परेन्द्राय स्वाहा । ओं अर्हमिन्द्राय स्वाहा । ओं परमार्हताय स्वाहा । ओं अनुपमाय स्वाहा । ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे कल्पते कल्पते दिव्यमूर्ते दिव्यमूर्ते वज्रनामान् वज्रनामान् स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु वाहा ।

परमराजादिमन्त्राः

ओं सत्यजाताय स्वाहा । ओं अर्हज्जाताय स्वाहा । ओं अनुपमेन्द्राय स्वाहा । ओं विजयार्च्यजाताय स्वाहा । ओं नेमिनाथाय स्वाहा । ओं परमजाताय स्वाहा । ओं परमार्हताय स्वाहा । ओं अनुपमाय स्वाहा । ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे उग्रतेजः उग्रतेजः दिशाञ्जन दिशाञ्जन नेमिविजय नेमिविजय स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

परमेष्ठिमन्त्राः

ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा। ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा। ओं परमजाताय नमः स्वाहा। ओं परमार्हताय नमः स्वाहा। ओं परमरूपाय नमः स्वाहा ओं परमतेजसे नमः स्वाहा। ओं परमगुणाय नमः स्वाहा। ओं परम स्थानाय नमः स्वाहा। ओं परमयोगिने नमः स्वाहा। ओं परमभाग्याय नमः स्वाहा। ओं परमर्द्धये नमः स्वाहा। ओं परमप्रसादाय नमः स्वाहा। ओं परमकांक्षिताय नमः स्वाहा। ओं परम विजयाय नमः स्वाहा। ओं परमविज्ञानाय नमः स्वाहा। ओं परमदर्शनाय नमः स्वाहा। ओं परमवीर्याय नमः स्वाहा। ओं परमसुखाय नमः स्वाहा। ओं परमसर्वज्ञाय नमः स्वाहा। ओं अर्हते नमः स्वाहा। ओं परमेष्ठिने नमः स्वाहा। ओं परमनेत्रे नमोनमः स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे त्रैलोक्यविजय त्रैलोक्यविजय धर्ममूर्ते धर्ममूर्ते धर्मनेमे धर्मनेमे स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

तदनन्तर "जिस मंत्र का जितना जप किया हो, उसकी दशांश पुष्पों द्वारा आहुतियां देना चाहिए।" यह मंत्र प्रतिष्ठाचार्य मन में बोलकर स्वाहा शब्द का उच्चारण करें और तदनन्तर इन्द्रादि बनने वाले सब महाशय स्वाहा बोलकर पुष्प अर्पण करें।

समापन विधि समाप्त होने पर जो घट स्थापित किया था

उसे हाथ में लेकर आचार्य बृहच्छान्तिधारा दें। उसके बाद जल-धारा देते हुए निम्नलिखित पुण्याहवाचन करें।

पुण्याहवाचन

ओं पुण्याहं पुण्याहं लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजाता निर्वाणसागरमहासाधुविमलप्रभशुद्धाभश्रीधरसुदत्तामलप्रभोद्धराग्निसन्मतिशिवकुसुमांजलिशिवगणोत्साहज्ञानेश्वरपरमेश्वरविमलेश्वरयशोधरकृष्णमतिज्ञानमतिशुद्धमतिश्रीभद्रकांताश्चेति चतुर्विंशतिभूतपरमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥१॥

ओं सम्प्रतिकालश्रेय कर वर्गावतरणजन्माभिषेकपरिनिष्क्रमणकेवलज्ञाननिर्वाणकल्याणविभूषितमहाभ्युदयाः श्रीवृषभाजितशंभवाभिननंदनसुमतिपद्मप्रभसुपार्श्वचंद्रप्रभपुष्पदंतशीतलश्रेयोवासुपूज्यविमलानंतधर्मशांतिकुंथ्वरमल्लिमुनिसुव्रतनमिनेमिपार्श्ववर्द्धमानाश्चेति वर्तमानचतुर्विंशतिपरमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥२॥

ओं भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवाः महापद्मसुरदेवसुप्रभस्वयंप्रभसर्वायुधजयदेवोदयदेवप्रभादेवोदङ्कदेवप्रश्नकीर्तिजयकीर्तिपूर्णबुद्धनिःकषायविपलप्रभवहल निर्मलचित्रगुप्तसमाधिगुप्तस्वयंभूकंदर्पजयनाथविमलनाथदिव्यवागनंतवीर्याश्चेतिचतुर्विंशतिभविष्यत्परमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥३॥

ओं त्रिकालवर्तिपरमधर्माभ्युदयाः सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातकस्वयंप्रभऋषभेश्वरानंतवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचंद्राननचंद्रबाहुभुजंगेश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रजयदेवाजितवीर्याश्चेति पंचविदेहक्षेत्रविहरमाणा विंशतिपरमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥४॥

ओं वृषभसेनादिगणधरदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥५॥

ओं कोष्ठबीजपादानुसारिबुद्धिसंभिन्नश्रोतृप्रज्ञाश्रवणाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥६॥

ओं आमर्षक्ष्वेडजल्लविड्उत्सर्गसर्वौषधिऋद्धयश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥७॥

ओं जलफलजंघातन्तुपुष्पश्रेणिपत्राग्निशिखाकाशचारणाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥८॥

ओं आहाररसवदक्षीणमहानसालयाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥९॥

ओं उग्रदीप्ततप्तमहाघोरानुपमतपसश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥१०॥

ओं मनोवाक्कायबलिनश्च वः प्रीयंतां प्रीयन्ताम् ॥धारा॥११

ओं क्रियाविक्रियाधारिणश्च वः प्रीयंतां प्रीयंताम् ॥
धारा ॥१२॥

ओं मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥१३॥

ओं अंगांगबाह्यज्ञानदिवाकराः कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगंबरदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥१४॥

इह वाऽन्यनगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ताः जिनधर्मपरायणाभवंतु ॥ धारा ॥१५॥

दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु ॥ धारा ॥१६॥

मातृपितृभ्रातृपुत्रपौत्रकलत्रसुहृत्स्वजनसंबन्धिसहितेभ्य अमु-

केभ्य'''ते धनधान्यैश्वर्यबलद्युतियशाप्रमोदोत्सवाः''''''प्रवर्द्धंताम् ॥ धारा ॥१७॥

तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, वृद्धिरस्तु, कल्याणमस्तु, अविघ्नमस्तु, आयुष्यमस्तु, आरोग्यमस्तु, कर्मसिद्धिरस्तु, इष्टसम्पत्तिरस्तु, काममाङ्गल्योत्सवाः सन्तु, पापानि शाम्यन्तु, घोराणि शाम्यन्तु, पुण्यं वर्धताम्, धर्मो वर्धताम्, श्रीर्वर्धताम्, कुलं गोत्रं चाभिवर्धताम्, स्वस्ति भद्रं च भवतु, क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा। श्रीं मज्जिनेन्द्रचरणारविन्देष्वानन्दभक्तिः सदास्तु।

तदनन्तर शान्ति पाठ और विसर्जन पाठ पढ़ें।

शांति पाठ

शांतिपाठ बोलते समय पुष्प क्षेपण करते रहना चाहिए।

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी, शील गुणव्रत संयमधारी।
लखन एकसौआठ बिराजें, निरखत नयन कमलदल लाजें ॥१॥
पंचम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शांति जिनशांति विधायक ॥२॥

दिव्य विटप पहुपन की बरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥३॥
शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगत पूज्य पूजौ शिरनाई।
परम शांति दीजे हम सबको, पढ़ें तिन्हें पुनि चार संघको ॥४॥

वसंततिलका—पूजें जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके।
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।
सो शांतिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप।
मेरे लिए करहि शांति सदा अनूप ॥५॥

इन्द्रध्वजा

संपूजकों को प्रतिपालकों को यतीनकों को यतिनायकों को।
राजा-प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ॥

स्रग्धरा छन्द

होवे सारी प्रजाको सुखबल युत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समै पै तिलभर न रहे व्याधियों का अंदेशा ॥
होवे चोरी न जारी सुसमय वरते हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी ॥७॥

दोहा—घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शांति करो सब जगत में वृषभादिक जिनराज ॥

अथेष्ट प्रार्थना (मन्दाक्रान्ता)

शास्त्रों का हो पठन सुखदा लाभ सत्संगती का।
सद्वृतों का सुजस कहके, दोष ढांकू सभी का ॥
बोलूं प्यारे बचन हित के आपका रूप ध्याऊं।
तोलौं सेऊं चरण जिनके मोक्ष जौलों न पाऊं

आर्य्या

तब पद मेरे हियमें, मम हिय तेरे पुनित चरणों में।
तबलौं लीन रहो प्रभु जबलौ पाया न मुक्ति पद मैंने ।१०।
अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुडाहु भव दुखसे।
हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊं तब चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी ।१२।

परिपुष्पांजलि क्षेपण

(यहां पर नौ बार णमोकार मंत्र जपना चाहिए)

विसर्जन

बिन जाने वा जानके रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तें परमगुरु, सो सब पूरण होय ॥१॥
पूजनविधि जानों नहीं, नहीं जानों आह्वान।
और विर्सजन हू नहीं क्षमा करहुं भगवान ॥२॥
मन्त्रहीन धनहीन हूं क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहूं चरणकी सेव ॥३॥
आये जो-जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमाण।
ते सब मेरे मन बसो, चौवीसो भगवान ॥४॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

आशिका लेना-श्री जिनवर की आशिका, लीजै शीश चढ़ाय
भव-भव के पातक कटें, दुख दूर हो जाय ॥१॥

भाषा स्तुति पाठ

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन आनंदनो।
श्रीनाभिनंदन जगतवंदन, आदिनाथ निरंजनो ॥१
तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पद पूजा करूं।
कैलाश गिरिपर रिषभजिनवर, पदकमल हिरदे धरूं ॥२
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली।
इह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीजै नाथजी ।३
तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो।
महासेननंदन जगतवन्दन चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥४
तुम शांति पांचकल्याण पूजूं, शुद्धमनवचकाय जू।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पालाय जू ॥५

तुम बालब्रह्म बिवेकसागर, भव्यकमल विकाशनो।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥६
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसैन्या वश करी।
चारित्ररथ चढ़ि भये दूलह, जाय शिव रमणी वरी ॥७
कन्दर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो।
अश्वसेननन्दन जगतबंदन, सकलसंघ मंगल कियो ॥८
जिन धरी बालकपणे दीक्षा, कमठ मानविदारके।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र के पद, मैं नमों सिरधार के ॥९
तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जानि दया करो।
सिद्धार्थनंदन जगत वंदन, महावीर जिनेश्वरो ॥१०
छत्र तीन सोहैं सुरनर मोहैं, वीनती अवधारिये।
कर जोड़ि सेवक वीनवै, प्रभु आवागमन निवारिये ॥११
तुम होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहों।
करजोड़ यो वरदान मांगूं, मोक्षफल जावत लहों ॥१२
जो एक माहीं एक राजत, एकमाहिं अनेकनों।।
इक अनेक की नाहिं संख्या, नमूं सिद्ध निरंजनो ॥१३

चौ०-मैं तुम चरणकमल गुणगाय, बहुबिधिभक्ति करी मनलाय।
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥१४
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय।
बार बार मैं विनती करूं, तुम सेयें भवसागर तरूं ॥१५
नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुव दर्शन देख्या प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूं चरण तव सेव ॥१६
मैं आयो पूजन के काज, मेरो जन्म सफल भयो आज।
पूजा करके नवाऊं शीश, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥१७

दोहा

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीब की बीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१८

पूजन करते देव की, आदि मध्य अवसान।
सुरगन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥१६

जैसी महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय।
जो सूरज मैं जोति है, तारन में नहिं सोय ॥२०

नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमांहि पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अंधकार विनसाय। २१

बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानूं नहीं, सरन राखि भगवान ॥२२

॥ श्री सिद्धचक्र की आरती ॥

जय सिद्धचक्र देवा जय सिद्धचक्र देवा,
करत तुम्हारी निश दिन मन से सुर नर मुनि सेवा ॥
॥जय सिद्धचक्र देवा० ॥

ज्ञानावर्ण दर्शनावरणी मोह अंतराया,
नाम गोत्र वेदनी आयु को नाशि मोक्ष पाया ॥
॥जय सिद्धचक्र०॥१॥

ज्ञान अनंत अनंत दर्श सुख बल अनंतधारी,
अव्याबाध अमूर्ति अगुरुलघु अवगाहन धारी ॥जय सिद्ध०॥२

तुम अशरीर शुद्ध चिन्मूरति स्वातम रसभोगी,
तुम्हें जपें आचार्योपाध्याय सर्व साधु योगी ॥जय सिद्ध०॥३॥

ब्रह्मा विष्णु महेश सुरेश गणेश तुम्हें ध्यावें,
भवि अलि तुम चरणाम्बुज सेवत निर्भयपद पावें ॥जय०॥४

संकट टारन अधम उधारन सागर तरणा,
　　अष्ट दुष्ट रिपु कर्म नष्ट करि जन्म मरण हरणा ॥जय०॥५
दीन दुखी असमर्थ दरिद्री निर्धन तन रोगी,
　　सिद्धचक्र को ध्यान भये ते सुर नर सुख भोगी ॥जय०॥६॥
डाकिनि शाकिनि भूत पिशाचिनि व्यंतर उपसर्गा,
　　नाम लेत भवि जांय छिनकमें सब देवी दुर्गा ॥जयसिद्ध०॥७॥
बन रन शत्रु अग्निजल पर्वत विषधर पंचानन,
　　मिटें सकल भय कष्ट करें जे सिद्धचक्र सुमिरन ॥जय० ॥८॥
मैना सुन्दरि कियो पाठ यह पर्व अठाइनिमें,
　　पति युत सात शतक कोढ़िन का गया कुष्ठ छिनमें ॥जय०॥९
कातिक फागुन साढ़ आठ दिन सिद्धचक्र पूजा,
　　करें शुद्ध भावोंसे मक्खन लहैं न भव दूजा ॥जयसिद्ध०॥१०

॥ इति ॥

॥ भजन ॥

श्री सिद्धचक्र का पाठ करो दिन आठ, ठाठ से प्रानी,
　　फल पायो मैना रानी ॥टेक॥

मैना सुन्दरि इक नारी थी, कोढ़ी पति लखि दुखियारी थी,
　　नहिं पड़े चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी ॥ फल पायो० ॥

जो पति का कष्ट मिटाऊंगी, तो उभय लोक सुख पाऊंगी,
　　नहिं अजागलस्तनवत निष्फल जिंदगानी ॥ फल पायो० ॥

इक दिवस गई जिन मन्दिर में, दर्शन करि अति हर्षी उर में,
　　फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिगम्बर ज्ञानी ॥ फल पायो० ॥

बैठी मुनिको करि नमस्कार, निज निन्दा करती बार बार,
भरि अश्रु नयन कही मुनि सों दुखद कहानी ।। फल पायो०।।
बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो,
नहिं रहे कुष्ठ की तन में नाम निशानी ।। फल पायो० ।।
सुनि साधु वचन हर्षो मैना, नहिं होंय झूठ मुनि के बैना,
करि के श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी ।। फल पायो० ।।
जब पर्व अठाई आया है, उत्सवयुत पाठ कराया है,
सब के तन छिड़का यंत्र न्हवन का पानी ।। फल पायो० ।।
गंधोदक छिड़कत वसु दिन में, नहिं रहा कुष्ठ किंचित तन में,
भई सात शतक की काया स्वर्ण समानी ।। फल पायो० ।।
भव भोग भोगि योगेश भये, श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये,
दूजे भव मैना पावे शिव रजधानी ।। फल पायो० ।।
जो पाठ करैं मन वच तन से, वे छूटि जांय भव बंधन से,
मक्खन मत करो विकल्प कहा जिनवानी । फल पायो०।।